Search On Telegram :- @Kitabwala_tg

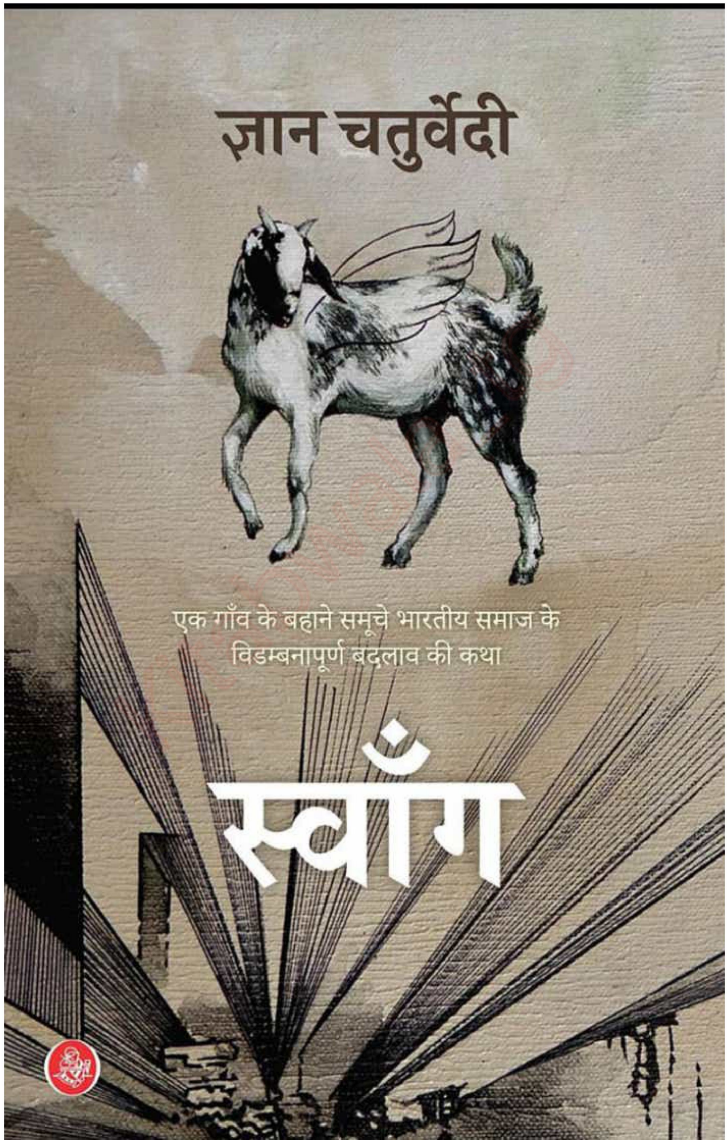

***** भाग 2 - शुरू *****

सरस्वती पूजा का सामान यहाँ मिलता है

पंडिज्जी के कालपी वाले घर की बैठक।

ऐसे कामों के लिए वे यहाँ कालपी आ जाते हैं। इस जगह का इस्तेमाल वे इसी तरह के कामों के लिए करते हैं। कौन-सा काम? वह अभी आपको खुद पता चल जाएगा।

एकदम साधारण-सी बैठक है। बहुत सजावट नहीं है। सब कुछ एकदम सादा, सरल, संतों टाइप। लगता ही नहीं कि यहाँ बैठकर लाखों का लेन-देन भी होता होगा। कैसा लेन-देन?... वह भी आपको अभी पता चल जाएगा। बस, थोड़ा-सा धैर्य और रख लें। पंडिज्जी से ही कुछ सीखिए न। देचैट रूम

बैठक ख़ाली-सी है।

बस एक तख्त। तख्त पर पतला सा गद्दा। सफेद चादर। दो गाव-तकिए। तीन पुरानी कुर्सियाँ। एक टीन की फोल्डिंग कुर्सी। एक पुराना सोफा, तीन सीटों वाला। एक तरफ़ की दीवार पर शिवाजी का केलेंडर। एक पर सुभाषचंद्र बोस की बड़ी-सी तस्वीर। एक तरफ भारतमाता की रंगीन फोटो। मात्र इनके कारण, बिना अन्य किसी वजह के बैठक का वातावरण धार्मिक और राष्ट्रवादी हो गया है। धर्म और राष्ट्र की आड़ में लेन-देन हो तो बेईमानी के लिए नैतिक साहस आ जाता है। ...और तख्त के पीछे की दीवार पर फ्रेम में मढ़ी एम.ए. की डिग्री। पंडिज्जी चाहते हैं कि कोई भ्रम न रहे। उनसे बातचीत करते हुए किसी को शक हो तो वह पीछे लगी उनकी डिग्री देख सकता है।

अभी का दृश्य यूँ है :

अभी पंडिज्जी तख्त पर बिराजे हैं। एक गोल तकिया उनके पीछे है। एक, उनकी गोद में। उनके समक्ष, सोफे पर दो पढ़े-लिखे-से लोग बैठे हुए हैं। कोने में रखी टीन की कुर्सी पर गंगेलेजी बिराजे हैं।

विमर्श का मुद्दा है 'नकल'।

वैसे, कोई भी अभी तक इस शब्द को उच्चार नहीं रहा। 'नकल' शब्द से ही नफरत है पंडिज्जी को। पंडिज्जी का इंटर कॉलेज नकल के लिए ख्यात है- कुख्यात है या विख्यात, यह आप तय करते रहिए। इस मामले में एक किस्म की साख है, कॉलेज की। यहाँ गारंटी से नकल कराने की माकूल सुविधा मिलती है। सब जानते हैं। दूर-दूर तक मशहूर हैं। सोफे पर बैठे हुए ये सज्जन स्वयं इसी बात का प्रमाण हैं। वे सुदूर मेरठ से इसी सिलसिले में यहाँ आए हुए हैं। पंडिज्जी द्वारा कोटरा में चल रहे शिक्षा के यज्ञ का धुआँ मेरठ के आसमान तक पहुँच गया है।

और गंगेलेजी?

उन्हें आप पंडिज्जी का स्थायी ऐजेंट मान लें। ऐसे कई हैं। पंडिज्जी यज्ञ का समुचित प्रसाद एजेंटों को भी पकड़ाते हैं। गंगेलेजी पार्टी को हाँका करके मेरठ से यहाँ लाए हैं। पार्टी में एक तो लड़के का पिता है, दूसरा पिता का ख़ास दोस्त। और वह लड़का? वह साथ नहीं आया है पर यज्ञ उसी के लिए है। उसे ही इंटर पास कराना है। उसी के लिए झाँकी सजाई जा रही है। पिता की तमन्ना तो है कि लड़का फर्स्ट क्लास में इंटर पास कर ले पर वे यह भी जानते हैं कि अकेले उस पर ही यह ज़िम्मेदारी छोड़ना ठीक न होगा। अच्छे से जानते हैं वे उसे। अपने सुपुत्र की रग-रग पहिचानते हैं पिताजी। अगर इसे पीछे के दरवाज़े से सरस्वती के वीआईपी दर्शन न कराए गए तो यह पक्का फेल हो जाएगा। तीन माह से भटक रहे हैं वे। तभी कहीं ये गंगेलेजी टकरा गए। उनसे ही कोटरा की इस यज्ञशाला का पता चला। उनसे ही पंडिज्जी के चमत्कारी मंत्रों का

आख्यान सुना। गंगेलेजी ने बताया कि पंडिज्जी सर्व शिक्षा अभियान के सबसे बड़े प्रतीक हैं। नितांत मूर्ख छात्र से लेकर प्रतिभाशाली बच्चे तक, हर एक की चिन्ता में सूख रहे हैं वे। वे सबके सहायक हैं। माँ सरस्वती की पूजा का दिया भभक- भभककर भी जले, पर जलता रहे, इसके लिए अहर्निश कटिबद्ध हैं। पंडिज्जी के इस जज्बे का इस्तकबाल करते हुए लड़के के पिता ने पंडिज्जी से सीधे मिलने की इच्छा ज़ाहिर की। आज की यह बैठक उसी तारतम्य में है। बैठक का मुख्य एजेंडा लड़के को फर्स्ट क्लास में पास कराना मान लें।

शिक्षा पर अत्यन्त शिक्षाप्रद बातें कुछ यूँ शुरू हुईं :

"भाई साहब, ये लोग बड़ी आशा से आपके पास आए हैं।" गंगेलेजी ने दोनों का परिचय कराते हुए पंडिज्जी से कहा।

दोनों ने एक बार पुनः पंडिज्जी को नमस्कार किया।

पंडिज्जी मुस्कुराए, "आशा तो दोनों तरफ से होती है गंगेजेली। इनको हमसे बड़ी आशाएँ हैं तो हमको भी इनसे बड़ी आशाएँ हो सकती हैं। हमने ठीक कहा न?" कहकर बड़ी गहन नजरों से उन्होंने पार्टी को देखा और हँसने लगे।

गंगेलेजी मुस्कुराकर लड़के के पिता की तरफ देखने लगे।

"हमने कहा था न? अपने पंडिज्जी बड़े ही को-आपरेटिव रूम नेचर के आदमी हैं।" गगेलेजी ने कहा।

"वह तो दिख ही रहा है। बस, इनकी भी आशा का हमें तनिक पता चल जाता तो?" लड़के के पिता ने पंडिज्जी की रहस्यमयी आँखों में झाँकते हुए कोई इशारा पकड़ने का प्रयास करते हुए कहा।

"वह तो आपकी आशा पर निर्भर करेगा।" पंडिज्जी बोले।

"फिर भी?" लड़के का बाप बोला।

"पहले आप तो अपनी आशा बताएँ?"

"इनकी तो वही है जो आपकी शरण में आने वाले हर प्राणी की होती है।" गंगेलेजी बीच में पड़े।

"ऐसा नहीं है। सबकी अलग-अलग आशाएँ हो सकती हैं। आप जानते ही हैं। इनकी क्या और कितनी आशा है?"

"हम आपकी हर आशा पूरी करेंगे सर।" बाप का दोस्त बोला।

"पहले अपनी तो बताएँ आप?"

"बस, हमारे बच्चे पर आपकी कृपा चाहिए।"

"हम तो यहाँ बैठे ही इस काम के लिए हैं।" पंडिज्जी सूत्रों में बात अवश्य कर रहे हैं पर उनका हर सूत्र स्वयं ही अपनी व्याख्या भी है। भ्रम की कोई गुंजाइश नहीं छोड़ रहे वे। एकदम साफ है कि इशारों में क्या कहा जा रहा है?

अन्ततः बेटे के पिता ने सीधे-सीधे ही बात करने का निर्णय लिया।

"सर, गंगेलेजी आपके स्कूल की बड़ी तारीफ़ कर रहे थे।"

"यह तो इनका भी स्कूल मानिए। ये हमारे छोटे अनुज जैसे हैं।"

"ये बता रहे थे कि हम आपके स्कूल से बच्चे को परीक्षा में बिठा दें तो वह शर्तिया पास हो जाएगा।"

पंडिज्जी नासमझ बने बैठे रहे।

सारी बातचीत में अब तक 'नकल' शब्द उच्चारा भी नहीं गया है। पंडिज्जी को इस शब्द से ही नफ़रत है; गंगेलेजी सबको यह बात बाहर ही समझाकर अन्दर घुसे हैं। पंडिज्जी को शिक्षा की पवित्रता पर अगाध विश्वास है। 'नकल' जैसे अपवित्र शब्द से यह यज्ञ भंग होता है।

"वैसे तो इनके दो कैंडीडेट हैं। एक तो इनका सुपुत्र ही है। उसका सब ठीक रहा तो इनके एक रिश्तेदार महाराष्ट्र में रहते हैं। उनका लड़का भी..." गंगेलेजी ने बताने की कोशिश की कि पार्टी सम्भावनापूर्ण है।

"सबका स्वागत है। स्कूल बना ही इनके लिए है।" पंडिज्जी हँसकर बोले।

"इनका बेटा इंटर का फार्म भरना चाहता है।" गंगेलेजी ने इशारा किया।

"जरूर भरे। हक है उसका। फार्म छपता ही इसीलिए है कि कोई उसे भरे। जरूर भरवाइए उससे।" पंडिज्जी बोले।

"हमारी इच्छा है कि वह आपके स्कूल से भरे।" लड़के का बाप बोला।

"बिलकुल भरे।" पंडिज्जी ने अभयदान दिया।

"बच्चा बहुत होश्यार है पर दो माह पहले उसे टायफाइड हो गया था।"

"अरे, अरे! यह बड़ी ही बुरी बीमारी है। ... टायफाइड बिगड़ तो नहीं गया था?"

"बिलकुल सही कहा। बिगड़ा हुआ टायफाइड ही हो गया था उसे। ... पर आपको कैसे पता चला?"

"अक्सर बच्चों का टायफाइड बिगड़ जाता है। फिर वे बिचारे पढ़ाई नहीं कर पाते। फिर उनकी सहायता हमें करनी पड़ती है सो हम इस बिगड़े हुए टायफाइड का पूरा हवाला जानते हैं।" पंडिज्जी ने हँसकर कहा।

"वोई हुआ है। टायफाइड के चक्कर में बेटे का बड़ा टाइम भेस्ट हो गया। परीक्षा की तैयारी नहीं हो पाई।"

"टायफाइड में अक्सर ऐसा हो जाता है।"

"कमजोर भी भौत हो गया है। किताब खोलता है तो उसका सिर चकराने लगता है।"

"इसके लिए तो टायफाइड भी जरूरी नहीं। किताबें देखकर भौत से बच्चों को चक्कर आने लगते हैं। अपने अग्रवाल साहब की बिटिया याद है न? वह बेचारी तो किताब देख के सीधे बेहोश हो जाती थी। क्यों, याद आया न गंगेलेजी?"

गंगेलेजी मुस्कुरा दिये।

"नहीं, नहीं, लड़का सच में बीमार था। मेडिकल सर्टीफिकेट है हमारे पास।" लड़के के बाप ने कहा।

"हमें सर्टीफिकेट से क्या करना है साहब? गंगेलेजी आपको यहाँ लाए हैं तो हम इसे घर का ही मामला मान रहे हैं। बच्चे को परीक्षा में बैठने दीजिए। हम देखेंगे कि उसका क्या कैसे हो सकता है?" पंडिज्जी ने बेपरवाही से कहा।

"आपके स्कूल से बैठेगा तो सब बढ़िया ही होगा।" लड़के के पिता ने कहा।

"हमारे स्कूल में ऐसा कौन-सा जादू है भाई? गंगेलेजी, ऐसा हमारे बारे में आपने क्या

बता दिया है भाई साहब को?" पंडिज्जी हँसकर बोले।

वे लोहे के पूरा गर्म होने तक प्रतीक्षा करने की पुरानी तकनीक के हामी हैं। वे नकल की बात आने ही नहीं दे रहे; ग्राहक जितना ज़्यादा बेचैन होगा, डील उतनी ही बढ़िया रहेगी।

"बच्चा होश्यार है।" गंगेलेजी ने फिर कहा।

"बताया है अभी आपने भी।" पंडिज्जी ने सिर हिलाया।

"जी, वैसे वह इंटेलीजेंट बच्चा है।" बाप ने विनम्र स्वर में कहा।

"तब तो आपको उसके फर्स्ट क्लास आने की आशा भी होगी?" पंडिज्जी ने धीरे से पूछा।

"उसी आशा में तो ये आपके पास आए हैं।" गंगेलेजी ने पार्टी का मंतव्य स्पष्ट किया।

"यहाँ सारा खेल ही आशा का है गंगेलेजी। हमने शुरू में पूछा था न; इनकी आशा क्या है? यहाँ कई लोग केवल पास होने की आशा से भी आते हैं। हमारी आशा भी उनसे वैसी ही होती है। आप समझ रहे हैं न? आपकी आशा बढ़े तो उसी अनुपात में हमारी भी बढ़ती है।" पंडिज्जी बोले।

"उसे फर्स्ट तो लाना ही है भाईसाहब। आप जो कहेंगे, हम करेंगे।" बाप ने कहा।

"देखिए, लाना तो बच्चे को है भाईसाब। हम-आप तो निमित्त मात्र हैं। क्यों गंगेलेजी?" पंडिज्जी पहली बार खुलकर हँसे। बातचीत सही पटरी पर है। आनंदित हुए वे।

"बच्चा तो प्रयास करेगा ही पर आपकी छत्रछाया मिलना भी बड़ा जरूरी है।" बाप का मित्र घिघियाते हुए बोला।

"समझिए कि वह तो उसे मिल गई। इधर बच्चा कोशिश करेगा, उधर पंडिज्जी भी उसे गाइड कर देंगे। फर्स्ट आने में धरा क्या है?" पंडिज्जी की तरफ से गंगेलेजी ने आश्वस्त किया।

पंडिज्जी अलबत्ता चुप रहे। चुप रहकर मुस्कुराते रहे, बस।

वे अभी भी पार्टी को तौल रहे हैं। कहाँ तक जा सकती है यह पार्टी?

"पंडिज्जी की कृपा हो जाए तो फर्स्ट लाना तो फिर बाँए हाथ का खेल मानिए।"

गंगेलेजी ने फिर कहा।

लड़के का बाप और बाप का मित्र, दोनों जन पंडिज्जी की तरफ़ देख रहे हैं- शायद, अब ये अपने पत्ते खोलें?

"गंगेलेजी इसे बाएँ हाथ का काम बता जरूर रहे हैं पर ऐसा सरल काम भी नहीं है यह।" पंडिज्जी ने मुस्कुराकर फाइनली कहा।

गंगेलेजी भी मुस्काने लगे।

"बाएँ हाथ का खेल तो इनने ऐसेई कह दिया, है ना गंगेलेजी? वर्ना अपने देश में बायाँ हाथ तो पिछवाड़ा धोने के काम आता है। आपके मेरठ में भी इसी से धोते होंगे, क्यों साहब?" पंडिज्जी ने कहा और हँस पड़े।

सब हँसने लगे।

"काम ऐसा आसान कतई नहीं है पर हम आपकी पूरी सहायता करेंगे।" पंडिज्जी बोले।

"जी।" लड़के का बाप आश्वस्त हुआ।

"गंगेलेजी लाए हैं तो आपका काम तो हमें करना ही पड़ेगा भाई साहब।" पंडिज्जी ने गंगेलेजी को दुलार से देखा।

"तो फिर काम कर ही दें।" गंगेलेजी ने हाथ जोड़ दिये।

"मान लो कि कर ही दिया।" पंडिज्जी ने मान लिया।

वातावरण अचानक ही हल्का हो गया।

"जय हो पंडिज्जी की।" बाप के मित्र ने वातावरण को और हल्का बनाने के लिए कहा।

बाप ने भी पंडिज्जी के हाथ जोड़ दिये।

"आप जानते ही हैं। अकेली जय बोलने से तो पूजा संपन्न होती नहीं। इसमें प्रसाद भोग भी लगता है।" पंडिज्जी ने कहा।

"हम तो कब से आपके आदेश की प्रतीक्षा कर रहे हैं।" लड़के के बाप ने कहा।

"पूजा में आदेश नहीं, श्रद्धा लगती है। ... आपकी जो श्रद्धा हो सो बताएँ।" पंडिज्जी को खोलना जटिल काम है।

"आप पूजा विधान तो बतलाएँ?"

"देखिए, पहले की बात और थी। पुराने समय में चिरौंजी दानों से ही पूजा निबट जाती थी। वह अच्छा समय था। तब,

हमें भी बस, एक ही देवता को साधना पड़ता था। उसे सन्तुष्ट कर लिया तो फिर कोई झांकने भी नहीं आता था कि परीक्षा में क्या हो रहा है? उन दिनों हम बालक को सीधे किताब ही पकड़ा देते थे कि भैया, यहाँ से यहाँ तक का टीप लो।"

"जी।"

"पर अब वो बात तो रही नहीं। सरकार सख्त हो गई है। अधिकारी हरामी हो गए हैं। इस बार तो स्कूलों में सीसीटीवी कैमरे तक लगवाने वाले हैं। सेंटर में परीक्षा कैसी चल रही है, जिला मुख्यालय में बैठकर इसकी निगरानी चलेगी। इन कैमरों के सामने बिठाए गए बच्चे को फर्स्ट क्लास दिलाना बहुत चुनौती का काम रहेगा। समझते हैं न आप?" पंडिज्जी ने बताया।

"पर आप चुनौतियों से कब घबराए हैं पंडिज्जी।" गंगेलेजी ने हँसकर कहा। कब घबराए

बाप मुस्कुराने लगा।

तस्वीर में खड़े सुभाषचंद्र बोस पहले की तरह, बस सामने की दिशा में देखते रहे। भारतमाता भी चुपचाप खड़ी रह गईं।

"बहादुर हैं अपने पंडिज्जी।" बाप का मित्र हँसकर बोला।

"इस काम में बहादुरी नहीं लगती भाई साहब; बस महात्मा गांधी का साथ लगता है। हमें गांधीजी को काम पर लगाना पड़ता है। गड्डी की गड्डी लगती है। हमें भी आगे प्रसाद चढ़ाना पड़ता है। पहले एक देवता पर चढ़ता था। आजकल देवता बढ़ गए हैं।

इस बार तो और भी बढ़ जाने वाले हैं। बताते हैं कि इस बार फ्लाइंग स्क्वाड के साथ पुलिस भी चलेगी।"

"हद हो गई है जे तो!" गंगेलेजी ने पंडिज्जी की भावनाओं को संगत दी।

"स्साले ऐसा दिखा रहे हैं मानो परीक्षा नहीं डकैती होने वाली हो। बताइए!" पंडिज्जी बड़बड़ाए।

"बड़ी ही गलत बात है सरकार की।" गंगेलेजी ने कहा।

"है गलत, पर हम-आप क्या कर लेंगे? सरकार ही गलत काम करने की ठान ले तो आप क्या कर सकते हैं? अब ये सब लोग अपना-अपना मूँ फाड़ेंगे। हमें तो सबका पेट भरना पड़ेगा। सब पे प्रसाद चढ़ेगा। ... और इस चक्कर में बोझ किस पर बढ़ गया? ... परीक्षार्थी पर। हमने तो हमेशा कोशिश की है कि शिक्षा सस्ती और सुलभ हो, सब फर्स्ट क्लास लाएँ पर..." पंडिज्जी बोले चले जा रहे थे।

"... आपके लक्ष्य बड़े पवित्र हैं।" बाप का मित्र बोला।

"आप तनिक खुलकर बता देते तो हम चलकर उसका इंतजाम करते?" बाप ने अब एकदम स्पष्ट पूछा।

"आप खुद ही सब देख-समझ लें। हमने खुलकर ही सारी पोजीशन बताई है।"

सब चुप हो गए। बाप को आशा है कि पंडिज्जी रकम के बारे में स्पष्ट बता देंगे। गंगेलेजी ने रकम का एक अंदाजा तो पहले से दे रखा है परन्तु फाइनल तो पंडिज्जी ही करेंगे, यह भी कहा था।

अचानक ही पंडिज्जी ने पूछा, "अच्छा, अब आप जे बताएँ- फर्स्ट ही चइए कि नब्बे परसेंट से ऊपर की तमन्ना है?"

यह सुनकर तो पार्टी ग़ज़ब की उत्साहित हो गई।

"नब्बे परसेंट !!"

"क्यों? क्या बच्चों के नब्बे प्रतिशत नहीं आते हैं? आते हैं। अखबार में इनके फोटू छपते हैं। पिछले साल, खुद हमारे स्कूल से सात बच्चों ने नब्बे परसेंट से ज्यादा अंक खींचे थे। मेहनत जरूर लगती है पर नब्बे परसेंट भी आते हैं।"

"आप तो फिर यह नब्बे परसेंट वाला ही करा दें।" बाप का दोस्त बोला।

"क्यों भाई साहब?" गंगेलेजी ने बाप से भी पूछा।

"बिलकुल, नब्बे परसेंट ही दिलवा दें।" बाप ने भी कहा।

"नब्बे परसेंट वाले काम के लिए सब कुछ सौ परसेंट एडवांस में लगेगा।" पंडिज्जी ने बताया।

"जी?"

"यह कार्य आसान नहीं होगा। बड़ा परिश्रम लगेगा।"

"वो तो सब आपको करना है पंडिज्जी।"

"आपको भी भौत करना पड़ेगा। भौत सारे गांधी लगेंगे। मान लीजिए कि जेब की गांधी जयंती मन जाएगी।""

"तो हम मनाएँगे न।"

"सोच लें।"

"सोचना क्या है? बेटे के भविष्य का सवाल है।"

"तो मान लें कि उसका भविष्य बन गया।"

"थैंक्यू पंडिज्जी। अब, प्लीज हमें थोड़ा क्लियर कट आयडिया दे देते तो..."

"गंगेलेजी ने दिया तो होगा न?"

"दिया था पर..."

"...बस, तो उसी को डबल कर दें।"

"जी?"

"जी। गंगेलेजी ने तो फर्स्ट क्लास का हिसाब बताया होगा न? इधर अब बच्चे को मेरिट में लाने का डिस्कशन चल रहा है। रास्ता बड़ा ही दुर्गम है। चढ़ाई भौत है। इस रास्ते पर ढोने वाले लोग बड़ा पैसा माँगते हैं।

"वो तो है पर..."

"...और सब कुछ कैश में लगेगा। वो भी पूरा का पूरा एडवांस में। फुल एडवांस । बहुत बड़ा काम होता है यह। गोपनीय भी। बाहर इसकी चर्चा न की जाए-इसका पूरा खयाल रखिएगा।"

"नहीं, नहीं, ये किसी से बात तक नहीं करेंगे।" गंगेलेजी ने आश्वस्त किया।

"वैसे, आप इनको लाए हैं तो सब समझाकर ही लाए होंगे पर हमारा बताना भी फर्ज है।" पंडिज्जी ने हँसकर कहा।

"थोड़ा कुछ कम हो जाता तो?"

"नब्बे परसेंट को आप ऐसी सस्ती चीज न बनाएँ भाई साहब।"

"नहीं, वो बात नहीं है।"

"हमारे सेंटर का बच्चा नब्बे परसेंट लाए तो हमें भी गर्व होता है। कुछ भी कम करने की तो बात ही न करें। हमें भी गर्व करने का मौका दें।"

"आपकी कृपा रही तो वह ले ही आएगा।"

"कृपा तो रहेगी पर अब एक चीज और साफ-साफ बताइए; उसे कोई उत्तर डिक्टेट करवाए तो वो सही-सही लिख तो लेगा न? राइटिंग ठीक है कि ऐसेई?"

बाप चुप रहा।

"ठीक तो नहीं है।" बाप के मित्र ने बताया। "और उसका भाषा-ज्ञान? इंग्लिश-विंग्लिश? उसे कोई मास्टर बोल के उत्तर लिखवाए तो कर लेगा न?"

"हमने बताया था न, आजकल उसे चक्कर आते हैं।" "चक्कर का मतलब जे तो नहीं कि हम लिखवाएँ खेत की और वो लिखे खलिहान की? क्यों भाई साहब ? सब कुछ अभी साफ बता दें। हम जब नब्बे परसेंट का वायदा कर रहे हैं तो हमें इसकी सौ परसेंट गारंटी भी देनी होती है।" पंडिज्जी ने कहा।

दोनों चुप बैठे रहे।

पंडिज्जी गंगेलेजी की तरफ देखने लगे।

"पंडिज्जी, आप तो ऐसा मान के चलिए कि सब कुछ अपुन को ही करना है।" अन्ततः

गंगेलेजी ने हाथ जोड़ लिए।

गंगेलेजी के साथ-साथ दोनों जनों ने भी हाथ जोड़ लिए।

"यार, तुम भौतई कठिन केस उठा लाते हो गंगेलेजी। भैया, इधर कोई हमारे बाप का राज चल रहा है क्या?" पंडिज्जी बड़बड़ाने लगे।

गंगेलेजी अभी तक हाथ जोड़े हुए बैठे हैं।

"आप सक्षम हैं प्रभु।" गंगेलेजी ने कहा।

पंडिज्जी चुप बैठे रहे।

दोनों लोग उनका मुँह देख रहे हैं।

"आपके लिए जे भी कौन-सा कठिन काम है पंडिज्जी।" गंगेलेजी ने चापलूसी - सी करते हुए कहा।

"देखिए, आप हमारी परीक्षा जरूर लें परन्तु हमें ऐसी अग्निपरीक्षा में न बिठाया करें गंगेलेजी कि चूतड़ों पर फफोले पड़ जाएँ।" पंडिज्जी ने गंगेलेजी से रुष्ट होने का स्वाँग करते हुए कहा।

गंगेलेजी मुस्कुराने लगे। दोनों पात्रों ने इस सीन में इतना जीवंत अभिनय किया था कि अब दोनों में पैसे कम कराने की बात वापस उठाने की हिम्मत सम्भव नहीं रह जानी थी। पंडिज्जी अत्यन्त गम्भीर बने रहे। बैठे-बैठे वे, बस गंगेलेजी को घूरते रहे। उन्होंने उन दोनों लोगों की तरफ देखा भी नहीं।

"फिर तो इस बालक को सोल्वर लगेगा भइया।" पंडिज्जी ने गंगेलेजी की तरफ देखकर अन्ततः कहा।

"सोल्वर समझते हैं न भाई साब?" पंडिज्जी ने उसी तारतम्य में लड़के के बाप की तरफ़ देखते हुए पूछा।

नकल की तकनीकी शब्दावली से परिचित नहीं है लड़के का बाप। वह चुप रहा।

पंडिज्जी ने ख़ुद उसे यह तकनीकी पक्ष समझाया, "सोल्वर का मतलब होता है वह आदमी जो आपके लड़के की जगह बैठकर उसकी परीक्षा देगा। नाम, पता, रोल नम्बर, दस्तख़्त, सब आपके सुपुत्र के; परीक्षा देगा सोल्वर।"

"उसमें कोई बाधा तो नहीं?" बाप के दोस्त ने पूछा।

"और तो नहीं, पर उसका भौत पैसा लगता है।"

"तो फिर वही करा दें पंडिज्जी।" बाप ने कहा।

"अब तो कराना ही पड़ेगा। नब्बे प्रतिशत के लिए बड़े पापड़ बेलने पड़ते हैं भाई साहब।" पंडिज्जी बोले।

"करवा दें पंडिज्जी।" गंगेलेजी ने भी सिफ़ारिश की।

"परेशानी एक ही है।" कहकर पंडिज्जी चुप हो गए।

बाप ने बेचैन होकर पूछा, "क्या?"

"आजकल जे सोल्वर लोग भी बड़ा मूँ फाड़ते हैं। पैसा एडवांस में माँगते हैं। कहते हैं कि ये रिस्क लेने के पैसे हैं। कभी पकड़ आ गए तो धारा चार सौ बीस में पाँच साल तक की सजा बताते हैं।" पंडिज्जी चाहते हैं कि पार्टी मुक्त-हस्त से ख़र्च करने को तत्पर हो जाए।

"आप तो करा दो। जो लगेगा, ये दे देंगे।" गंगेलेजी ने पार्टी की तरफ़ से आग्रह किया।

"यार, देने भाई साहब को हैं। यह बात इनको ही बोलने दो।" पंडिज्जी ने कहा।

बाप के मित्र ने भी यही कहा कि आप तो यही करा दें।

"तो आप क्या कहते हैं?" पंडिज्जी सीधे बाप के मुँह से सुनना चाहते हैं।

"जी? करा दें।" बाप बोला।

वातावरण अचानक ही आत्मीय हो गया। पंडिज्जी गदगद हुए तो सब पर गदगदाहट छा गई। पंडिज्जी आत्मीय होकर खुलने लगे। नकल के रास्ते में पड़ने वाली बाधाओं से वे कैसे पार पाते हैं और उस सब में कितना निवेश करना पड़ता है, अन्दर की बातें बताने लगे :

"आप सोचते होंगे कि इस सबमें तो पंडिज्जी भौत कमा लेते होंगे? है न? ऊपर से देखो तो जेई लगता है पर कभी हमसे भी असिलयत पूछे कोई। भाई साहब, हमें भी सबको बाँटना पड़ता है। मानिए कि मास्टरों, सोल्वर, पुलिस, शिक्षाधिकारी, फ्लाइंग स्क्वाड का तो लगेगा ही- वह तो उनका जायज अधिकार है पर हमें तो और भी बीसों

तैयारियाँ करनी पड़ती हैं भाई साहब। सब जगह खर्चा लगता है। पूछिए कैसे?"

किसी ने नहीं पूछा। सब जानते हैं कि वे बताएँगे ही।

"कई बार ये स्साले पूरा पैसे खाने के बाद भी फ्लाइंग स्क्वाड भेज देते हैं। कभी अचानक, बिना बताए ही राजधानी से कोई टीम आ जाती है। हमें उनको भी रोकने का इंतजाम करके रखना पड़ता है। ऐसी टीम आएगी कार में, जीप में। ऐसे में कोटरा की सड़क ही कटी पड़ी हो तो? तब तुम कोटरा कैसे पहुँचोगे बेटा?... और जिद करके तुम कटी सड़क पार करके भी स्कूल पहुँच ही गए तो इत्ती देर में तो सब कुछ चकाचक, सेंटर में एकदम रामराज।" पंडिज्जी अपनी कारगुज़ारियों का ज़िक्र करके ठठाकर हँस पड़े।

"सड़क कैसे कटेगी?"

"सड़क काटने वाले भी रहते हैं। हमारे पास इसके एक्सपर्ट लोग हैं। बाकायदा पूरी टीम तैनात रहती है। हमारे एक इशारे पे, पन्द्रह मिनट में पूरी सड़क आरपार खोद दें- ऐसे बढ़िया एक्सपर्ट हैं। अब आ सको तो आ जाओ बेटा। रोड तो पूरी कटी पड़ी है।"

ज़ोर-ज़ोर से हँस रहे हैं पंडिज्जी उस टीम की हालत सोच-सोच के, जो कटी सड़क के उस पार हताश खड़ी है।

"और जो कोई जिद्दी अफसर फिर भी कहीं से घूमघाम के स्कूल पहुँच ही जाए तो हमारे आदमी डंडे, बन्दूक, तमंचे आदि लेकर बाउंड्री के बाहर अन्दर, हर जगह रहते हैं। इसके लिए फिर थानेदार साहब को भी सेट करके रखना पड़ता है। इन सारे इंतजामों में बड़ा पैसा लगता है भाई साहब। यह सब हमने आपको इसीलिए बताया है कि आप जे न सोचने लगें कि हमने मीठा बोलकर आपसे भौत सारा पैसा झटक लिया। अरे, काहे का पैसा! हमारे हाथ तो बस जे लगेगा, घंटा।"

पंडिज्जी और ज़ोर से हँसने लगे। सब मुस्कुराने लगे। अब पंडिज्जी ने आख़िरी बात कही :

"हम आपको एक बार फिर स्मरण करा दें। सब काम नकदी में होना है भाई साहब। और सारा काम बड़े नोटों में ही करिएगा। अब तो सरकार भी खयाल रखती है। खूब बड़े नोट निकाल दिये हैं उसने। लेने-देने में सुभीता। है कि नहीं?"

बाप और उसके मित्र ने हाथ जोड़कर पंडिज्जी को धन्यवाद दिया। उन्होंने गंगेलेजी को भी धन्यवाद दिया कि बलिहारी आपकी वरना भारतीय शिक्षा प्रणाली पर से तो हमारा विश्वास ही उठता जा रहा था।

शठों की नसबंदी

थानेदार साहब का फोन बजा। उस तरफ़ एसडीएम साहब थे।

थानेदार साहब जान गए, क्या कहने के लिए फोन लगाया है साहब ने। कालपी की मीटिंग के बाद एसपी साहब इस बाबत उनको इशारा कर चुके हैं। थानेदार साहब ने मुंशीजी को कमरे से बाहर जाने का इशारा किया और फोन उठा लिया। फिर देर तक जी जनाब, यस सर, हो जाएगा,

मेहरबानी, आपका आशीर्वाद, आज्ञा दें, छोटी-सी बात है, चिन्ता न करें, मैं हूँ ना टाइप छोटे मगर सारगर्भित वाक्य बोलते रहे।

फोन बन्द हो गया। फोन बन्द होने के बाद वे कुछ देर तक चुपचाप ही बैठे रहे। फिर आवाज़ देकर उन्होंने मुंशीजी को बुलाया।

"जी साहब?" मुंशीजी कभी-कभी ज़्यादा ही चुस्त हो जाते हैं।

"यार, वो सुर्रेले के लौंडे की पिटाई वाली फाइल तो निकालिए जरा।" थानेदार साहब ने कहा।

"कछू प्राब्लम सर?"

"नहीं, बस कालपी से थोड़ा बड़े साहब का फोन आया था। जे पंडिज्जी भी भैंचो, सीधे कलेक्टर साब तक पहुँच गए हैं। शिकायत लगा के आए हैं कि हम उनके चौकीदर को डराकर उनके लौंडे के खिलाफ झूठी गवाही गवाही दिलाने की कोशिश कर रहे हैं।"

"फिर?"

"साहब कहने लगे कि पंडिज्जी के परिवार को परेशान न किया जाए।"

"तो?"

"हम क्या कहते? कहा, जी जनाब। यही कहा जाता है न? तुम तो अभी वो फाइल ला के हमें दे दो। अभी तो स्साली को हम ताले में ही धरे देते हैं।"

"हमने तो जनाब से पहले ही कहा था कि पंडिज्जी भौत गहरे आदमी हैं। लखनऊ तक पकड़ है उनकी।"

थानेदार साहब मुस्कुराए, "बस, अपनी संतान पे पकड़ नहीं बना पाए पंडिज्जी। स्साला शादीशुदा है पर लौंडियाबाजी नहीं छोड़ रहा।"

इधर मुंशीजी अपनी बात कहते रहे, "भौतई गहरे आदमी हैं पंडिज्जी। इस एरिया की सवर्ण पोलिटिक्स के सर्वेसर्वा हैं परन्तु उनने पिछड़ों पर भी पकड़ बना रखी है। पिछले साहब के खिलाफ इनने भौत आग मूती थी।"

"आप इस थाने में बीस साल से हैं। आपको ज्यादा पता है।" थानेदार साहब ने स्वीकार किया। मुंशीजी ने तुरन्त अटेंशन मुद्रा पकड़कर साहब को धन्यवाद दिया फिर ढीले होकर खड़े हो गए।

थोड़ी देर चुप्पी ही रही।

"गहरे तो खैर लग रहे हैं।" थानेदार ने मानो स्वगत कहा।

"भौत गहरे हैं साब।" मुंशीजी ने कहा।

"ऐसेई लोगों के लिए हमारे मेरठ तरफ कहते हैं कि इत्ते गहरे मत जा गालिब, डूब जाएगा मादर..." थानेदार साहब बोले।

"जे डूबने वालों में से नहीं हैं साहब। हाथीडुब्बा गहराई में तैरबे वाले खिलाड़ी हैं।" मुंशीजी ने बताया।

"फँसेंगे, जे भी एक दिन फँसेंगे। कभी इनको किसी बड़ी चीज में फँसने भर दो। तब देखते हैं हम इनकी तैराकी।" दरोगाजी मन ही मन उद्वेलित हैं कि पंडिज्जी ने सीधे ऊपर बात कर ली।

"वो तो है ई साहेब।"

"वैसे तो ये सब हरामी ही होते हैं।" थानेदार फिर स्वगत में बोले।

"जी?" मुंशीजी समझ न सके। दुनिया में इतने हरामी हैं। साहब किसकी बात उठा रहे हैं?

"...ये पोलीटीशियन लोग, सब हरामी होते हैं।" थानेदार ने स्पष्ट किया कि कौन-से

हरामियों की बात चल रही है।

"इसके बिना इनका काम भी तो नहीं चलता साहब। आदमी हरामी न हो तो पोलिटिक्स में कोई उसे टके गज न पूछे।" मुंशीजी ने राजनीति में हरामीपन की आवश्यकता पर अपने विचार प्रकट किए।

"और इनकी संतानें भैंचो इनसे भी हरामी होती हैं। न जाने क्या खा के इनको पैदा करते हैं स्साले।" थानेदार ने कहा।

"हाँ सरकार।" मुंशी सहमत हुए।

"कानून को चूतियाई मानते हैं स्साले।"

मुंशीजी चुप रहे। जान गए कि बड़े अफसर ने साहब को अभी कुछ ऐसा बोल दिया है जो रह-रहकर उन्हें टीस रहा है।

"...इन हरामियों की तो कंपलसरी नसबंदी होनी चाहिए।" दरोगाजी का विचार है कि नेताओं की नस्ल यहीं रोक दी जानी चाहिए।

मुंशीजी चुप रहे। थानेदार साहब भी अन्ततः चुप हो गए। थोड़ी देर चुप्पी ही रही।

तभी एक सिपाही कमरे में घुसा। उसने 'जयहिंद' ठोकी और ढीली किस्म की चुस्ती के साथ खड़ा हो गया।

"बोलो, रामसिया?"

"वो बेतवा पे पुल बन रहा है न साहब?" सिपाही बताने लगा।

"गिर गया क्या?"

"गिरा नहीं। उसके सुपरवाइजर वाइजर और मनीजर साहब आए हैं। साहब से मिलना चाहते हैं।"

"क्यों? क्या हुआ? "

"सरपंच के मोंड़ा ने कल रात पुल के चौकीदार की कुटाई कर दी; ऐसा बताते हैं।"

"हड्डी-फड्डी तो नहीं तोड़ दी?"

"बता रहे हैं कि खूब लात-घूंसा मारे हैं। विकट सुटाई करी है।"

"अन्दर बुला लो।" दरोगाजी ने कहा।

सिपाही बाहर जाने को हुआ तो थानेदार साहब मुंशी की तरफ पलटे।

"हमने क्या कहा था? नसबंदी होनी चाहिए। छोटे नेता हों, बड़े हों, सबकी।"

मुंशीजी ने 'जी जनाब' कहा। अफ़सर की बात पर यही कहने का रिवाज़ है।

रामराज्य के लिए जूता

"जयहिंद महात्माजी।"

"जयहिंद।"

"महात्मा गांधी की जय।"

"महात्मा गांधी की जय।"

गजानन बाबू बेतवा के कच्चे पुल पर खड़े हैं। वे बड़ी देर से सूर्योदय को निहार रहे हैं। नीचे बेतवा का जल बह रहा है। ऊपर लालिमा से भरा हुआ आसमान। सुबह की हल्की सर्दी। नदी में लोरते लोग। गजानन बाबू धोती, चप्पल, चश्मा (गोल चश्मा, तार वाला) और बंडीनुमा जेब वाली बनियान पहिने हैं। पाँव में कोल्हापुरी चप्पल। यही धज है उनकी। उनके प्रातः भ्रमण का यही रास्ता है। कोटरा का बच्चा-बच्चा पहिचानता है गजानन बाबू को। गजानन बाबू अब बयासी-चौरासी साल के बुजुर्ग हैं।

लोग यह भी जानते हैं कि इनका दिमाग खराब है, एकदम सिरीं हैं। देशभक्ति में पगलाए हैं। सच्चे देशभक्त स्साले, आजकल मिलते ही कहाँ हैं जनाब? जो देशभक्ति में पगला जाए, ऐसा आदमी तो सच्चा देशभक्त ही कहाया- क्यों न साहब? तो कोटरा में सभी उनका आदर भी करते हैं। परन्तु वे पागल हैं। आँय-बाँय बोलते रहते हैं। ... बताइए ! जनाब चाहते हैं कि देश की सरकार गांधीजी के बताए मार्ग पर चले। अब ऐसे कंटकाकीर्ण मार्ग पर जाकर कौन अपनी गाड़ी पंचर करायगा? श्रीमान् किसी को भी राह चलते पकड़ लेते हैं। उसे अपनी योजनाएँ बताने लगते हैं। कहते हैं उनके पास ऐसी-ऐसी योजनाएँ हैं जिनको लागू करें तो देश में घी-दूध की नदियाँ बह सकती हैं

और भारत एक बार फिर सोने की चिड़िया बन सकता है। मज़े लेते हैं सब। जहाँ भी वे दिख जाएँ, लोग दूर से ही बुलंद आवाज़ में 'जयहिंद महात्माजी' कहते हैं। पास आकर 'महात्मा गांधी की जय' भी बोलते हैं।

गजानन बाबू इलाके के पुराने गांधीवादी हैं। कभी फ्रीडम फाइटर रहे हैं। स्वतंत्रता संग्राम में तिरंगा लिए गली-गली घूमे हैं। अंग्रेजों के जूते-डंडे खाए हैं। जेल में रहे हैं। उपवास पर बैठे हैं। प्रभातफेरियाँ निकालते रहे। एक दिन ज़रूर यह देश बापू का भारत बनेगा, इस मासूम विश्वास को कभी मरने नहीं दिया है उन्होंने। खद्दर के वस्त्र। गांधी टोपी। चप्पलें। सादा भोजन। और सत्याग्रह। इन सबके लिए उनका समर्पणभाव लड़कपन में भी ऐसा मारक था कि उन दिनों भी अन्य स्वतंत्रता संग्राम सेनानी उन्हें पागल ही मानते थे। कहते थे कि अपना गजानन तो पूरा सरक गया है। कुछ कहते कि यार, इसे समझाओ तो बाकी मानते कि इसे स्वयं गांधीजी भी ठीक नहीं कर सकते हैं।

बारह साल की उम्र में उन्होंने पहली बार अंग्रेजों की लाठी खाई थी।

माँ-बापू को तो पता भी नहीं था। किसान परिवार। पाँच भाई। तीन बहिनें।

तब गाँव-गाँव में गांधीजी का नाम भगवान की भाँति फैला हुआ था। देश के लोग मानते थे कि गांधीजी ज़रूर कोई अवतार हैं। कोई सामान्य आदमी तो ऐसा हो ही नहीं सकता। जरूर भगवान हैं। लीला है उनकी। अंग्रेजों के अत्याचार से मुक्ति दिलाने के लिए ईश्वर ने स्वयं भारत में अवतार लिया है। एक दिन पता चला कि कोटरा से स्वयंसेवकों की एक टोली मऊरानीपुर जा रही है। मऊ के स्वयंसेवकों ने मंडी चौराहे पे तिरंगा फहराने का संकल्प लिया है। इधर अंग्रेज अफ़सर ने मुनादी करा दी है कि ऐसा करबे की कोशिश भी करी तो खबरदार। परन्तु दीवानों कि ज़िद थी कि तिरंगा तो वहीं फहराया जाएगा। मऊरानीपुर के लोग, आस-पास के गाँव के स्वयंसेवक, सब पहुँचेंगे, और बाकायदा अंग्रेजों को पहले से चेता कर पहुँचेंगे। तारीख। समय। हर चीज बताकर चौराहे पर पहुँचेंगे। अंग्रेजन को भी तो पता रहे कि हम आ रये हैं। रोकते बने तो रोक लो। तुम चाहो तो हमें मार लो। काट डालो। हाँ, हम तुम्हें पलट के एक घूँसा न मारेंगे। गांधीजी के चेला हैं हम। अहिंसावादी, पर दृढ़निश्चयी। हमें मार लो। जमीन पे गिरा दो। गिर जाएँगे पर तिरंगा न छोड़ेंगे। मर जाएँगे पर तिरंगा न छोड़ेंगे। तिरंगे को मंडी चौराहे पे लगा के ही मानेंगे।

... बातें तैरती थीं कोटरा की हवाओं में। और गजानन बाबू मात्र बारह साल के थे तब। उन्हें जो भी लगा हो, वे घर में बिना कुछ भी किसी को भी बताए कालपी की टोली के साथ मऊ चल दिये। मऊरानीपुर के मंडी चौक पर झंडा फहराने वालों के जुलूस में वे भी थे। अंग्रेज सिपाही की लाठी पड़ी। सिर फट गया। भलभलाकर खून बह चला। गिर पड़ा बालक गजानन परन्तु उसने तिरंगा न छोड़ा। जुलूस में शामिल बड़े बुजुर्गों ने बालक को सड़क के एक किनारे किया। स्वयंसेवकों ने पट्टी-वट्टी की। उसे

पानी पिलाया। बस, फिर तो उनका नाम हो गया, सब तरफ़। भैया, जे कहाँ का बालक है?... कौन है जे?...एक नायक की तरह कोटरा लौटा बालक गजानन। तब से गजानन को मानो धुन-सी लग गई। हर पल, देश, बस देश। आज़ादी, बस आज़ादी। गांधीजी, केवल गांधीजी।

कोटरा वाले इस बात पर भी एकमत हैं कि जरूर तब अंग्रेजन का डंडा इनके दिमाग में ऐसी जगह घल गया होगा कि जे बाद में ऐसे पगला गए। बचपन की चोट है। फिर जे कभी ठीक नहीं हुई। इसी में इनकी बुद्धि फेल हो गई। महात्माजी पूरे मेंटल हो गए। और अब तो केस ऐसा बिगड़ चुका है कि लखनऊ के सदर मंजिल वाले बड़े डाक्टर और बिजली के झटके भी इसके सामने फेल हो जाएँ।

हाँ, कुछ लोग अवश्य मानते हैं कि गजानन बाबू पागल तो कतई नहीं, बल्कि खांटी देशभक्त हैं। ईमानदार गांधीवादी हैं। देश को रसातल में जाता देखकर पागलों जैसे बेचैन ज़रूर रहते हैं जो कोई भी देशभक्त होगा ही। ... कहाँ है वह स्वतंत्र देश जिसके लिए हमने अंग्रेजों से मार खाई थी? यह देश तो अभी भी वैसा ही है- गुलामी के दिनों वाला भारत; बस, मालिक बदल गए हैं। बताओ कि ऐसी आज़ादी का आखिर अर्थ ही क्या बना? ... गजानन बाबू चाहते हैं कि आज़ाद देश में तो कम से कम वह सब अन्याय न चले जो अंग्रेजों के ज़माने की पहचान था। यदि देश स्वतंत्र है तो इसके सिस्टम भी तो स्वतंत्र हों और ईमानदार भी। सबको न्याय मिले। कानून की सत्ता हो। ... नेता बेईमानी न करें। ... हर बात में अफ़सरी न हो। ... यदि स्वतंत्र भारत में यह सब नहीं है तो फिर अंग्रेजों वाला भारत कौन-सा बुरा था? स्साली, जे कौन-सी बात हुई कि तब भी वोई, अब भी वोई! तो ग़लत क्या कहते हैं गजानन बाबू?... गजानन बाबू की तारीफ़ करने वाले लोग यह सब कहते हैं। ... इधर समझदार लोग अलग ही बात कहते हैं। वे कहते हैं कि गजानन बाबू को भी तो बदलते समय को पहिचानना चाहिए। अब वो समय ही नहीं रहा। पर कौन समझा पाएगा गजानन बाबू को? कौन बताए कि अगर गांधीजी भी आज जीवित होते, और ख़ुद को समय के साथ न सुधारते तो पागल ही कहाते। ... समय अब गजानन बाबू का नहीं रह गया है। ठीक है, हम उनकी इज़्ज़त कर लेते हैं, परन्तु यह भी सच है कि वे अब पागल हैं; इस बात से आप भी इनकार नहीं कर सकते। ... जो आदमी बदलते समय को न समझे वह पागल ही कहाया न? टेम पूरा बदल चुका है। टेम एकदम बदल चुका है। गांधीजी की तस्वीर पे फूल, पत्ती तो चढ़ाई जा सकती है पर यह देश अब उनके पीछे जाने को राजी नहीं है भैया। समझिए ज़रा। ... गांधी मार्ग पर घास-फूस उग आया है। ... गांधीमार्ग पर कँटीली झाड़ियाँ उग आई हैं। ... काँटे बिखरे हुए हैं गांधीजी वाले रास्ते पर। ... अब कोई ऐसे मार्ग की तरफ़ हमें ले जाने की ज़िद करे, वो पागल नहीं तो और क्या है?

गजानन बाबू कोटरा की इज़्ज़त भी हैं और चुटकुला भी।

"जय हिंद महात्माजी।"

"जय हिंद।"

"महात्मा गांधी की जय।"

"महात्मा गांधी की जय।"

गजानन बाबू बेतवा के कच्चे पुल पर खड़े सूर्योदय को देख रहे हैं।

***

"दिल्ली से बुलऊवा आया कि नहीं महात्माजी?" किसी ने अंगोछे से अपना गीला बदन पोंछते हुए पूछा है।

पूछने वाला मज़े से मुस्कुरा रहा है। वह खूब जानता है कि दिल्ली में किसी को भी गजानन बाबू की प्रतीक्षा नहीं। वहाँ से कोई बुलावा नहीं आने वाला। दिल्ली में गजानन बाबू जैसों के लिए अब कोई जगह नहीं बची है। दिल्ली में काम का आदमी वह है तो अपने अन्दर के 'गजानन बाबू' से पूर्णतः मुक्त हो चुका हो। किसी का 'गजानन बाबू होना' बरदाश्त ही नहीं है दिल्ली को। पहले आपको अपना 'गजानन बाबू' होना छोड़ना होगा। 'गजानन बाबू' अब देश में संज्ञा नहीं विशेषण बन चुके हैं। दिल्ली से कभी ज़िक्र गजानन बाबू का भी करो तो वह हँसने लगती है। ... ये गजानन काहे को अभी भी वही गजानन बना बैठा हुआ है भाई ! समझाओ न सरऊ को।...

"नहीं, बुलाए तो नहीं।" गजानन बाबू ने उत्तर दिया।

"... उनको बुलाना तो चइए। पंडिज्जी दिल्ली आते-जाते रहते हैं। बेई बता रहे थे कि गजानन बाबू के बुलऊए की तैयारी चल रही है दिल्ली में।" बदन सुखाकर अब चड्डी-बनियान पहिन रहा है वह शख़्स।

वहाँ मौजूद कुछ और लोग भी बातचीत में दिलचस्पी ले रहे हैं। पागल की बातें सुनने में सबको मज़ा तो आता ही है।

"पंडिज्जी से कहते होंगे पर हमें बुलाए तो नहीं।" गजानन बाबू निराश नहीं हैं, बस, बता रहे हैं।

"बुलाएँगे। जरूर बुलाएँगे। जेई चर्चा चल रही है आजकल दिल्ली में।" किसी ने जोड़ा।

"नेहरूजी से हमें जरूर उम्मीद थी। ... आजादी के बाद हमने उनके बुलऊए की बड़ी प्रतीक्षा भी करी। पर बे हो गए दिल्ली में बिजी और गांधीजी तो मर ही गए। ... देखो बेटा, वो तो नेहरूजी ने धोखा कर दिया वर्ना तभी रामराज्य आ गया होता। हमने पूरा

प्लान बना के रखा हुआ था। बस, हमें कागज पकड़ाने थे नेहरू को कि देश को ऐसे चलाओ। पर उन्हें टेम ही नहीं था कि रामराज के बारे में कुछ सोच सकें। हम इधर चूतिया घाँईं बैठे रहे, नेहरूजी ने हमें कभी बुलाया ही नहीं।" गजानन बाबू को नेहरूजी से शिकायत है।

दरअस्ल, कोटरा वालों को गजानन बाबू के पूरे पागल हो जाने की पहली सूचना ही नेहरूजी के कारण मिली थी।

***

आज़ादी मिलने के तीन साल बाद की बात है।

नेहरूजी देश के प्रधानमंत्री थे। गांधीजी की मृत्यु हो चुकी थी। आज़ादी के बाद, स्वतंत्रता संग्राम के समय पैदा हुई भावनाएँ हवाओं में तैर रही थीं। उम्मीदों के बवंडर तो खैर बैठ गए थे परन्तु तरंगें अभी भी वातावरण में मौजूद थीं। देश बदलेगा, ऐसा विश्वास अभी भी जनमन में था। आमजन का जीवन बदल जाएगा, सत्य का राज्य हो जाएगा-सबको अभी भी यह विश्वास था। सब प्रतीक्षा में थे। अपने नेहरूजी, ज़रूर देश में गांधी का स्वराज स्थापित करेंगे। बहुत समय तक गजानन बाबू भी ऐसा ही मानते रहे। मानते रहे कि एक दिन नेहरूजी ज़रूर बुलाएँगे उन्हें, दिल्ली। पूछेंगे कि बताइए देश को कैसे चलाया जाए? सलाह लेंगे उन जैसे स्वतंत्रता सेनानियों से भी। रामराज कैसे लाया जाए, ज़रूर पूछेंगे। ... परन्तु नेहरूजी को तो मानो रामराज के लिए फुर्सत ही नहीं थी। बहुत दिनों तक उनकी प्रतीक्षा की गजानन बाबू ने। ... पर कहीं कुछ भी होता नज़र नहीं आया। ... नेहरूजी का यह लस्टम-पस्टम तरीका समझ ही नहीं पा रहे थे गजानन बाबू, पर वे क्या कर सकते थे? वे कोटरा में थे। दिल्ली में रहे होते, तो एक दिन पहुँच ही जाते जवाहर लाल के सामने कि जे सब चल क्या रहा है? वह भारत कहाँ है, जिसके लिए हमने अपना मूँड़ फुड़वाया था? क्या आज़ादी की लड़ाई फालतू में लड़ा के हमें ऐसेई चूतिया बनाने का प्लान था तुम्हारा?... आज़ादी के बाद देश में क्या बदला है तुमने? स्साली, वोई अफ़सरी, वोई पुलिस, वोई अदालतें, वोई दरिद्रता, वोई सिंहासन, वोई हंटर, वोई डंडे, वोई जूता, वोई रिश्वत - फिर तुमने यहाँ बदला

क्या? अंग्रेज भी भैंचो वोई, और तुम भी स्साले वोई?

ऐसे ही सोच में गुज़रे कुछ वर्ष।

फिर एक दिन बाज़ार में खड़े होकर खूब गालियाँ दीं गजानन बाबू ने, नेहरूजी को।

सारी गालियाँ। किसम-किसम की गालियाँ। माँ-भैन की भी। जमकर तमाशा हुआ। भीड़ इकट्ठी हो गई। बहुत ही तैश में थे गजानन बाबू। क्रोध में पत्ते-सा काँप रहे थे। वाक्य भी, गुस्से में टूट-टूटकर बाहर निकल रहे थे। सार्वजनिक रूप से खूब गरियाया

उन्होंने नेहरूजी को उस दिन । ... जेई है स्साला तुमारे सपनों का भारत?... चूतिया समझ रखा है हमें?... इसी के लिए हम तिरंगा ले के मऊरानीपुर के गल्लामंडी चौराहे पे अपनी मइयो कराने गए थे? इसी के लिए गांधीजी अनशन करते रहे, क्यों?... तुम तो यार, ठाठ से शेरवानी पे गुलाब फँसा के सिंहासन पे बिराज गए, और जे देश? इसका क्या? कहाँ गया गांधीजी का रामराज? किसके पिछवाड़े घुस गए सारे सपने? तो जे स्साली आज़ादी की लड़ाई थी कि कुर्सी की? क्यों तुमने हमें धोखे में रखा? हमने भी तो आन्दोलन करके जे आज़ादी दिलाई है, तो अब हमसे क्यों नहीं पूछते कि देश को कैसे चलाया जाए? तुम तो, भोसड़ी के, हमारे मालिक ही बन गए यार; वाह, जवाहर लाल, वाह! हम इतें कोटरा में चूतिया घाँईं बैठे रह गए और तुम उतें दिल्ली में बैठ के हमें जे बताने लगे कि कोटरा में अब वही होगा जो दिल्ली कहेगी। भैया, गांधीजी के ग्राम स्वराज का क्या हुआ? यार, तुमने तो गांधीजी को भी चूतिया बना डाला जवाहर लाल।

बाज़ार के चबूतरे पर खड़ा होकर खूब गरियाया नेहरूजी को उन्होंने। गरियाते-गरियाते इतने उत्तेजित हुए कि अर्धमूर्छित होकर वहीं लुढ़क गए। जून की गर्मी थी कि उत्तेजना की; गजानन बाबू को तगड़ी लू लग गई। चार दिन वे बिस्तर पर पड़े रहे। अर्धमूर्छित अवस्था में भी दिल्ली और नेहरूजी को गालियाँ देते रहे। बड़ी मुश्किल से उनकी जान बची।

तब से तो अब वर्षों बीत गए हैं।

आज़ादी के बाद बेतवा में न जाने कितना पानी बह चुका है परन्तु गजानन बाबू की उत्तेजना, शिकायत और सपने ज्यों के त्यों हैं। लोग इसी का मज़ा लेते हैं। दिल्ली का नाम ले लो, नेहरूजी की बात कह दो, रामराज की याद दिला दो, बस; लोग जानते हैं कि उनको कैसे कुरेदा जा सकता है।

***

"जयहिंद महात्माजी।"

"जयहिंद।"

"महात्मा गांधी की जै।"

"महात्मा गांधी की जय।""

कोई और शख़्स आकर पुल पर रुक गया है।

"कैसे हैं महात्माजी?" उसने पूछा।

"बस, गुलामी कट रही है।" गजानन बाबू बोले।

वे इस आज़ादी को गुलामी से बदतर बताते हैं। कहते हैं, "तब तो सबको पता था कि गुलामी है और किसके चंगुल से निकलना है हमें। अब तो लोगों को जेई नहीं पता कि बे गुलाम हैं। देश गुलाम चल रहा है पर लोग ख़ुद को आज़ाद समझ रहे हैं; स्सालों को जेई नहीं पता कि अभी भी गुलामी ही चल रही है भैया। अरे चूतियो, तुम अभी भी वैसेई गुलाम हो, बस, तुम्हारे मालिक बदल गए हैं। तब कम से कम गुलामी के चंगुल से छूटबे की छटपटाहट तो थी तुममें। अब तो वो भी कहीं नहीं दिखती। चंगुल को ही आलिंगन मानकर गुलामी का मज़ा ले रहा है जे देश। कैसी विडंबना है जे।"

"रामराज का कछू पता चला?" वह शख़्स पूछने लगा। ज़ाहिर है, वह बस मज़ा लेना चाहता है।

"आएगा।" गजानन बाबू ने सूर्य की तरफ़ देखकर कहा। क्षितिज पर लालिमा दिख रही है तो सूरज भी आएगा ही।

"बताते हैं कि आप दिल्ली जा रहे हैं?"

"जाएँगे। प्लानिंग चल रही है। अब तो जाना ही पड़ेगा।"

"आप दिल्ली पहुँच जाते तो रामराज भी जल्दी आ जाता।"

"जाएँगे। रामराज की तो हम नहीं कहते पर अभी जो देश का राज चला रहे हैं उनको दो जूता तो मार के आएँगे ही हम।"

"जूता मारबे से रामराज आ जाएगा?"

"पता नहीं, पर मारना तो है। इस बात के लिए तो मारना ही पड़ेगा न कि अब तक रामराज क्यों नहीं आया? आज़ादी के बाद रामराज तो आना था न? गांधीजी से भी इन काँग्रेसियन ने वायदा किया था। बताइए! स्सालों ने गांधीजी को ही चूतिया बना दिया। बापू को ! इन स्सालों को जूते तो पड़ने चाहिए न? पर कोई इनको मारता ही नहीं। हम दिल्ली जाएँ तो मारें जूता हरामियों को।"

फिर वे गालीगलौज पर आ गए। तैश में आ जाएँ तो धाराप्रवाह गालियाँ देते हैं। सबको इसी की तो प्रतीक्षा थी। अब और भी लोग आस-पास आ गए।

सब मज़े लेने लगे। हँसी-ठठ्ठा शुरू हो गया।

"एक जूता हमारी तरफ़ से भी मारिएगा।" कोई बोला। "सबकी तरफ़ से मारेंगे।" गजानन बाबू ने आश्वस्त किया।

"रामराज..." किसी ने कहने की कोशिश की।

वे और उत्तेजित हो गए।

ज़ोर-ज़ोर से बड़बड़ाने लगे।

"... भौत चूतिया बनाया है कोटरा को दिल्ली ने। ...क्या कोटरा का काम केवल चूतिया बनना रह गया है? और दिल्ली का काम, बस हम सबको चूतिया बनाना? ... हमने दिल्ली में क्यों बिठाया था इनको?... अपनी मराने के लिए? ... बोलो? .स्साले, यदि तुम रामराज नहीं ला सकते हो तो गद्दी छोड़ो न। ... गांधीजी को भूल गए हरामी लोग। ... बताइए ! ... अपने बाप को ही भुला दिया?... हद है कि नहीं?... जाएँगे। दिल्ली तो जाना पड़ेगा। ... इन लोगों को जूता तो मारना ही पड़ेगा हमें। जब तक दिल्ली को इस बात का डर न हो कि रामराज न लाए तो कोटरा जूता मारने को दिल्ली आ जाएगा, तब तक स्साली जेई गुलामी चलबे वाली है। ... पूरे हिंदुस्तान से हर

कोटरा को दिल्ली जाना पड़ेगा। अब तो जूता मारे बिना काम नहीं चलने वाला। जूता तो मारना होगा इन स्सालों को।

...मारेंगे। ..."

वे बड़बड़ाते गए। तमाशबीन हँसते चले गए।

फिर भी सूर्योदय तो हो ही गया।

सूर्योदय हर चीज के बावजूद होता ही है।

न्याय विमर्श

पंडिज्जी कालपी से चले तो शाम उतर आई थी।

पूरा दिन अदालत, तहसील और शिक्षाधिकारी के दफ़्तर में निकल गया। बा नोवेल्स चैट रूम

अब अँधेरा होने वाला है। कालपी झाँसी राजमार्ग से नीचे को उतरती है कोटरा की सड़क। अभी उसी सड़क पर आ गई है पंडिज्जी की मोटरसाइकिल । पुरानी सड़क गायब हो गई है, नई बनी नहीं है; बस गिट्टी, बजरी से होकर निकलना है। मोटरसाइकिल फिसलने से दो बार तो पंडिज्जी पहले ही अपना घुटना भी छिलवा चुके हैं। अभी वे सड़क के साथ बने पगडंडीनुमा गलियारे में मोटरसाइकिल चलाते हुए जा रहे हैं।

इसी सड़क पर आगे चलकर पंडिज्जी का खेत पड़ता है। यहाँ से गुज़र ही रहे हैं तो एक नज़र खेत पर, एक नत्थू पर मारते हुए निकल जाएँगे। जबसे थानेदार दबकाकर गया है, नत्थू भयभीत रहने लगा है। गरीब आदमी का चेहरा वैसे भी डरा-डरा लगता है, और ऐसा शख़्स डर जाए तो उसका चेहरा दुनिया को अलग तरह से ही डराने लगता है। नत्थू का चेहरा असहज करने लगा है पंडिज्जी को इन दिनों। नत्थू का ख़याल आया तो दरोगा और सुर्रेलेजी का ख़याल आ गया। कुछ देर के लिए इन ख़यालों में भटक गए तो पंडिज्जी का ध्यान सड़क से उचट गया।

पंडिज्जी की मोटरसाइकिल, पगडंडी पर और नीचे खिसक आई, किनारे पड़ी गिट्टी पर फिसली और डगमगाती हुई दूर तलक टेढ़ी-मेढ़ी चलती चली गई। वे गिरे तो खैर नहीं परन्तु बनती हुई सड़क को गाली देने का एक माकूल मौका मिल गया था उन्हें। वे चूके नहीं। सड़क को भैन की गाली देकर मोटरसाइकिल की बत्ती जला ली पंडिज्जी ने। फिर, सँभलकर आगे चल पड़े।

आगे निकले तो सड़क बनाने वाले मज़दूरों की एक टोली उन्हें मिल गई। काम ख़त्म करके घर लौटने की तैयारी करते मज़दूर थे। मुँह-हाथ धोते। हँसते-बतियाते। आज का काम ख़त्म होने की राहत उनके चेहरे पर थी। मोटरसाइकिल की रोशनी में उनके चेहरे दमकते-से दिखे। किसी हद तक अलौकिक से प्रतीत होते दमकते चेहरे थे वे। आदमी एक बार दुख और अभाव में जीना और रमना सीख जाए तो आनन्द की परिभाषा और क्रियापद ही बदल जाते हैं क्या? पंडिज्जी ने सोचा।

उनको देखकर अपनी मोटरसाइकिल रोक ली पंडिज्जी ने। इंजन को अलबत्ता स्टार्ट रखा। लाइट जलती रही। मज़दूर उनकी तरफ़ देखने लगे। एकाध ने अभ्यासवश नमस्कार भी कर दिया।

"भैया, जे ताजमहल कब तक पूरा करबे का इरादा है?" पंडिज्जी ने सामने बैठे मज़दूर से पूछा।

"नहीं पता मालिक।" वह बोला।

"तुमईं बना रये और तुमई को नहीं पता?" पंडिज्जी ने पूछा।

"हम नहीं, ठेकेदार साहब बनवा रहे हैं।"

"बे तो हमें कभी इधर दिखते नहीं?"

"मालिक आदमी हैं..."

"...तो बे यहाँ काम देखबे नहीं आते?"

"कानपुर की रिहाइश है उनकी मालिक। उतईं से काम चलता है उनका। वैसे, बे भी आते हैं इस तरफ कभी-कभी।"

"अबकी आएँ तो कहियो कि इत्ते साल में तो कालपी से कोटरा तक संगमरमर बिछ गया होता।"

"हम तो चाकर हैं महाराज।"

"तो चाकरजी, अपने ठेकेदार को हमारा इत्ता संदेश जरूर देना कि कोटरा वाले पंडिज्जी हाथ जोड़ के प्रार्थना कर रये थे कि उनके पिंडदान से पहले अगर बे जे रोड पूरी करा देंगे तो पंडिज्जी की आत्मा भटकेगी नहीं।" पंडिज्जी ने कहा।

मज़दूर हँसने लगे।

पंडिज्जी ने मोटरसाइकिल आगे बढ़ा दी।

अब सब तरफ़ पूरा अँधेरा उतर आया है। हेडलाइट की रोशनी पगडंडी पर हिचकोले लेती मोटरसाइकिल के साथ-साथ सड़क पर ऊपर-नीचे, दाएँ-बाएँ नाच रही है। तभी रोशनी का एक और दायरा पीछे से उनके पास आने लगा। किसी मोटरसाइकिल की आवाज़ भी पास आ रही है। फिर, बार-बार, तेज़-तेज़ बजता हुआ हार्न का स्वर भी पास आने लगा।

कोई मोटरसाइकिल पंडिज्जी के ठीक पीछे चली आ रही है।

कौन है ये?

पंडिज्जी ने अपनी गाड़ी की रफ़्तार तेज़ कर दी। पीछे वाली गाड़ी की रफ़्तार भी तेज़ हो गई। जे स्साला कौन है? कौन उनका पीछा कर रहा है? अपना खेत पास आ रहा

है। अब वहीं गाड़ी रोकते हैं। देखते हैं, यह कौन है? वहीं इससे निबटते हैं।

पंडिज्जी ने गाड़ी को अपने खेत के पास रोका। रोकने से पहले तीन बार ज़ोर-ज़ोर से एक्स्लेटर बढ़ाकर तेज़ आवाज़ पैदा की, फिर गाड़ी बन्द कर दी। यह आवाज नत्थू के लिए सिग्नल है। वह पहिचानता है मोटरसाइकिल की आवाज़। नत्थू अन्दर कहीं खेत में था। मोटरसाइकिल की आवाज़ पहिचानकर वह खेत की मेंड़ पर चलकर इस तरफ़ लंगड़ाता हुआ आने लगा। आज जे घुटना भी तो भौतई पिरा रहा है।

पीछे आने वाली मोटरसाइकिल भी पंडिज्जी की गाड़ी के पास आकर रुक गई।

चौहान साहब थे। गाड़ी बन्द करके हँसने लगे चौहान साहब।

"बड़ी तेज गाड़ी भगाई पंडिज्जी?" चौहान साहब ने छेड़ते हुए कहा।

“तो अगर आप ठाकुर साब होते?” पंडिजी ने कहा।

"और किसकी हिम्मत है पंडिज्जी का पीछा करने की?" चौहान साहब और तेज़ हँसने लगे।

"पॉलागी पंडिज्जी..." चौहान साहब को जैसे याद आया कि अरे, ब्राह्मण महाराज को प्रणाम तो किया ही नहीं!

पंडिज्जी के दोनों हाथ आशीर्वाद मुद्रा में आटोमैटिक ही उठ गए।

पंडिज्जी भी मुस्कुराने लगे।

"और ठाकुर साब? कितें से चले आ रये?"

"बस मान लीजिए कि बाबा कोई पूरे दिन आपका पीछा कर रहा है।"

"मतलब?"

"हम भी दिन भर जज्जी में ही हते। आपको वहाँ देखा भी। आपको आवाज़ भी लगाई। आपको दो बार पाँलागी भी किया पर ...।"

"अरे, हम सुन न पाए होंगे ठाकुर साब।"

"कानून वाली आदत आपको भी पड़ रही है पंडिज्जी।"

"जी?"

"कानून भी कहाँ सुनता है? तभी तो वह बहरा कहाता है।"

"कानून तो अंधा कहाता है ठाकुर साहब, बहरा नहीं।"

"एकई बात मानिए। विकलांग ही तो कहाया न? वैसे, जज्जी में बड़ा तेज-तेज चले जा रहे थे आप?"

"कानून चाहे जित्ता भी घिसट के चले, मुवक्किल को तो तेज ही चलना पड़ता है, चौहान साब।"

"बड़ी ऊँची बात कह डाली पंडिज्जी।"

"कह तो दी पर जमाना ऊँची बातन का रह नहीं गया है।

आदमी को ऊँची बातें करने से बचना चाहिए आजकल।"

"जे तो अब आप और भी ऊँची बात कह गए पंडिज्जी।"

पंडिज्जी मुस्कुराए गो कि उनकी मुस्कान कहीं अँधेरे में ही बिला गई।

"आप जज्जी में, कैसे?" पंडिज्जी ने पूछा।

"आदमी जज्जी क्यों जाता है?"

"खैर, वो तो है। हमारा मतलब था, कौन-से केस में?" "अरे, वोई। आपको पता तो है। मोंड़ा तीन साल से जेल में बन्द है। मर्डर के केस में बड़े पापड़ बेलने पड़ते हैं पंडिज्जी। आज जज्जी में हम बेई पापड़ बेलने गए थे।"

"निकल आएँगे। कुँवर साहब ज्यादा दिन जेल में न रहेंगे।"

"निकाल तो हम लेंगे ही। एक खेत बेच चुके हैं। कैसे न निकलेंगे? जरूर निकलेंगे। हमें अपनी न्याय व्यवस्था पर पूरा विश्वास है।"

"हमें भी है। आदमी में खर्चा करबे की कूबत हो तो मन मुताबिक न्याय मिलबे की गारंटी है अपनी न्याय व्यवस्था में। और भला क्या चइए?"

"वैसे भरोसा तो हमें इस पर भी उत्ता ही है।" ठाकुर साहब ने अपने कुर्ते की जेब थपथपाते हुए कहा।

जेब में तमंचा है।

"एक खीसे में पैसा हो और एक जेब में तमंचा, बस", चौहान साहब ने कहा, "आपके पास जे दोनों चीजें हों तो आपको इस देश में न्याय जरूर ही जरूर मिलेगा।"

पंडिज्जी कुछ नहीं बोले।

"पैसे से बात न बन रही हो तो गवाह की कनपटी पे आप जे धर दो, बस; गवाह पूरे सुर में राधेश्याम रामायण गाने लगता है।" चौहान साहब ने तमंचे पर फिर से हाथ फेरा।

अब पंडिज्जी बोले, "वैसे भी, मर्डर न करते तो क्या करते कुँवरजी? अरे, खानदान की मान-मर्यादा पर आँच आए तो..."

"वोई तो..." चौहान साहब उत्साहित होकर बोले, "है ना

पंडिज्जी? मर्डर न करता तो बताइए, वो आखिर क्या करता? उसने हमारे खानदान की लाज रख ली। बिरादरी में नाक ऊँची कर दी।"

"सही बात..."

"...और छुप के नहीं, ऐलानिया मारा है। चाहता तो वो छुप के भी मार सकता था। है कि नहीं? तब आपका जे कानून हमारे मोंड़ा का घंट कुछ न कर पाता। सब जेई कहते रहते कि मर्डर की जाँच चल रही है। पर बेचारे ने ईमानदारी से ऐलानिया मारा तो देखिए इस कानून का अन्याय कि जरा से मर्डर पर इत्ता बवाल मचा डाला - बताइए? जे कहाँ का इंसाफ है कि मोंड़ा को तीन साल से जेल में बेंड़ के रखे हुए हैं स्साले?"

"ऐलानिया न मारता तो फिर ठाकुर काहे का? बताइए।" पंडिज्जी ने सहमति जताते हुए माना कि कानून को आदमी के ठाकुर होने की मजबूरी को भी समझना चाहिए।

"वही तो भाईसाहब, बात खानदान की इज्जत की बन गई थी। ऐलानिया मर्डर करना कित्ता जरूरी हो गया था, यह समझ सकते हैं आप। मोंड़ा ने पूरे इलाके को बता दिया कि अगर किसी ने ठाकुरों की मोंड़ी पर गलत निगाह डाली तो ठाकुर लोग उसे दौड़ा-दौड़ाकर मारेंगे। अब अगले दस सालों तक कोई हिम्मत नहीं करेगा कि..."

"... बिलकुल। ठाकुर की बेटी कुजात में ब्याव कर ले तो मर्डर तो करना ही पड़ेगा न भाईसाहब ? ऐसे में मर्डर किए बिना इज्जत वापस आती है क्या?" पंडिज्जी सहमत हैं कि चौहान साहब के सुपुत्र ने एकदम न्यायसंगत काम किया है।

"और अकेले उस लौंडे को तो टपकाया नहीं है, हमने अपनी मोंड़ी को भी तो गोली मारी कि नहीं? फिर? क्या हम अपनी मोंड़ी से प्यार नहीं करते थे? खूब करते थे। ऐसा विकट करते थे कि कोई क्या करेगा। हमाई आँखन का तारा हती वो। उसे कभी खरोंच भी लग जाए तो मूँ सूख जाता था हमारा। पर हम क्या करते? ... बिरादरी में मान-सम्मान तो सर्वोपरि होता है न पंडिज्जी। मानते हैं न?"

"बिलकुल।" "जेल जाबे के डर से क्या हम बैरी का मर्डर न करेंगे? तुमने हमारे मोंड़ा को जेल में बन्द कर दिया न? कर लो। जहाँ इत्ते मुकदमे लड़ रहे हैं, वहाँ एक जे भी लड़ लेंगे। है कि नहीं?"

"मुकदमों का क्या है, चलते रहते हैं।"

"पंडिज्जी, हमारे तो इत्ते मुकद्दमे चल रहे हैं कि पेशी पर पहुँचो तभी पता चलता है कि आज कौन-सा केस लगा है।"

"हमारा भी जेई है।"

"अरे, आपका तो कहना ही क्या!"

"पर इस केस से तो बड़े परेशान होंगे आप चौहान साहब?"

"भौत परेशान। परेशानी तो जरूरी भी है पंडिज्जी। अपना खून है आखिर। मोंड़ा जेल में हो तो एक कौर भी ठीक से गले के नीचे नहीं उतरता है पंडि पंडिज्जी। सच्ची।"

"वोई तो..." हूं

"... पर मामला सुलटने वाला है- जे मान लें।" "चलिए। जे अच्छा हुआ। फिर तो हमें जल्दी ही मिठाई खाबे को मिलेगी?"

"अकेले मिठाई से क्या होना है पंडिज्जी? कुँवर साब को एक बार जेल से तो निकलने दो, पूरे कोटरा में धूम मचा देंगे।"

"खैर, आपकी तो शान ही निराली है चौहान साहब।"

"और आप? आप कौन-सी पेशी पे गए थे?"

"अरे वोई, पंचायत की जमीन वाला मामला।"

"निबटा नहीं अभी तक?"

"निबट तो कब का जाता। हमने ऊपर तक के अफसर, सब सेट कर रखे हैं परन्तु पंचायत पे कब्जा है स्साले इन अहीरों का। बाँभनों के खिलाफ एटमोस्फियर बना रखा है लोकल पंचायत में। हमारे तो पीछे ही लग गए हैं स्साले। रोज नए आदमी से शिकायत लगवाते हैं कि पंडिज्जी ने कब्रिस्तान की जमीन चाँप के गोदाम बना लिया है। हम अपने गोदाम में एक पत्थर भी लगवाएँ तो स्साले पहुँच जाते हैं कलेक्टर के पास।"

"पता है हमें।"

"अच्छा, आप खुद बताएँ, जे कोई इंसाफ है भला? पूरे कोटरा में कुल मिलाकर पाँच तो मुसलमान फैमिली हैं, बस, और पंचायत ने उन्हें इत्ता बड़ा मैदान पकड़ा दिया है कब्रिस्तान के लिए। जे सारे के सारे मुसल्टे, सौ साल तक, पाँच-पाँच बार भी मरें तो भी आधी जमीन खाली पड़ी रह जाए।"

"सही बात।"

"पर इन यादवों ने कटुओं को भड़का रखा है। सब पालिटिक्स है, बस। कोटरा में म्लेच्छों और यादवों का गठजोड़ बन गया है। मुसलमानों से शिकायत करवाते रहते हैं कि पंडिज्जी ने कब्रिस्तान पे कब्जा कर लिया है। बताइए! कित्ती बदमाशी है।"

"अच्छा, जे स्साले मुसल्टे भी नीच जात वालों से मिल गए हैं? क्यों?" चौहान साहब राजनीति समझने में कमज़ोर हैं।

"वही तो ठाकुर साहब। यादवों की शह मिली हुई है स्सालों को। ... वर्ना, इत्ता बड़ा कब्रिस्तान ! फालतू पड़ी है सारी जमीन। हमने अगर एक कोने में छोटा-सा गोदाम खेंच भी दिया तो स्साला कौन-सा तुम्हारे मुर्दों को डिस्टर्ब कर दिया, बताइए?"

"पालिटिक्स है वर्ना तो सरकारी जमीन है, पंडिज्जी नहीं चाँपते तो कोई और चाँपता। कोई तो चाँपेगा ही। है कि नहीं?"

"वोई तो। पर बवाल मचा दिया है हरामियों ने कि पंडिज्जी कब्रिस्तान की ज़मीन को चाँप लिए हैं।"

"खैर, केस ऐसा है कि घंट कुछ न होगा।"

"वकील साहब भी जेई कहते हैं।"

"आपके वकील कौन हैं?"

"अच्छे हैं पर ढीले हैं तनिक..."

"... कौन, अपने रमेश बाबू?"

"हओ, बेई।"

"आपने ढीले बोला और हम तुरत जान गए।"

"काम में बड़े चुस्त हैं पर दिखते ऐसे ढीले हैं कि नीचे से पाना लगा के उन्हें टाइट करने का मन हो जाता है। देखा तो होगा आपने?... धज ऐसी कि पूरी पर्सनैलिटी तिड़ी-बितार। कमीज गुच्चड़-मुच्चड़, बेल्ट का बक्सुआ लटक रहा है, पैंट ऐसी अंड-बंड निबक रही है कि कब एकदम पूरी निबक जाएगी पता नहीं चलता। कोर्ट में बोलते भी जाते हैं, साथ में पैंट भी ऊपर को खेंचते जाते हैं। एक बार तो जज साहब ने सीधे ही पूछ लिया कि रमेश बाबू, नीचे कछू अंडरवियर, लंगोट-फंगोट डाले हो कि नहीं क्योंकि इतें कोर्ट में औरतें भी मौजूद हैं। सच्ची!"

चौहान साहब हँसने लगे।

"हमने तो भाई साहब, उनको सलाह दी थी कि आप गैलस वाली पैंट पहिना करिए, बक्सुआ और गैलस लगी हुई; जैसी वो अपना प्राण पहिनता था न फिल्मों में, वैसी।"

"फिर?"

"वकील साहब कहने लगे कि हमारी तो ढीली पैंट ही बढ़िया है। हम इसे टाइट कर लेंगे तो हमारी वकालत पर बुरा असर पड़ेगा।"

"वकालत पे? बुरा असर?"

"हओ! बताने लगे कि अगर बीच-बीच में हमारी पैंट न निबके तो हम तो बहस के पाइंट ही भूल जाते हैं। बहस करते हुए पैंट खेंचबे की आदत-सी बन गई है हमारी।"

"बताते हैं कि मुकदमा बढ़ाबे में बड़े माहिर वकील हैं वे?"

"जे तो है। मुकदमा लटकाने के भौत बड़े एक्सपर्ट माने जाते हैं वे। केस को सालों तक लटका सकते हैं। हर पेशी पर कोई नया पाइंट निकाल लाते हैं और मी लार्ड से नई तारीख माँग लेते हैं। इस केस में हमें ऐसई वकील चइए था। अब वे हर पेशी को अगली सुनवाई के लिए टलवा देते हैं, नई तारीख ले लेते हैं। अभी हम वोई तो ले के

चले आ रहे हैं। अदालत ने तो आज जे तक कह दिया कि वकील साब, आप ही इस मामले के निबटारे में इंटरेस्टेड नहीं लग रहे।"

"फिर? जे क्या बोले?"

"जे तो भावुक होकर वहीं पर रोने टाइप लगे। बोले कि ऐसा न कहें मी लार्ड। बीस साल से कानून की प्रैक्टिस में हूँ। कभी ऐसा लांछन नहीं लगा है हम पर, ऐसा बोलकर वे एकदम ढीले होकर कुर्सी पर बैठ गए। ऐसे ढीले हुए कि लगा, अभी लस्टम-पस्टम हो के कुर्सी से नीचे गिर जाएँगे। जज घबरा गया बेचारा। बोला कि हमने आप पर कोई लांछन नहीं लगाया है, बस, ऐसेई बोला है। ... बड़ी देर तक समझाते रहे उन्हें। उनकी माँगी लम्बी तारीख भी दे दी। ... ऐसे हैं अपने रमेश बाबू।" पंडिज्जी ने मज़े लेकर किस्सा सुनाया।

सुनाते-सुनाते वे खेत की तरफ़ भी देखते जा रहे थे। नत्थू क्यों नहीं आ रहा? उसने मोटरसाइकिल की आवाज नहीं सुनी है है क्या?

"नत्थूऽऽ!" तेज आवाज़ दी उन्होंने।

दूर से तुरन्त आवाज़ आई, "आया मालिक।" चौहान साहब भी खेत तरफ़ ही देख रहे थे।

"मटर बढ़िया निकली है पंडिज्जी।"

"भौत बढ़िया। अच्छे दाने आए हैं। अभी हम इन दानों को सुखा रहे हैं। फसल सूख जाएगी तो कलकत्ते वाला मारवाड़ी सेठ आ के हमारी सारी मटर एकमुश्त ले जाएगा। बस, अपना टंटा खत्म।"

"और स्कूल का सब ठीक चल रहा है? उसमें तो साल भर मीठे दाने भरे रहते हैं।" कहकर हँसने लगे चौहान साहब ताकि माना जाए कि बात मज़ाक में कही जा रही है।

"काहे के मीठे दाने भाई साहब! मान लें कि आजकल तो बस खाली फल्लियाँ लटकी हैं वहाँ। हाँ, इससे खेत जरूर भरा-भरा लगता है। स्कूल चलाबे में अब वो पहले वाली बात नहीं रह गई है।"

"ऐसा?"

"और क्या! शिक्षा के खेल में अब वे मीठे दाने वाले दिन नहीं रह गए भाई साहब। अफसर लोग आजकल कुछ

ज्यादा ही नियम-कायदे बताने लगे हैं।"

"तो पैसा मारिए न उनके मुँह पर?"

"मारने के बाद की बात आपको बता रहे हैं आपको।"

"ऐसा है तो हमको बताइए न? किसी अफसर की ठुकाई, उकाई लगानी हो तो हमें कहें।"

"कभी ऐसा लगेगा तब आपको ही तो बताएँगे।"

"परीक्षा के टेम पे तमंचा ले के आदमियों को स्कूल में खड़ा कर देंगे।"

"इत्ता तो आप हर दफे करा ही देते हैं।"

"आप तो ऐसे अड़ियल अफसर की फोटू भर हमें दे दें। सारी अफसरी निकाल देंगे स्साले की। तमंचा धर देंगे कनपटी पर तो सब नियम-कायदे भूल जाएगा।"

"उसकी जरूरत न पड़ेगी ठाकुर साहब। पैसे से बड़ा हथियार कौन-सा है? हम तो बस वही आजमाते हैं।"

"अच्छा, एक बात बताइए। मन है? ... तमंचा खरीदेंगे? भौत बढ़िया चीज मिल रही है।"

"तमंचा हमें रास नहीं आता ठाकुर साहब। हमने जीवन भर अपनी जबान से ही काम चलाया है।"

"फिर भी। जहाँ जबान फेल हो जाए वहाँ तमंचा ही काम आता है। इसे चलाइएगा मत, बस, अपनी जेब में धरे रहिए। दुनिया को दिखता भर रहे कि जेब में तमंचा धरा है; फिर जमाना आटोमेटिक आपकी इज्जत करता है।"

"ऐसी इज्जत तो बस ठाकुरों पे ही सजती है भाई साहब।"

"जे भी ठीक कही आपने। वैसे भी, आपका तो बस बाँभन होना ही काफी है। बाँभन होना भी किसी तमंचे से कम चीज नहीं होती है भाई साहब। बाँभन होना भी एक हथियार है।" चौहान साहब हँसने लगे।

"कभी ऐसा भी होता था भाई साहब। आप सही कह रहे हैं। कभी ऐसा भी था। पर आजकल तो बाँभन होना एक लानत ज्यादा है। कोई टके गज भी नहीं पूछता। अब

देखिए न, जे नत्थू। ... हम कब से बुला रये हैं इसे? आया क्या? नहीं आया न? फिर? जमाना स्साला, बाँभनों की सुनबे को राजी ही नही हैं।" पंडिज्जी ने कहा।

चौहान साहब मुस्कुरा दिये।

"तो हम चलें?" चौहान साहब ने मोटरसाइकिल स्टार्ट की।

रोशनी का दायरा और उससे परावर्तित प्रकाश आस-पास फैल गया। खेत साफ़ नज़र आने लगा।

"और हम जरा इस नत्थू को तो देखें। सब ठीक-ठाक है कि..." पंडिज्जी खेत की मेंड़ पर उतर गए। उन्होंने फोन वाली टार्च जला ली और चल दिये।

"अँधेरा है। देखभाल के जाइएगा।" चौहान साहब ने जाते-जाते कहा।

"चिन्ता न करें।" पंडिज्जी मेंड़ पर चलने लगे।

“साँप-बिच्छू का इलाका।” मिस्टर चौहान गाड़ी बढ़ाने वाले हैं। बाबा वीर का इलाका हहै, चाहन साहिब

"ठाकुर साहब, हमारा नत्थू रात भर यहीं मेंड़ पर बनी झुपड़िया में सोता है। उसे तो कभी किसी ने नहीं काटा।"

"हम उसकी नहीं, आपकी बात कह रहे हैं। इन लोगों को वैसे भी फर्क नहीं पड़ता। इनका क्या है? आज मरे, कल दूसरा दिन।" कहकर मोटरसाइकिल बढ़ा दी चौहान साहब ने।

जाती हुई गाड़ी की लाल बत्ती दूर तलक दिखती रही। पंडिज्जी अँधेरे में धीमे-धीमे बिलाती हुई बत्ती को देखते खड़े रहे। तब तक नत्थू भी मुंडेर पर लंगड़ाता हुआ आता दिखा। वैसे तो वह हमेशा लंगड़ाता है पर अभी वह कुछ ज़्यादा ही लंगड़ा रहा है।

"काँटा गड़ गया था मालिक।" नत्थू ने लंगड़ाने तथा विलम्ब से आने का स्पष्टीकरण एक साथ दिया।

"काँटा ही है कि कछू और था? किसी कीड़े ने तो नहीं काट लिया? इतें साँप, बिच्छू भी बड़े घूमते हैं; ठीक से देख तो लिया था?"

"अँधेरे में क्या दिखेगा मालिक?"

"फिर? मान लो, साँप ने ही काटा हो, तो?" पंडिज्जी को ठाकुर साहब की बात याद आ गई।

"महाराज, गरीबी के जहर के आगे साँप बिच्छू का जहर फेल है।" नत्थू ने कहा।

पंडिज्जी ज़ोर से हँसने लगे।

"आजकल बड़ी ऊँची-ऊँची बातें बोलने लगा है रे तू नत्थू! कम्यूनिस्ट बनबे का इरादा तो नहीं है। क्यों?"

कहकर नत्थू के मुँह पर अपनी टार्च की रोशनी मारी पंडिज्जी ने।

दाँत दिखा दिये नत्थू ने।

हमारा तारा ही क्यों टूटता है?

एकाध महीने में मटर तैयार हो जाएगी।

कलकत्ता का सेठ आकर पूरी मटर ले जाएगा।

फिर खेत खाली, और नत्थू भी। रबी का मौसम गया। जब खरीफ की फसल का मौका बनेगा तो पंडिज्जी नत्थू को वापस बुला लेंगे। तब तक, नत्थू बेरोज़गार। मटर की फसल की मजूरी में जित्ता मिलेगा, उसी से बेरोज़गारी के दिनों की ज़िंदगी का ठाठ जमाया जाएगा। घर में बुढ़िया है। दो नाती हैं। भरी-पूरी गृहस्थी है। छोटी-सी झुपड़िया है। एक बकरी पाल रखी है। सबके पेट हैं। भूख है। दरिद्रता है। लानत है। और सब इसी झोंपड़ी में साथ-साथ रहते हैं। ईश्वर तो है ही। वह भी साथ है। ... नत्थू ने पूरा जीवन इसी ईश्वर के सहारे काट लिया। बेरोज़गारी, गरीबी, भूख, मुसीबत, अकारथ मेहनत, घबराता नहीं वह इन सबसे। घबराने से होना भी क्या है? और वह ऐसा कोई अकेला और अनोखा तो है नहीं? दुनिया उसके जैसों से अटी पड़ी है। सब जी रहे हैं न? सब अभी और इसी पल में जी रहे हैं। कल की सोचें भी कैसे? जानते हैं और मानते भी हैं कि भगवान ने उनके लिए कोई कल बनाया ही
नहीं। हर आज के दिन ही रोज़ उनका नया कल बनता है। घबराने से क्या हो जाना है? अभी से कल की सोचने बैठ जाएँ तो घबराहट में आज ही मर जाएँ! खूब जानते हैं कि कल कुछ ऐसा खूबसूरत नहीं हो जाने वाला। बस, कल अगर आज से थोड़ा और खराब न हुआ तो वह खूबसूरत ही कहाएगा। कल का और खराब न होना ही उसका अच्छा होना है। ... कल भी थोड़ी-सी रोटी का इंतज़ाम हो जाए तो मान लेंगे कि यह

वाला कल तो भौत बढ़िया रहा यार! और, जो रोटी न मिली तो? वो भी ऐसी कोई बड़ी बात नहीं। भूखे सो लेंगे। हो जाता है ऐसा। पहले भी कई बार सो चुके हैं। कितनी ही बार। अब तो आदत-सी है। ... रोटी की आशा में ही नींद आ जाती है कि कल तो ज़रूर मिलेगी। ईश्वर ऐसा भी निष्ठुर नहीं। वह दे ही देता है। वह दयालु है। कृपालु है। जीने नहीं देता तो मरने भी तो नहीं देता। रोटी मिल ही जाती है। एक टेम की तो वह दिलवा ही देता है। कहीं न कहीं से इंतज़ाम हो ही जाता है। दो दाने उसके नाम के भी बनाता ही है भगवान। ... भगवान पर अगाध विश्वास है बूढ़े का। इस दुनिया में पत्ता भी उस परमपिता की मर्जी के बिना नहीं खड़क सकता। सब वही तो कराता है। उसी ने हमें गरीब पैदा किया है। उसी के द्वारा तय किया गया भवितव्य है हमारा कि हम गरीब ही मरेंगे। अब इसमें कोई क्या कर सकता है? हाथ की लकीरें हैं। इनको बदल तो सकते नहीं न? कपाल पे लिखा लेख है यह तो। इसे मिटा तो सकते नहीं। तुलसी बब्बा बता गए हैं, 'जाहि बिधि राखे राम, ताहि बिधि रहिए', सो रह रहे हैं।

वैसे, नत्थू का बेटा ज़रूर खूब हाथ-पाँव मारता रहता है। कहता है कि उसे इस दरिद्रता से छुटकारा पाना ही है। खूब काम करता है वह। उसकी बहू भी काम में लगी रहती है। बच्चे दादा-दादी के पास रख छोड़े हैं। बस, एक बेटा ख़ुद के साथ छतरपुर में रखा हुआ है। वहाँ के कान्वेंट स्कूल में डाल रखा है। पढ़-लिख जाएगा तो जिनगी बन जाएगी उसकी। बच्चों का जीवन सँवर जाए, इसी के लिए लगा रहता है किसी न किसी काम में, हरदम, छतरपुर में, बहू के साथ।

पल्लेदारी, साइकिल रिक्शा, ईंटों का भट्टा, दुकान पे मजूरी; जो मिल जाए। ... बहू घरों में झाड़ू-पोंछा, बर्तन-भाँडे में लगी रहती है। ख़ूब काम। दिन-रात। दोनों कमाते भी हैं।

बूढ़ा उसे समझाता है कि यह भागदौड़ निरर्थक है, दुनिया में तो सब ऐसेई चलेगा, और जे तो राजा रामचंद्रजी के जमाने से चला आ रहा है। गरीब को गरीब जैसा रहना है, यह तय है। तुम चाहो तो कोशिश कर लो। करो। खूब कोशिश करो। खूब काम करो। परन्तु देखना, तुम्हारे पास जब तक चार पैसे आएँगे तब तक दुनिया के पास पचास पैसे आ जाएँगे। तुम गरीब ही बने रहोगे। यही दुनिया है। यही चलता लता है। यही चलना है। यही चलेगा।

विचारमग्न बैठा हुआ है नत्थू।

शाम गई। रात हो चली। सामने की सड़क के मज़दूर काम बन्द करके घर को निकल गए।

अभी इसी सड़क किनारे मेंड़ पर उकड़ू बैठा हुआ है बूढ़ा।

सड़क पर गोधूलि की आवाजाही के आखिरी दस्ते जा रहे हैं। गाएँ। गाड़ियाँ। साइकिल । पैदल। मोटरसाइकिल। सबको निस्पृह भाव से देख रहा है नत्थू। उसके हाथ में चिलम है। चिलम सुलगाने की प्रक्रिया में व्यस्त है नत्थू।

चिलम सुलगाने के अपने नियम तथा परम्पराएँ हैं। पी रहे हों, और कोई वहाँ से निकले तो उसे चिलम के लिए आमंत्रित करने का नियम है। जात-बिरादरी का निकला तो वह साथ बैठ जाएगा, पी लेगा। हाँ, बड़ी जाति वाले, बड़े लोग-उन्हें कभी भूल के भी चिलम के लिए नहीं पूछना है। उनसे तो बस दूर से हाथ जोड़कर नमस्कार करेंगे। वो भी चिलम को तुरन्त ही जमीन पर धर के। उन्हें आमंत्रित करबे की कभी सोच भी नहीं सकते। जूता खा जाएँगे। लात-घूंसा हो जाएगा।

नत्थू की चिलम सुलग गई है।

एक लम्बा कश मारा बूढ़े ने। अपनी एक पूरी श्वास ही समर्पित कर दी चिलम को। सस्ती तंबाकू सुलग उठी। गहरा कश लिया तो उसे खाँसी आ गई। फिर वह आती ही चली गई। अच्छा है कि बुढ़िया झोंपड़ी में है। रात को ही खाना पहुँचाने आएगी। अभी होती तो गरियाती। कहती कि काहे चिलम में प्राण दिये दे रहे हो? छोड़ते काहे नहीं इस नासपीटी को। ... खाँसता रहा वह। देर तक खों-खों चली। खाँस खाँस के माथा ठनक गया, चक्कर से आ गए। फिर ढेर-सा बलगम थूक दिया उसने ज़मीन पर।

सुलगी हुई चिलम हाथ में लिए वह अपनी सांस को स्थिर करता रहा, देर तक।

इसी बीच सड़क पर लोग आ-जा रहे हैं।

तभी, बिरादरी का एक बूढ़ा सामने से निकला। बकरियों का झुंड हाँकते हुए। साथ में एक दुबला-पतला, लगभग नंग-धड़ंग किशोर । नत्थू ने बूढ़े को तुरन्त ही चिलम के लिए आमंत्रित कर लिया।

बिरादरी के बूढ़े ने साथ चलते हुए किशोर से कहा कि तू बकरियाँ ले के घर पहुँच, हम जरा आते हैं। यह भी कहा कि रस्ते में तू कहीं खेलबे न लग जाना रे। किशोर ने जाते-जाते कहा कि हम अभी घर जा के सब बता देंगे दादी को कि तुम चिलम पीबे रुक गए हो। बूढ़े ने 'भग भैंचो' कहकर बालक पर लाड़ जताया।

अब दोनों बूढ़े चिलम फूंकने लगे। ... और बातें चल पड़ीं।

चिलम पियो तो नशे के साथ छोटे-छोटे सपने जागने लगते हैं आँखों में। पर इनके तो सपने भी ऐसे दरिद्र कि आपको क्या बताएँ? गरीब आदमी सपने भी इतने छोटे देखता है कि आप जैसा आदमी तो उसे सपना कहने में भी शर्मिन्दा महसूस करे कि स्साला, यह भी कोई सपना है! यार, कम से कम सपना तो ठीक-ठाक देखा करो। ... पर

इनका तो यही है साहब। एक ठीक-सा सपना देखने की भी तमीज और ताब इन्हें नहीं है।

देखिए न कि नत्थू अभी अपना कौन-सा सपना उस बूढ़े के साथ साझा कर रहा है!

नत्थू का सपना है, बल्कि दो सपने हैं। ... एक तो यह कि इस साल वह एक और बकरी खरीद ले। ... और दूसरा सपना? वो यह कि अभी जो बकरी उसके पास है, उसका गर्भाधान सफल हो जाए, उसके दो बच्चे हो जाएँ। बकरा हो तो उसे बेच दें, और कहीं बकरियाँ हो जाएँ तो घर में चार बकरियाँ हो जाएँगी। बकरी का दूध कहीं बिकता नहीं। एक तरह की हींक-सी आती है उससे। खोया उससे बनता नहीं। पर घर में दूध होगा तो दोनों पोते पिएँगे, उनके शरीर को लगेगा। बच्चों का बढ़ने वाला शरीर है। हमारा क्या है? बच्चे पिएँगे तो बढ़ेंगे, हम पिएँगे तो मूत बन के कढ़ जाएगा शरीर से। इस बार मटर की मजूरी से जो पैसा आएगा, उससे एक बकरी जरूर खरीदी जाएगी।

इसी सपने की बात सुना रहा है नत्थू।

दोनों सुरूर में हैं। एक बूढ़ा अपना सपना बताने की धुन में है, दूसरा उस सपने की पड़ताल करने में।

बातें कुछ यूँ चलीं :

"और सगे?" बूढ़े ने कहा।

"अच्छो चल रओ है सब।" नत्थू बोला।

"भौत खाँस रये-दमा हो गओ का?"

"वोई समझो। वैदजी कह रहे थे कि जे तुमाई दमा वाली खाँसी है; अब देह के साथ ही जाएगी जे। खाँसी की तो खैर भली चलाई, पर असल चीज तो जे स्साले घुटने हैं; बड़ो परेशान कर रये हैं।" नत्थू ने बताया।

"सूज गए का?"

"सूजे तो हैं। खूब पिराते भी हैं। अन्दर से कट-कट की आवाज करते हैं। मुड़त ई नईंया। और जो सीधे करबे की कोशिश करें तो प्राण ही कढ़ जाते हैं।" नत्थू ने बताया।

"अकऊवा के पत्ता गरम करके अपने घुटना पे बाँध लो। महीना भर में ही जे तुम्हारा

दर्द छू-मंतर न हो जाए तो बोलियो। सच्ची। एकदम शर्तिया इलाज है।"

"घंट शर्तिया है।"

"क्या?"

"तुम महीना की के रये, हम तीन महीना बाँध के देख चुके।"

"अरे!"

"हमने तो बैदक भी खूब करा लई। कछू नहीं भओ। मामला और बिगड़ई गओ है। अब तो हमने मान लई है कि जे सब भगवान की मरजी है। मरबे के बाद ऐसेई लंगड़ाते हुए जाना पड़ेगा उसके दरबार में। परम पिता शायद जेई कहना चाहता है कि तुम जिनगी में भौत दौड़, भाग लिए, अब बैठ जाओ।"

"तो बैठ जाओ न? छोड़ो सब भाग-दौड़ । फिर भगवान की ही बात मानो न?"

"पर बैठें कैसे? भगवान की बात मानबे का मन तो हमारा भी भौत होता है। बुढ़ापे का शरीर है। अढ़सठ के हो गए हैं हम। बात तो बड़ी अच्छी कह रहा है भगवान पर वो हमें जे नहीं बताता कि घर बैठ गए तो हमें रोटी कौन देगा?" नत्थू ने कहा।

चिलम अब दूसरे बूढ़े के हाथ में है।

दो गहरे कश खींचकर चिलम वापस करते हुए बूढ़ा हँसने लगा।

हँसते हुए बोला, "भगवान ही खिलाएगा। हमारे पंडितजी तो जेई बताते हैं।"

"बे अपने बारे में बोल रहे होंगे। पंडितों को तो भगवान बैठे-बैठे भी खिला देता है। हमाऐ लाने ऐसा कोई इंतजाम नहीं किया है भगवान ने।"

"जब भगवान उनका इत्ता बड़ा पेट बैठे-बैठे भर देता है तो हमारा पेट तो स्साला इत्ता-सा है; इसकी तरफ भगवान काहे नहीं देखता?"

चिलम को हाथ में लिए चिलम को ही देख रहा है, नत्थू।

नत्थू हँसने लगा।

"इसी के लिए तो भगवान ने जे चिलम बनाई है। जे भी उसका ही एक तरीका है। भगवान ने कुछ लोगों का पेट भरबे का इंतजाम किया है, और बाकी के लिए पेट की

भूख को भुलाने का। जिसकी किस्मत में जो आ गया, मानना पड़ता है। तो हमारे लिए जे चिलम बना दई ईश्वर ने। पियो और सब भूल जाओ।"

मानो ईश्वर का पवित्र आदेश हो, इस भावना के साथ चिलम खींचने लगा नत्थू ।

हवा का एक झोंका उठा और आकाश में बिला गया।

अचानक ही बूढ़े ने पूछ लिया, "इतें को तुमाओ काम तो अब खतम हो रओ है?"

"बस, जेई महिना की बात मान लो..."

"फिर?"

"फिर क्या? बस, फिर फालतू हैं। जो काम मिलेगा, करेंगे।"

"अगले महीने चार शादियाँ हैं।"

"तो?"

"बारातें लगेगी। बन्ने मियाँ की लाइटें चलेंगी हर बारात के संग। उन्हें लाइट ढोबे वाले चइए। सिर पे बत्ती धर के चलना पड़ेगा। बोलो, चल पाओगे?"

"काहे न चलेंगे?"

"तुमाओ घुटना खराब है न?"

"पर पेट भी तो लगा है? पेट हमारे घुटना के ऊपर है कि नीचे? पेट के लाने हम इन घुटनों पर भी चल लेंगे। खूब चलेंगे। ऐन ठाठ से चल लेंगे भैया। दस पन्द्रह बारातों में हम पहले भी लाइटें उठा चुके हैं। उठा लेंगे। कौन-सा उतें भौत तेज-तेज भागना है? बारात चलती है जनवासे की चाल से। उत्ता तो हम चल लेंगे।"

"पर याद रखियो, आजकल की बारात में लौंडा लोग दारू पी के खूब हुड़दंग करते हैं स्साले। भौत नाच-गाना करते हैं। बारात में इनसे बचके चलना पड़ता है।"

"हम जानते हैं। ऐसेई एक बार धक्का खा के हम गिर भी चुके हैं, ऐसेई एक बारात में। तभी तो जे घुटना चोट खा गओ हतो।"

"बस, तब ठीक है।"

"तो फिर हमारा नाम बन्ने मियाँ को नोट करा दइयो। हम जरूर चलेंगे।" नत्थू ने कहा।

अँधेरा बढ़ रहा है। चिलम में माल बाकी है अभी। सुरूर हो चला है। सपने तैरने लगे हैं। बड़े कश और छोटे सपने।

"हमें एक अच्छी-सी बकरी खरीदबा दो सगे।"

"खरीदबा देंगे। पर बकरी को पालना है स्साला दलिद्दर का काम। तुम गाय काहे नहीं पालते?" बूढ़े ने सुझाव दिया।

"कहो तो हम हाथी पाल लें?" कहकर नत्थू हँसने लगा।

"हाथी की किसने कही?" बूढ़ा बुरा मान गया।

"गाय..."

"... गाय पाल लोगे तो जान लो कि रोज की कमाई का इंतजाम हो गया। समझे कि नहीं? पाँच-छह लीटर दूध तो रोज का निकलेगा ही। बढ़िया बेचो । जो बचे, उसका खोआ बना लो। कालपी से एजेंट आ के खुदई घर से खोआ उठाकर ले जाएगा।"

"इत्ता बड़ा सपना न दिखाओ सगे। गाय की सेवा-टहल जानते हो न? तीन टेम तो उसे तसला भर के भूसा, और साथ में इत्ती सारी सानी। जे सब खिलाओ तब तो वो दूध दे। हम कहाँ से इसका इंतजाम करेंगे? अपनी तो भैया, बकरी ही भली। जे हमसे कछू नई माँगती। कितऊँ भी चर लेती है। साल में दो बार ब्याएगी। हर बार दो बच्चा देगी।"

"ऐन लम्बी सोच रखी है, क्यों सगे?"

"तुम तो हमें बस एक बकरी दिला दो।"

"बकरी का क्या है, जब कहोगे तब मिल जेहे। बस, ढाई हजार नगद लग जेहें।"

"इत्ती रकम?"

"इत्ते पैसे न पुसाते हों तो कहीं से चोरी करके बकरी उठा लाओ; एक पैसा भी न लगेगा।"

"कैसी बात करते हो सगे?"

"हमने कौन-सी गलत बात कही? अरे, बकरी उठाबे में कौन-सी बुराई है? लोग उठाते हैं। हाँ, उठाना है तो दूसरे गाँव से ही उठइयो। इतें सब लोग अपनी-अपनी बकरी

पहचानते हैं। बकरी भी मालिक की आवाज जानती है।"

"चोरी की बात हमें न सिखाओ सगे। चोरी करके कौन-से हमें महल खड़े करने हैं?"

"बकरी चोरी से वैसे भी कोई महल खड़े नहीं होने वाले हैं भैया। महल खड़े करबे वाली चोरियाँ दूसरी होती हैं। बे हमारे-तुमारे बस की नहीं हैं।"

"भैया, चोरी का दूध नहीं पिलाना है नाती-पोतों को। इत्ती-सी उमर में गलत संस्कार डाल दिये तो फिर बड़े होकर चोरी-चकारी ही करेंगे, और क्या?" नत्थू ने चिलम बूढ़े को थमाते हुए कहा।

"जे बात तो तुमने एकदम सही कही भइया। आदमी को धरम के मार्ग से नहीं डिगना चाहिए।" बूढ़ा बोला।

"भगवान हमारे दिल में बैठ के हमारे सब कर्म लिखता रहता है। सबका हिसाब रखता है वो। जेई करमों का लेखा अगले जनम में काम आने वाला है।"

"सही बात।"

"जे जनम तो हमारा अकारथ गया। अब इस जनम में अगर भगवान ने हमारा सही-सही हिसाब दर्ज किया होगा तो शायद हमारा अगला जनम सुधर जाए।"

"काहे न सही दर्ज करेगा भाई? भगवान है आखिर।"

"है तो। भगवान तो है। हम भी मानते हैं पर डर भी लगा रहता है। वो है तो, पर वो हमारी तरफ भी कभी देखता है कि नहीं- जे बात ठीक से पता नहीं चलती।"

"काहे न देखता होगा?"

"बस, तो भगवान की हम पे इत्ती किरपा हो जाए कि हमें एक अच्छी-सी बकरी मिल जाए।"

"वो काम तो खैर हम ही कर देंगे। सस्ती दिला देंगे। बस, भगवान से जे बिनती कर लेना कि कोई तुमाई बकरी न चोरी कर ले।"

"अपनी एक बकरी पहले से ई है न हमारे पास, उसके लाने तो भगवान से जेई बिनती चलती ही रहती है हमारी।"

"रात में उसे झोंपड़ी में ही बन्द कर लिया करो न, बाहर बाँधो तो बदमाश लोग उठा ले

जाते हैं।"

"अन्दर इत्ती जगह कहाँ है? छोटी-सी तो झुपड़िया है। उसमें हम दो, बूढ़ा-बुढ़िया, और दो हमारे पोता। बीच-बीच में कभी बेटा बहू, नाते-रिश्ते वाले भी आ जाते हैं। बकरी के लाने जगह कहाँ है? अन्दर कहाँ धरेंगे?"

"शान्त प्राणी है। रात में जिधर धर दोगे, सुबे उतईं मिलेगी।"

"हमने तो अपनी बकरी पर महावर पोत दिया है। पेट पे निशानी भी बना दी है। टाँग पे, बुंदका छाप दये हैं। दूर से देख के ही पहिचान में आ जाती है।"

"जे तुमने सही काम किया।" बूढ़े ने चिलम खींची।

"खत्म हो गई, लगता है?" बूढ़े ने चिलम वापस देते हुए कहा।

नत्थू ने भी चिलम को जोर से खींचकर खत्म होने की तस्दीक की।

"सही बोल गए तुम सगे।" नत्थू ने चिलम का आखिरी बचा-खुचा कश खींचकर पटाक्षेप संवाद बोला।

"तो फिर हम चलें भइया?" अब और बैठने की तुक नहीं थी। बूढ़ा उठ गया।

कठिनाई से, टेढ़ा-मेढ़ा होता हुआ नत्थू भी उठा।

"हओ सगे, निकरो आप।" नत्थू ने अँधेरे में ही हाथ जोड़ दिये।

बूढ़ा धीरे-धीरे चलता हुआ निकल गया।

नत्थू बैठा रहा। रात हो गई थी। अब, बस अँधेरा ही अँधेरा था। सुरूर था। तारे थे। मटर की फसल थी। अकेलापन था।

नत्थू आसमान को ताकने लगा। क्या इनमें से कोई तारा उसका भी था? बचपन में, माँ दिखाया करती थी तारे। कहती थी कि तेरा वो वाला तारा है बेटा।

अभी वह वाला तारा दिखता क्यों नहीं?

अभी-अभी टूटकर ज़मीन तरफ़ गिरता हुआ जो तारा उसने देखा है, वह तारा उसी का तो नहीं था?

विकास अक्सर नत्थू को ही कुचलता है

लखनऊ वाले चाचाजी दो दिनों से कोटरा आए हुए हैं और कोटरा के विकास को देख-देखकर अशअश कर रहे हैं।

वे सालों बाद कोटरा आए हैं। कोटरा ही क्यों कहें, वे तो सालों बाद किसी भी देहात में आए हैं। वे हमेशा से देहात को दलिद्दर मानते रहे। गाँव की रिश्तेदारी में शादी और गमी में भी नहीं पहुँचते हैं वे कभी। झाँसी और मोंठ की एक शादी में ज़रूर सात साल पहले कभी एक बार पहुँचे थे।

चाचाजी एक रिटायर्ड सरकारी अधिकारी हैं। सारा जीवन लखनऊ के बड़े फ़िसों में बैठकर काट लिया। फिर वहीं मकान भी बनवा लिया। उनका एक बेटा बैंक में कुछ है। एक बेटा किशोरावस्था में है, बुढ़ापे की संतान। तीन बेटियाँ हो गईं, दोनों बेटों के बीच, पर वे आखिर तक एक और बेटे की कोशिश करते ही रहे। भगवान भी जान गए कि यह स्साला मानेगा नहीं। लगा रहेगा। रुकेगा नहीं। इस तरह भगवान की कृपा से एक संतान रिटायरमेंट से छह साल पहले हुई। अन्ततः पुत्र हो ही गया। चाचाजी का अश्वमेघ यज्ञ सम्पन्न हुआ। अब उनको रिटायर हुए भी बारह वर्ष होने को आए। बूढ़े हो गए हैं वे। कानों से ऊँचा सुनने लगे हैं। सामने के दाँत गिर गए हैं। प्रोस्टेट बढ़ गई है। बार-बार पेशाब लगती है। जल्दी से न जाओ तो कपड़े ख़राब होने का भय रहता है। वानप्रस्थ में दोनों पाँव उतर गए हैं पर उनका यह छोटा बेटा बड़ा होने का नाम ही नहीं ले रहा। लाड़-प्यार में वैसा तो नहीं बिगड़ा है पर सुधरने को अपनी बेइज़्ज़ती मानता है। दो बार इंटर में फेल हो गया तो चाचाजी को अचानक पंडिज्जी की याद आई। अपने सगे भतीजे के स्कूल से हज़ारों लोग फर्स्ट क्लास लेकर निकल रहे हैं और हम फालतू में यहाँ लखनऊ में ज़रा-सी बात पर परेशान हो रहे हैं?

पंडिज्जी उनके भतीजे ज़रूर रहे हैं पर ज़रा देहाती टाइप के हैं, जो चाचाजी के शहराती व्यक्तित्व को रास नहीं आता है। लखनऊ वाला शख़्स ऐसे रिश्तेदार से एक दूरी बनाकर ही तो मिलेगा न? सो पहले कभी किसी शादी-ब्याह में मिलते भी थे तो अफ़सर को शोभा देने वाली औपचारिकता को बीच में धर के ही पंडिज्जी से मिलते रहे थे। तब यह आइडिया ही नहीं था कि एक दिन इसी गावदी भतीजे से यूँ काम फँस

जाएगा। अभी भी कोटरा आते-आते भी उनकी आत्मा नाक-भौं सिकोड़ रही थी कि कहाँ दलिद्दर में जा रहे हो तुम? पर यहाँ सब कुछ वैसा देहाती भी नहीं निकला जिसकी आशंका थी। न तो पंडिज्जी ऐसे देहाती साबित हुए, न कोटरा ही वैसा देहात।

स्साला, यह तो बड़ी प्रोग्रेस कर गया है कोटरा। हम तो समझे थे कि...। यह बात वे दो दिनों से बार-बार कह रहे हैं और कई तरह से कह रहे हैं। दो दिनों के प्रवास में वे दसियों बार यह बात कह चुके हैं। अपोली उनकी इस बात को अब और बरदाश्त नहीं कर पा रहे हैं। कोटरा वालों को जे स्साले शहराती लोग ऐसा चूतिया क्यों समझते हैं?

सुपुत्र को पंडिज्जी के स्कूल से परीक्षा में बिठाने और बढ़िया नम्बरों से पास कराने की बात तय हो जाने के बाद तो चाचाजी अति आनन्द तथा विकट उत्साह से भर गए हैं। रोके नहीं रुक रहे। दो दिनों से पूरा कोटरा घूम रहे हैं। छोटा-सा तो कोटरा है। दो दिनों में तीन बार पूरा देख डाला। इसी बीच वे जहाँ से भी गुज़रे, आश्चर्यपूर्वक यही कहते रहे कि यार, यह तो बड़ा बंबास्टिक विकास हो गया है गाँव का ! वे अब तक गाँव का तात्पर्य झोंपड़े, कच्चे रास्ते, कुएँ का मैला पानी, नदी, गलियाँ, कीचड़, गोबर, गाय, बैल, मच्छर, कीड़े-मकोड़े और यहाँ-वहाँ बह रहा नालियों का पानी ही मानते रहे हैं। वे हैरान हैं कि गाँव की गलियाँ कंक्रीट की बन गई हैं। कुछ मकान तो पक्के भी दिख रहे हैं। कई तो हवेलीनुमा मकान तक हैं। एकाध चौराहा तो बड़ा ही बढ़िया बन गया है यार। इस चौराहे पर सोडियम वेपरलैंप तक लग गया है। कभी बिजली आ जाए तो यह जलता भी है। अब और क्या चाहिए? एक छोटी डिस्पेंसरी भी है। ठीक है कि वहाँ डाक्टर नहीं रहता है, तो भी क्या? बाज़ार में फलों की एक दुकान भी है जिसमें चीकू और चेरी का डिब्बा तक उन्हें दिखा है। ... यह तो कमाल है भाई। वे एक-एक चीज़ पर उछल-उछल जा रहे हैं। भई वाह, यहाँ तो जे भी है! अच्छा, जे भी है !! वाह भई, वाह!! दो दिनों से में कोई बार-बार हूँ 'वाह' 'वाह' कर रहे हैं मानो कोटरा स्वयं मुशायरा हो।

पंडिज्जी तो उनकी उम्र का और लखनऊ से आने का लिहाज करते हुए उनके बुढ़ापे को बरदाश्त कर रहे हैं परन्तु अपोली खासे कसमसाए जा रहे हैं। एक-दो बार, जब बुजुर्गवार थोड़ी दूरी पर खड़े थे, अपोली ने यह कसमसाहट पंडिज्जी से प्रकट भी की है।

"यार, आप खूब लखनऊ में रहो पर गाँव वालों को इत्ता चूतिया तो न मानो।" कल ही अपोली बुदबुदा रहे थे।

"क्यों? ऐसा क्या हो गया?" पंडिज्जी ने अनजान-सा बनते हुए पूछा।

"क्यों? क्या ऐसा कुछ नहीं लग रहा आपको? कल से इनको देख नहीं रहे हैं आप? जे महाराज लगातार परेशान हैं कि कोटरा की गलियाँ पक्की क्यों बन गईं, यहाँ लाइट के खंभे कैसे लग गए?"

"परेशान थोड़ेई हैं। बे तो खुश हो रहे हैं?"

"खुश नहीं हैं। अचरज कर रहे हैं। बड़े अचरज में हैं कि जे चीजें कोटरा में कैसे बन गईं? उनकी इच्छा है कि दुनिया में बस, लखनऊ ही चमके और कोटरा..."

"...ऐसा नहीं है बेटा। बुजुर्ग आदमी हैं। उन्होंने इत्ते साल बाद अब गाँव देखा है। पहले वाला गाँव उनकी याददाश्त और मन में है सो..."

"ऊँचा सुनते हैं वर्ना हम इन्हें अभी तक ठीक से समझा भी चुके होते। और कभी हमारे मन ने ठान ली न तो उनके मन की सारी उलझनें साफ कर देंगे हम। हमने भौत सुन ली है इनकी चूतियाई।"

"जे सब बिलकुल न करना। घर के बुजुर्ग हैं। नाती-पोता वाले आदमी हैं।"

"देखना, एकाध दिन घर के नाती-पोता लोग ही इनके मन के जाले साफ कर देंगे।"

"बे जो करें पर तुम कछू न बोल देना।"

"हम भी कल से जेई कोशिश कर रहे हैं कि हमें कुछ न बोलना पड़े।"

 "तो अपना मूँ बन्द ही रखना। वयोवृद्ध हैं। जो कहें, सुन लो।"

"वयोवृद्ध होबे का मतलब जे नहीं होता कि ..."

"... जो भी मतलब होता हो, तुम चुप रहना।"

तब तक चाचाजी को लगा कि पीछे कुछ खुसपुस चल रही है और शायद कोई बात उनके ही बारे में हो रही है।

" हमसे कुछ कहा क्या?" उन्होंने पूछा।

"पिताजी बोल रहे हैं कि मौसम बड़ा सुहाना है।" अपोली ने कहा।

पंडिज्जी ने घूरकर अपोली को देखा। अपोली मुस्का दिये।

"क्या है?" चाचाजी ने जानना चाहा।

"सुहाना है, सुहाना।"

"क्या चीज?"
"मौसम।"

"तो? मौसम का क्या?"

"खराब होबे की सम्भावना बन रही है।"

"क्या बन रही है?"

"गैस बन रही है। पेट खराब होबे की सम्भावना है।"

"क्या खराब?"

"दिमाग। दिमाग गड़बड़ कर रओ है।"

"क्या खड़खड़ा रहा है? तनिक ठीक से तो बोलो।"

"हमने कही कि आप ऐन स्मार्ट लग रहे हो।"

इस बात को उनने न केवल सुन लिया, खुश भी हुए। हँसकर बोले, "अब तो काहे के स्मार्ट..."

"... जो भी हो।"

"पर तुम बता रहे थे कि कछू खड़खड़ा रहा है?"

"वो तो हम अपनी मोटरसाइकिल की बता रहे थे।"

अपोली ने देखा कि पंडिज्जी का चेहरा गुस्से से लाल हुआ जा रहा है तो बात बदल दी।

तब तक चाचाजी ने पंडिज्जी का चेहरा देख लिया। वहाँ चेहरे पर तनाव और कुछ जब्त करने के भाव स्पष्ट हैं।

"तुम्हें क्या हुआ?" चाचाजी ने पंडिज्जी से पूछ लिया।

"दचका लग गया सड़क की गिट्टियन पे।" अपोली ने बताया।

"अरे!" यह भी सुन लिया चाचाजी ने।

पंडिज्जी ने गुस्से से अपोली को देखा।

"नीचे कछू चोट-वोट तो नहीं आई? हमारी गाड़ी एक दिन ऐसेई उचक गई थी। कानपुर-लखनऊ रोड पे। उछल के वापस नीचे की तरफ आए तो हमारा फोता पचक गया, नीचे। हम तो बिलबिला के लेट गए उतईं, सड़क पे, गाड़ी छोड़ के।" चाचाजी कभी अपने अंडकोषों के दबने की कथा बताने लगे।

"हम ठीक हैं।" पंडिज्जी ने कान में ज़ोर से बताया।

"इत्ता तेज न बोलो। कान एकदम बढ़िया हैं हमारे।" चाचाजी ने कहा।

***

आज सुबह-सुबह चाचाजी कहने लगे कि यार, तुमने अपना मटर का खेत तो हमें दिखाया ही नहीं। तय हुआ कि आज खेत पर चलेंगे। आगे अपोली, पीछे पंडिज्जी, बीच में चाचाजी। अभी तीनों जन मोटरसाइकिल पर वहीं जा रहे हैं। वयोवृद्ध को बीच में दबोच के चलो तो उसके गिरने का भय नहीं रहता।

गिट्टी पड़ी है बगल की पगडंडी पर। दचके तो हैं ही। गाड़ी भी बीच-बीच में आढ़ी-टेढ़ी हो रही है।

"ठीक से पकड़ के रखिएगा।" गाड़ी चलाते हुए अपोली ने कहा।

चाचाजी ने सुना ही नहीं। पंडिज्जी ने सुन लिया।

"ठीक बैठे हैं। हमने उन्हें पीछे से पकड़ रखा है।" पंडिज्जी बोले।

"बे एक तरफ को टेढ़े हो रहे हैं।" अपोली ने चेताया।

"सीधे हैं यार।" पंडिज्जी ने कहा।

"कुछ परेशानी?" चाचाजी ने पूछा।

"आप टेढ़े हो रहे हैं। ठीक से पकड़ लें।" अपोली ने गाड़ी चलाते हुए कहा।

"यार, तुम तो चलाते रहो। हम इनको पकड़े हैं न?" पंडिज्जी फिर बोले।

"देख लो। इनके चक्कर में दोनों ही न टपक जाना।" अपोली ने कहा।

"ऐसे कैसे?"

"जैसे कानपुर रोड पे इनके फोता पचक गए थे न, बस वैसे ही।" अपोली हँसते हुए गाड़ी चलाते गए।

चाचाजी खेत जाने के नाम से उत्साहित हैं।

'खेत' उनके लिए मात्र एक शब्द है, बस एक शब्द। यह शब्द सुनकर उनके मन में कोई भी गहन भाव नहीं उठता है। एक चित्र ज़रूर बनता है पर वह एकायामी-सा होता है। प्राण नहीं होते हैं उसमें। वे जीवनभर कभी खेत तो गए नहीं हैं। मेंड़ पर कभी चले नहीं। फसल के पास खड़े होकर उसका होना महसूस ही नहीं है किया कभी। लखनऊ में ही समस्त जीवन कट गया। खेत कहाँ से देखते? अफ़वाह न भी कहें पर खेत उन्हें एक कहानी किस्सा-सा ही लगता है, कि 'एक था खेत...।' फोटुवों में, यात्रा के दौरान, ट्रेन या बस की खिड़की से झाँकते हुए, या किसी फिल्म में कभी खेत देखा भी तो बस यह मानकर सरसरी तौर पर देखा कि हाँ यार, यह भी एक चीज़ होती है, बस। अब, गाँव आए हैं तो मन है कि ज़रा खेत में उतरकर भी देख ही लिया जाए। मटर तो जीवन भर खाई है, आज मटर का खेत भी देखा जाए - उत्साहित हैं चाचाजी।

अभी खेत की मेंड़ पर खड़े हुए हैं सब लोग।

ठीक सामने की तरफ़ बनता हुआ राजमार्ग है, और पीछे खेत।

आए थे खेत को देखने परन्तु बनते हुए राजमार्ग में उलझ गए चाचाजी। कोटरा के विकास पर वाह, वाह करने का सुनहरा पल एक बार फिर उनके सामने था।

"वाह!" चाचाजी ने बनती हुई फोरलेन रोड को देखते हुए कहा।

अपोली ने तुरन्त पंडिज्जी की तरफ़ शिकायती नज़र से देखा।

पंडिज्जी ने अपोली से आँखें मिलाए बगैर ही भाई साहब को बताया, "जे राजमार्ग निकल रहा है इतें से।"

"क्या निकल रहा है?" चाचाजी रोड को ही एकटक देखे जा रहे हैं।

"सूरज...। सूरज निकल रहा है।" अपोली ने जोर से कहा।

"वो तो सुबे ही निकल चुका है।" चाचाजी बोले।

"वोई तो; वो और भी निकलता ही चला जा रहा है।"

अपोली ने कहा।

"राजमार्ग, राजमार्ग निकल रहा है। जे अपने कानपुर को सीधे मऊरानीपुर से जोड़ देगा। फिर मऊ जाने वालों को झाँसी हो के नहीं जाना पड़ेगा।" पंडिज्जी ने ऊँची आवाज में बोल-बोलकर पूरी सूचना दी।

"राजमार्ग! वाह, भई वाह!" चाचाजी ने कहा। उन्होंने पूरे राजमार्ग को आगे-पीछे घूमकर दूर तक निहारा।

"यह तो कोटरा के लिए भौत ही बढ़िया चीज हो गई भाई। राजमार्ग ! वो भी तुमारे खेत से लग के निकल रहा है।

वाह। ... बढ़िया। निकलने दो। निकलने दो।"

चाचाजी ने अभिभूत मुद्रा में और आगे कहा।

"तो हम कौन-सा उसे रोक रहे हैं?" अपोली बोले।

चाचाजी ने सुना ही नहीं। पंडिज्जी ने अपोली को ज़ोर से घूरा। अपोली ने पंडिज्जी से आँख ही नहीं मिलाई।

"खेत में चलें?" पंडिज्जी ने पूछा।

चाचाजी ने कुछ सुना ही नहीं। अभी तो वे राजमार्ग में मग्न हैं। कोटरा के विकास पर फिर से अशअश करने को मचलने लगा है उनका दिल ।

"एकदम कानपुर-लखनऊ रोड टाइप शानदार रोड बनेगी जे भी, देख लेना। वाह भाई, कोटरा के तो ठाठ हो गए।"

"अब कोटरा का भी थोड़ा-थोड़ा विकास हो रहा है भैया।" पंडिज्जी ने अपोली से नज़रें चुराते हुए कहा।

"अरे, विकास नहीं, कमाल हो रहा है कोटरा में।" चाचाजी ने न केवल सुन लिया वरन बात को आगे भी बढ़ाया।

अपोली मुस्कुरा दिये।

"विकास हो रहा है। बताया न?" अपोली ने कहा।

चाचाजी ने यह भी सुन लिया।

"अरे भाई, भौत विकास हो रहा है तुम्हारे कोटरा का, भौत। तुम्हारी यह सड़क तो ऐसी चमाचम बनेगी, लखनऊ टाइप कि बस देखना। और यह तो तुम्हारे खेत से एकदम चिपक के ही निकल रही है। तुम्हारी यह जमीन तो मान लो कि सोना हो गई। वाह भई, वाह।" चाचाजी नाचने तो खैर नहीं लगे। मेंड़ पर नाच पाना सम्भव भी नहीं था। पर उनकी मुद्रा में नृत्य की वही लय और उत्साह था।

पंडिज्जी ने फिर एक बार इशारा किया कि खेत में अन्दर चला जाए।

इस बार चाचाजी ने इशारा पकड़ लिया।

पूरी पार्टी खेत में उतर गई।

आगे-आगे नत्थू, फिर पंडिज्जी, चाचाजी और अपोली।

चाचाजी अभी भी सामने बन रहे राजमार्ग को लेकर अभिभूत हैं।

"राजमार्ग बन जाएगा तो भौत ही बढ़िया रहेगा।" चलते-चलते भी चाचाजी यही बोले जा रहे हैं।

पंडिज्जी मौन हैं।

नत्थू को राजमार्ग से मतलब नहीं। उसका जीवन तो मेंड़ पर चलते-चलते ही बीत जाना है।

"अच्छा, आप हमें जे तो बताइए, इससे ऐसा क्या बढ़िया हो जाना है?" अपोली ने जानना चाहा।

चाचाजी ने सुना नहीं।

अपोली ने तब पंडिज्जी को पीछे से टोंचा :

"इनसे यह पूछिए न? राजमार्ग निकलने से कोटरा का ऐसा क्या बढ़िया हो जाएगा? किसका बढ़िया हो जाएगा?"

पंडिज्जी ने पीछे मुड़कर अपोली को झिड़का, "तो उनने कौन-सा ऐसा कुछ गलत कह दिया? रोड बनेगी तो कोटरा बढ़िया न हो जाएगा?"

"आप क्यों उत्तर दे रहे हैं? उनसे पूछो न?"

"उनसे क्यों? तुम्हें जवाब मिल गया न?"

"नहीं मिला।"

"क्यों?"

"अरे आपका वाला 'बढ़िया' उनका वाला 'बढ़िया' थोड़ेई हो सकता है।"

"क्यों?"

"लखनऊ वाला आदमी किस चीज को बढ़िया कह रहा है, यह बात आप कैसे बता सकते हैं?" अपोली बोले।

"यार, एक तो बे वैसेई इत्ता ऊँचा सुनते हैं। ऊपर से तुम काहे जे सब तमाशा यहाँ मचा रहे हो?" पंडिज्जी नाराज होने लगे।

चाचाजी ने उड़ता-उड़ता-सा कुछ सुन लिया। पलटकर पूछने लगे :

"हमसे कछू कही?"

"राजमार्ग से भौत बढ़िया हो जाएगा, आपकी इसी बात पे कुछ बात कर रहे थे हम लोग।" अपोली ने जोर से कहा।

"क्या बातें चल रही हैं- हमें भी तो बताओ?"

"कछू खास बात नहीं।" पंडिज्जी बोले।

"बढ़िया हो जाएगा। भौत बढ़िया हो जाएगा भाई। कोटरा का खूब विकास हो रहा है, सब तरफ। वाह, वाह।" चाचाजी स्वयं से बात करते हुए नत्थू के पीछे चलते रहे।

"इनसे जे भी पूछिए कि इस राजमार्ग से नत्थू का भी कुछ बढ़िया होगा कि नहीं?" अपोली ने बात को नया मोड़ दिया।

पंडिज्जी सँभलकर चल रहे हैं। नत्थू और चाचाजी, दोनों की चाल भी बेहद धीमी है। पूरी पार्टी मानो फूंक-फूंककर कदम रखती हुई चली जा रही है।

पंडिज्जी ने चलते-चलते ही अपोली के सवाल के प्रत्युत्तर में पूछ लिया, "यार, नत्थू का इस राजमार्ग से क्या लेना-देना?"

"पर कहा तो यही जा रहा है न? चाचाजी भी जेई कह रहे हैं कि राजमार्ग से सबका बढ़िया हो जाएगा।"

"ऐसेई कहा जाता है। यही कहने का रिवाज है।"

"वही तो हमने पूछा।"

"क्यों पूछ रहे हो?"

"क्योंकि कभी नत्थू भी हमसे जे बात पूछ सकता है।"

"नेताओं वाली फालतू बातें न करो यार। ऐसी अंट-संट बातें बस चुनाव में ही बोली जाती हैं।"

"हम तो वही बोल रहे हैं जो आपकी नेतागिरी से हमने सीखा है।" कहकर अपोली हँसने लगे।

"हमसे कुछ अच्छी बातें भी सीख लो।"

"क्यों? नत्थू की चिन्ता करना कोई अच्छी बात नहीं है क्या?"

"उसकी कौन-सी चिन्ता? स्वयं उसे कभी इस रोड से चिन्तित होते हुए देखा है? वह भी जानता है कि रोड बन रही है, बस। इस रोड से उसे क्या मिलेगा, कभी उसने यह पूछा है?"

"पूछा नहीं है, पर पूछ ही ले तो?"

"क्यों पूछेगा? वैसे तो उसको भी इसका लाभ मिलेगा।"

"अच्छा? बताइए कि इसमें नत्थू को क्या मिलना है? हाँ, इस राजमार्ग पर तेज भागती गाड़ी कभी उसे कुचल के जरूर निकल जाएगी।"

"यार, कुचलने को तो राजमार्ग पर हम-तुम भी कुचले जा सकते हैं। ऐसी रोड पर तो हरेक को सँभलकर चलना ही पड़ता है भैया।"

"हमारा तो प्रश्न ही दूसरा है।"

"क्या है आपका प्रश्न?"

"कि विकास अक्सर नत्थू को ही क्यों कुचलता है?"

"चुनाव अभी भौत दूर है बेटा। ऐसे सवाल पूछना तभी अच्छा लगता है।"

"फिर भी, अभी से प्रैक्टिस करबे में क्या बुराई है? नत्थू का वोट भी तो लगेगा, कि नहीं?" कहकर अपोली हँसने लगे।

"ऐसा है तो जरूर बोल लो।" पंडिज्जी आगे चले गए।

"नत्थू, यहीं दरी बिछा लो।" पंडिज्जी ने निर्देश दिया।

एक जगह ज़मीन थोड़ी-सी समतल दिखी। पास ही मेंड़ पर उगा बबूल का पेड़ है।

नत्थू दरी लेने चल दिया।

इधर चाचाजी ने पलटकर पूछा, "तुमने हमसे कुछ कहा?"

"यहीं रुकते हैं।" पंडिज्जी ने इशारे के साथ ऊँची आवाज़ में कहा तो चाचाजी रुक गए।

अब तीनों रुक गए हैं। नत्थू दरी लाने गया है। झोंपड़ीनुमा टपरे में एक बड़ी-सी दरी भी रखी रहती है। पंडिज्जी यहाँ आते रहते हैं। कभी बैठना चाहें तो उनको दरी लगेगी। अन्दर सँभालकर तह की हुई रखी हुई है।

"तुम अपना जे खेत कहीं बेच-बाच न देना।" अचानक ही चाचाजी ने कहा।

"बेचेंगे क्यों?" अपोली ने पूछा।

चाचाजी बिना उसकी सुने बोलते चले गए :

"अब जे हो गई है राजमार्ग से लगी हुई जमीन। तुम्हें बड़े-बड़े आफर आएँगे। पर इसे कभी बेचना मत। बड़ी मौके की जमीन है यह। देखना, यह आगे जाकर सोना उगलेगी।"

पंडिज्जी अपनी ही लेकर बैठ गए।

"वैसे भी, हम इसे कहाँ से बेचेंगे? एक चौथाई खेत तो मुकदमेबाजी में फँस गया है।"

अपोली उनकी इस बात पर उखड़ गए।

"आपकी जेई बात खराब है पिताजी।"

"कौन-सी बात?"

"हर जगह अपनी जमीन चाँप लेने की कथा बताने बैठ जाते हो।"

"जिसकी चाँपी गई है वो तो रोएगा न?"

"अदालत में तो जब चाहे तब रो आते हो न? उससे तुम्हारा मन नहीं भरता?"

"कैसी बात कर रहे हो तुम? बाप से ऐसे बात बाप से ऐसे बात की जाती है क्या?"

"बाप से ऐसे बात करो, बड़ों से ऐसे करो, वयोवृद्धों से वैसे करो; आदमी बात ही न करे क्या?"

"करे, पर..."

"...अच्छा हमने ऐसी क्या बात कह दी? आपसे जेई कहा न कि आप हर जगह रोते न रहें कि हमारी जमीन चाँप ली गई है। आजकल ऐसी बातें कोई नहीं सुनता। कोई भी नहीं। अदालत तक नहीं। वो तुम्हारी सुन रही है क्या? तो उतें जज साहब बहरे, इतें चाचाजी बहरे, किसको सुना रहे हो तुम? क्यों हर जगह यही रोना?"

"क्यों न रोएँ- जमीन हमारी..."

"... फिर खूब रोइए। खुलकर रोइए। अच्छा है। आदमी का गला साफ हो जाता है।"

चाचाजी ने अपोली को अपनी तरफ इशारा करते हुए देख लिया है। वे भी सारी बात सुनने की कोशिश कर रहे थे। बेचैन होकर पूछने लगे:

"क्या बात चल रही है?"

"कछू नहीं।" पंडिज्जी ने कहा।

"तुम लोग इत्ता धीरे-धीरे काहे बोल रहे हो भाई?"

"कछू नहीं, पिताजी कह रहे थे कि सच की सदा जीत होती है।" अपोली ने ऊँची आवाज में कहा।

"तो? ठीक ही तो कह रहे हैं।" चाचाजी ने कहा।

"पर झूठ भी हारता नहीं, हम उनको जे बात समझा रहे हैं।" अपोली ने मज़ा लेते हुए धीमे स्वर में कहा।

"सत्य की हमेशा जीत होती है- सच कहा।" चाचाजी ने दोहराया।

"जीत होती तो सच की ही है पर जीत की यह ट्राफी झूठ उठा के ले जाता है।" आज अपोली विद्रोही रूप में हैं।

"इसीलिए, सच की टेक कभी न छोड़ना। ... अच्छा, हम थोड़ा आते हैं।" कहकर चाचाजी बबूल के पेड़ के पास तिनके की आड़ में जाकर उकड़ूं बैठ गए। कान में जनेऊ घुमाते देखकर सब जान गए कि उनका इरादा क्या है।

बुढ़ापे में पेशाब का अपना ही सिस्टम होता है। बड़ी मान-मनव्वल के बाद धीरे-धीरे नीचे आती है। उतरने में टाइम लगता है सो आदमी बैठे-बैठे, वहीं से बातें भी करता चला जाता है।

जमीन पर उकड़ूं बैठे हुए चाचाजी पेशाब के साथ संवाद भी करने लगे।

"यार, यहाँ आते टाइम कच्चे मकानों का एक मोहल्ला पड़ा था न?"

"चमरेटी है वो। चर्मकरों का टोला।" पंडिज्जी ने पीछे से ऊँची आवाज में बताया।

"वहाँ के सारे मकान बन्द काहे पड़े थे?" पेशाब उतरने लगी है।

"बे तो एक महीना से बन्द हैं। वे सब लोग कोटरा से भाग गए हैं।" अपोली ने बताया।

"ऐं?" पूछा तो इस चक्कर में चलती हुई पतली धार भी रुक गई।

"बे सब अभी कोटरा से भग गए हैं।" अपोली ने तेज़ आवाज़ में नारा टाइप लगाते हुए कहा।

"क्यों भाग गए भाई?" चाचाजी ने पूछा और पेशाब उतारने वाले यंत्र की पड़ताल करने लगे।

"पढ़ा नहीं था आपने? लखनऊ के पेपरों में भी तो खूब छपा था। भौत दिमाग खराब हो रहे थे स्सालों के। एक दिन तो पट्ठों ने एक सवर्ण को बीच बाजार में थप्पड़ तक मार दिया। पानी सिर से गुजर गया तो भौत मारा स्सालों को सवर्णों ने। पूरी बस्ती को घेर के स्सालों को ऐसा ठीक किया कि हाथ जोड़ के 'हा' 'हा' करने लगे। तबसे भौत सारे लोग इतें से भाग निकले हैं।" अपोली ने बताया।

"माना कि तुमें गांधी बब्बा हमारे मूड़ पे बिठाकर गए हैं। और हम भी क्या करते? हमने भी बिठा लिया कि गांधीजी की बात को कौन टाले? बैठ गए तुम हमारे मूड़ पर। पर अब वहाँ बैठकर हम पर ही मूतो तो मती यार। जे नहीं चलेगा। जे नईं होना चईए कि तुम अपनी औकात ही भूल जाओ।" पंडिज्जी का यह सबसे प्रिय विषय है। वे बिना इस बात की परवाह किए कि चाचाजी ने कितना सुना, कितना नहीं सुना, बोलते चले गए।

चाचाजी ने कुछ सुना ही नहीं शायद।

वे अभी पेशाब करने की महती कोशिशों में व्यस्त हैं।

"आपके साथ संविधान है तो हमारे साथ तमंचा है।" अपोली ने पंडिज्जी की बात को आगे बढ़ाते हुए कहा, "बताइए, कौन बड़ा? तमंचा चले तो संविधान की ढाल को भी चीर के एकदम निशाने पे जाकर लगता है।"

कहकर हँसने लगे अपोली।

चाचाजी उठ गए। जित्ती निकली है, ठीक है। फिर लगेगी तो फिर देखेंगे।

"कछू कह रहे थे तुम?" चाचाजी पंडिज्जी से पूछने लगे।

"बता रहे थे कि लखनऊ घाँईं तमंचे इतें भी मिल जाते हैं। फिरंगी क्वालिटी वाले। इस मामले में पहले ही लखनऊ टाइप विकास हो गया है कोटरा का।" अपोली बताने लगे।

पंडिज्जी ने अपोली को अनसुना करते हुए चाचाजी से कहा, "आइए, दरी पर बैठें।"

नत्थू ने दरी बिछा दी थी।

चाचाजी को बैठते-बैठते बेतवा की याद आ गई।

"यार, बेतवा में भौत पानी नहीं दिखा हमें?"

"विकास के चक्कर में उसकी रेत कढ़ गई है सारी। सूख रही है बेतवा। हमें तो जेई लगता है कि जब तक जे बेतवा का पुल बनेगा, नदी ही नहीं बचेगी; पुल बेकार जाएगा।" पंडिज्जी ने कहा।

पंडिज्जी पर्यावरण की चिन्ता में दुबले हो रहे हों, ऐसा नहीं था। यह तो बस कह दिया वरना रेत माफिया से हाथ मिलाने की तमन्ना हमेशा रही है उनके मन में।

"नदी की बड़ी चिन्ता हो रही है चाचाजी को?" अपोली बोले।

"जल समस्या विकराल है। चिन्ता तो होनी चइए।" पंडिज्जी ने चिन्ता का समर्थन किया।

"तभी तो अभी-अभी अपना जल छोड़ के आए हैं।" अपोली ने बबूल के पेड़ की तरफ इशारा करके कहा।

"हमसे कुछ कहा?" चाचाजी ने पूछा।

"हम कह रहे थे कि बूंद-बूंद से घड़ा भरता है।"

"पड़ा?"

"घड़ा। ...घड़ा।"

"घड़े का क्या?"

"घड़ा भरता है। विद्वतजन कह गए हैं कि हम चाहें तो बूंद-बूँद से भी घड़ा भर सकते हैं।"

"तनिक तेज बोलो। हम समझ नहीं पा रहे।"

"मटर खाएँगे चाचाजी? नत्थू, थोड़ी मटर तो खेंच ला।" पंडिज्जी ने बात बदली।

"जे इस उमर में इत्ती सूखी मटर चबा पाएँगे?" अपोली ने पूछा।

"अभी सूखी नहीं है। हरी है। सूख गई होती तो हम कलकत्ता के सेठ को न बुला लेते?" पंडिज्जी ने कहा।

"इसे हरी तो न बोला जाए।"

"हरी है तो हरी ही बोलेंगे।"

"सूख गई है।"

"अभी नत्थू मटर ला ही रहा है। खुदई देख लेना।"

"चलो, देखते हैं।"

"हम भी तुम्हें चबा के बता देंगे।"

"आप तो जिद में लोहे के चने भी चबा जाओगे। इनकी सोचो। उमर देखी है इनकी?"

अपोली और पंडिज्जी बहस का कोई अवसर छोड़ते नहीं।

"पिताजी से क्यों लड़ रहे हो भाई?" चाचाजी ने अपोली से पूछा।

"लड़बे के लाने पड़ौसी के घर में तो घुसेंगे नहीं। जो सामने हो, उसी से तो लड़ना पड़ता है।" अपोली ने बहस का सिद्धांत बताया।

"क्या कह रहे हो?" चाचाजी ने नहीं सुना।

"कछू नहीं, बस लोहे के चने चबाने की बात बात चल रही थी।" अपोली ने तेज़ आवाज़ में कहा।

चाचाजी ने यह बात एकदम सटीक सुन ली।

"लोहे के चने चबाने वाला मुहावरा तो हमने भी पढ़ा था। छटवीं क्लास की परीक्षा में हमसे इसका अर्थ भी पूछा गया था।" चाचाजी ने कहा।

"हिंदी वाले मास्साब ने पढ़ाया होगा?" अपोली ने कहा।

"हाओ, बेई जे मुझे सारी बातें बताती थी।"

"वे लोग अभी के बच्चों को भी जेई सब बता रहे हैं। हिन्दी के मास्टर लोग जे लोहे के चने चबाना छोड़ ही नहीं रहे।" अपोली ने कहा।

इसी बीच पंडिज्जी का फोन बजने लगा था। नम्बर देखकर वे एक तरफ़ जाकर खड़े हो गए। वहीं खड़े हुए बतियाते रहे। बड़ी देर तक बात करके लौटे तो अपोली ने पूछ लिया। पंडिज्जी ने बताया कि दरोगाजी बात कर रहे थे।

"दरोगाजी का था। बोल रहे थे कि भाई साब आप हमसे तो कहते। नाहक ही बड़े-बड़े लोगों को बीच में डालबे की क्या जरूरत थी?" पंडिज्जी ने बताया। एसडीएम के फोन की बात अपोली को भी पता है।

"आपने उनसे जे नहीं कहा कि तुम तो खेत पे आ के नत्थू का बयान दर्ज करा रये थे?"

अपोली बोले।

"दरोगा से ऐसा नहीं कह सकते न। उसके साथ टैक्टफुल रहना पड़ता है।"

"जे साले लगुवे-भगुवे आपका क्या उखाड़ लेंगे? आप कहो तो..."

"... थानेदार की ताकत को कभी भी कम न समझो।"

"जब कलेक्टर ने ही उसे फोन कर दिया तो..."

"...उसी का तो बुरा मान गया है है वो। मिर्ची लग गई है उसे..."

"... लगने दो। कुर्सी पर कुछ दिन ठीक से न बैठ पाए तो..."

"... हमने कहा न, थानेदार की ताकत को कभी कम न समझो।"

"क्यों? "

"क्योंकि अभी तो उसने फोन हमें जे बताने के लिए किया था कि मोंड़ी ने स्वयं तुम्हारे खिलाफ छेड़छाड़ की शिकायत दर्ज कराई है।"

"वो स्साली..."

"... कानून आजकल पूरा का पूरा औरतों के पक्ष में है और तुम परले दर्जे के बेवकूफ हो। दरोगा ने यह शिकायत खुद दबाव डाल के लिखवाई होगी या सुरेंलेजी को शह दी होगी कि तुम किसी तरह मोंड़ी से शिकायत दर्ज करा दो तो फिर कलेक्टर-कमिश्नर भी इस केस से हाथ खेंच लेंगे। मोंड़ी का मामला हो तो आजकल टीवी-अखबार वाले भी तुरन्त खड़े हो जाते हैं।" पंडिज्जी ने कुछ सोचते हुए कहा।

"इसका कहीं कुछ भी छापा तो हम बिस्मिलजी को जमीन में गाड़ देंगे।"

"किस-किसको गाड़ोगे तुम? आजकल, तुरत-फुरत दिल्ली-बंबई से आकर, तुम्हारे मूँ के सामने माइक और कैमरा ले के खड़े हो जाते हैं स्साले । ... खुद तो तुम अपने लच्छन ठीक करते नहीं हो, जमीन में गाड़बे की बातें करते हो।"

"क्या लक्षण हैं?"

"तुमें पता है।"

"हमारे लच्छन आप बाद में सुधार लेना, पहले जे बताओ कि आपने दरोगा को क्या

कहा?"

"हम क्या कहते? हमसे अपनी लल्लोचप्पो करा ली स्साले ने। जेई वो चाहता भी था। हमें अपनी ताकत बता रहा था। बुरा माने बैठा था। हमने भी उसे मना लिया। बाद में कहने लगा कि हमने मोंड़ी से सादे कागज पे ही शिकायत ली है। कुछ दिनों बाद शिकायत फाड़फूड़ देंगे।"

अपोली को शान्ति मिली।

लड़की की शिकायत की खबर से घबरा तो वे भी गए थे। अब ठीक है। वैसे, बाद में, कभी बताएँगे उस स्साली को।

तब तक मटर तोड़ लाया है नत्थू।

"आइए।" पंडिज्जी ने दरी पर रखी मटर की तरफ इशारा करके चाचाजी को आमंत्रित किया।

"एकदम हरी मटर है। खा के देखिए।" अपोली ने हँसकर कहा।

शक्तिपुंज की प्रतीक्षा

नत्थू बैठे हैं ज़मीन पर, गयासुद्दीन की झोंपड़ी के बाहर।

साथ में है रस्सी में बँधी उनकी बकरी। बाँध रखी है क्योंकि बकरी बड़ी बेचैन हो रही है। वह एक जगह पर टिक ही नहीं रही।

तेज़-तेज़ पूँछ हिला रही है। बार-बार रस्सी खींचती है। दसों दिशाओं में एक साथ भागना चाहती है। हर दस मिनट पर, जगह बदल-बदलकर मूत रही है। मिमिया-मिमियाकर मानो बकरे को पुकार रही है। नत्थू भी बार-बार रस्सी खींचकर उसे आश्वस्त करते हैं। ... बस तनिक-सी देर और चैन ले ले। पूरे पैसे दे दिये हैं गयासुद्दीन चच्चा को। बे अभी अपना बकरा ले के बाहर आ ही रये हैं। तनिक गम्म खा ले बेटा।

नत्थू अपनी बकरी को यहाँ गर्भाधान के लिए लाए हैं।

नत्थू तो पहले समझे ही नहीं थे कि बकरी दो दिनों से इतनी बेचैन क्यों है? क्यों वह कुछ खाती-पीती ही नहीं? क्यों इतनी उत्तेजित है? बार-बार क्यों जगह-जगह पेशाब करती फिर रही है? बुढ़िया से यूँ ही पूछा तो वो हँसने लगी। बोली कि तुम तो जीवन भर कभी औरत को ही समझ न पाए तो बकरी को क्या समझोगे? उसी ने बताया कि जमुनापारी बकरी इन्हीं दिनों में गरम होती है। गर्भाधान करा दोगे तो पेट से हो जाएगी। गर्भवती हो गई, फिर चार महीने में हमें दो बच्चे दे देगी।

तभी नत्थू आज अपनी बकरी को यहाँ लाए हैं। गयासुद्दीन के पास इलाके का मशहूर बीजू बकरा है।

गयासुद्दीन का बकरा यूँ ही बीजू बकरा नहीं कहाता है। बड़े मजबूत बीज का बकरा है। उसके पौरुष की मशहूरी कोटरा के अलावा बाहर तक है। सारे बकरी मालिक उसे जानते हैं। एक साख़ है गयासुद्दीन के बकरे की। बकरे के दुर्दमनीय पुरुषत्व को लेकर गयासुद्दीन चच्चा कोटरा में यूँ अपनी छाती चौड़ी करके चलते हैं मानो उनके ही पुरुषत्व की चर्चा चलती हो। विशेषता उनके बकरे की तत्परता में है। वह हमेशा तत्पर रहने वाला शक्तिपुंज बकरा है। गयासुद्दीन के झोंपड़े पर कभी भी अपनी बकरी लेकर पहुँच जाओ, बकरा हमेशा तैयार मिलेगा। काम भी तुरत करता है। बकरी तथा बकरी मालिक को पूरी तरह सन्तुष्ट करके ही घर भेजता है। गर्भाधान का परिणाम भी प्रायः ज़ोरदार होता है। बीस-पचीस दिनों में ही बकरी में गर्भ ठहरने के लक्षण आ जाते हैं। योनि में सूजन और एक पारदर्शी झिल्ली ऐसी लटकने लगती है कि बकरी की पूँछ में धूल चिपकने लगती है। बकरी मालिक को पता पड़ जाता है कि बीजू बकरे के बीज ने अपना काम कर दिया है। गयासुद्दीन कोटरा में जो सिर उठाकर चलते हैं वह ऐसेई नहीं!

अभी उसी बीजू बकरे की प्रतीक्षा में बैठे हुए हैं नत्थू। बकरी तक भी तो बीजू बकरे की यह मशहूरी अन्य बकरियों के जरिए पहुँची तो होगी ही? बीजू का नाम लेकर बकरियाँ इक-दूजे को छेड़ती भी हों तो आश्चर्य की बात न कहाएगी। सम्भावना तो यहाँ तक बनती है कि गाँव की बकरियाँ गयासुद्दीन तक को पहिचानने लगी हों कि जे चले आ रये अपने बीजू बकरा के बड़े बापू!

नत्थू अभी तो बकरी की रस्सी पकड़े हुए बैठे हैं। गयासुद्दीनजी की प्रतीक्षा है। "अभी आते हैं" कहकर झोंपड़ी के अन्दर गए थे वे। बड़ी देर से वे अन्दर हैं। बाहर नहीं निकले हैं। ... कहीं वे अन्दर जाकर बकरे को तो नहीं मना रहे? हो सकता है कि वह मूड में न हो अभी? बकरे का भी तो मूड तो होता ही होगा? बीजू बकरा भी अन्ततः होता तो एक बकरा ही है।

***

वैसे, एकदम सुबह-सुबह ही वहाँ पहुँच गए थे नत्थू ।

"बकरी लाए हैं।" उन्होंने गयासुद्दीन को बताया था।

इसके आगे गयासुद्दीन को और कुछ बताने की आवश्यकता नहीं थी। उनके दर पर सवाली बकरियाँ किस सवाल को लेकर उपस्थित होती हैं, जानते ही हैं गयासुद्दीन। "बैठो, हम आते हैं", कहकर वे झोंपड़ी में चले गए थे और अभी तक पधारे नहीं हैं। बकरी तो पहले से ही थी, अब नत्थू भी बेचैन हो चले।

"चच्चा!" नत्थू ने उन्हें आवाज दी।

जवाब में पहले तो बकरे की आवाज़ आई। फिर

गयासुद्दीन की।

"तनिक गम्म तो खाओ यार!" गयासुद्दीन की आवाज़ थी।

"हम तो बस जे कह रहे थे चच्चा कि तुम जे पैसे धर लेते।" नत्थू ने जेब से बीस रुपए निकालकर हाथ में रख लिए।

"अभी तो अपने खीसे में ही धरे रहो न। बाहर कोई जेब नई कट रई।" गयासुद्दीन ने बाहर निकलते हुए कहा।

बकरा अभी भी उनके साथ नहीं था।

"जे धर लो।" नत्थू ने नोट बढ़ाए।

"कित्ते पकड़ा रये हो भैया?" गयासुद्दीन ने नोटों को हाथ भी नहीं लगाया।

"काय? पूरे तो दे रये?" नत्थू जान गए कि बीस कम हैं कदाचित ।

"भैया, तीस की रेट चल रई है।" गयासुद्दीन ने कहा।

"पहले तो बीस लगते थे?"

"यार, तुम कब की बात बता रये हो? सन सत्तावन की?"

गयासुद्दीन हँसने लगे।

"हमें तो बे रमई कक्का ही बता रये हते।"

"बीस?"

"हओ, बीस?"

"यार, थोड़ा धीमे बोलो। अन्दर बकरा खड़ा है, उसका तो कुछ लिहाज कर लो। तुम्हारी बात सुन लेगा तो इसे अपनी बेइज्जती मानेगा। रिसा गया तो तुम्हारी बकरी की तरफ देखेगा भी नहीं। मन उचट जाएगा उसका।" गयासुद्दीन ने चेताया।

"पर तीस तो भौत जादा कहाए?" नत्थू ने कहा। "काहे के जादा? बकरे को अच्छा खिलाना-पिलाना भी तो पड़ता है भैया। बकरे में दम चईए कि नहीं? सब में कलदार खर्च होते हैं।" गयासुद्दीन ने बकरे की मर्दानगी कायम रखने का अर्थशास्त्र बताते हुए तीस की रेट को जायज़ ठहराया।

"सलीम तो बीस में करा देता है?" नत्थू ने ख़िरी कोशिश की।

"वो तो पन्द्रह में भी कराए तो महँगा है।"

"क्या?"

"उसका बकरा देखा है कभी?"

"नहीं तो, क्यों?"

"सलीम को तो देखा है न?"

"क्यों न देखेंगे?"

"बस, तो जैसा सलीम, वैसा उनका बकरा।"

"पर काम तो करता है।"

"काम तो सलीम ने भी किया होगा, सात बच्चे हैं उनके।"

"वही तो..."

"... उनका बकरा भी एकदम वैसई काम करता है, सलीम जैसा। सलीम की औलादें देखी हैं?"

"फिर भी..."

"देखो भैया, इतें पैसा तो इत्ता ही लगेगा। तुम चाहो तो सलीम के बकरे से अपना जे काम करा लो। और जब वो काम कर ले तो फिर अपनी बकरी से ही पूछ के देख लेना। तुम्हें खुद तुम्हारी बकरी अगर दस गालियाँ न दे तो हमारा नाम बदल देना।"

"पर तुम रेट तो भौत बता रये चच्चा?"

"भैया, तुम जरा हमारे बकरे का वीर्य भी तो देखो। वीर्य में ताकत होनी चाहिए कि नहीं? पानी-पानी का भी फर्क होता है। इन तीस रुपयों में बकरी को जो औलादें पैदा होंगी, उनका भी सोचा है?"

"अपनी औलादों का नहीं सोच सके तो बकरी की औलाद का क्या सोचें?" कहकर नत्थू हँसने लगे।

परन्तु हँसते हुए दस का एक मुड़ा-तुड़ा नोट भी निकाल दिया नत्थू ने।

तीस रुपए देखकर गयासुद्दीन परम आत्मीय हो गए।

"राजा, जे तो सोचो। कहीं एक बकरा पैदा हो गया तो तुम्हारे जे तीस रुपए तीस हजार बन के वापस लौटेंगे।" पैसे लेते हुए गयासुद्दीन ने कहा।

"हमारी फूटी किस्मत के बर्तन में इत्ता पैसा टिकेगा नहीं चच्चा।"

"विश्वास नहीं हो रहा न तुमें? अरे, हमारा बकरा ऐसा गुनी है कि..."

"... बकरों में भी बाँभन होते हैं क्या?"

"इसे वैसई मान लो।"

"चच्चा, बड़ी किस्मत है तुमाई भी और बकरे की भी।"

"जे तुमने सच कहा। ऐसा बकरा तो किस्मत से ही मिलता है।" गयासुद्दीन भावुक हो चले।

"जे भी स्साली खूब रही! भगवान बकरों की किस्मत रचबे में मगन है, हम गरीबों की

किस्मत लिखबे का उसे टेम ही नहीं।" नत्थू हँसकर बोले।

"यार, ऐसी खराब किस्मत तो नईंयाँ तुमाई?...इतें पंडिज्जी की फसल में तुमाई अधिया-बटिया है, उतें तुम्हारे बहू, बेटा भी छतरपुर में पैसे कमा रये हैं- और का चइए? ठाठ तो हैं।" गयासुद्दीन ने कहा।

गयासुद्दीन का खुद का बेटा जेल में बन्द है। 'क्यों बन्द है', यह मत पूछिए। जेल में बन्द है, बस यही तथ्य महत्त्वपूर्ण है। जिनके भी बच्चे जेल में बन्द नहीं हैं उनके ठाठ मानते हैं गयासुद्दीन ।

"ठाठ ही मान लो। दो टेम पेट भर रोटी मिल गई तो गरीब का तो ठाठई हो गया।" नत्थू ने स्वीकार किया।

गयासुद्दीन ने पैसे बंडी के खीसे में रख लिए थे। अब वे भी झोंपड़ी की तरफ़ देखने लगे।

नत्थू ने भी पहले झोंपड़ी की तरफ देखा, फिर बकरी को।

बकरी ने उन्हें अपनी तरफ़ देखते पाया तो अपनी रस्सी खींचने लगी।

"जल्दी करा देते।" नत्थू ने अर्ज की।

बकरी ने भी उछलकर मिमियाते हुए अपनी अर्ज पेश की।

"कराते हैं न।"

"तो करा दें। बकरी का हाल तो आप देख ही रहे हैं।"

"बकरी को बोलो कि तनिक गम्म खाए।"

"वैसे हुआ क्या? देर काहे की है?" नत्थू ने पूछा।

"अरे भैया, बकरा स्साला सुस्त पड़ा है।"

"तुम तो उसे बड़ा गुनी बता रये थे?" नत्थू चाहते हैं कि फीस पूरी दी है तो काम भी तुरन्त होना चाहिए।

"गुनी प्राणी भी कभी सुस्त नहीं पड़ सकता क्या?"

"पर..."

"भैया, सात दिनों से दिन भर इसी काम में दता हुआ है बिचारा। लोग भी चाहे जब अपनी बकरी ले के खड़े हो जाते हैं। ऐसे रात, दिन तो अपना दारासिंह भी करता तो आठवें दिन ढीला हो के लस्त गिर पड़ता। है कि नहीं?"

"दारासिंह जे भी करते थे? हम तो सुने हैं कि बस दंगल लड़ते थे?"

"भैया, हमने तो एक बात कही है। वैसे जे भी किसी दंगल से कम नहीं।"

"खैर, जे तो है। फिर?"

"करेगा। जरूर करेगा। बीजू बकरा है। तनिक इंतजार कर लो।"

"परन्तु जब तक जे अपने बीजू महाराज तैयार होंगे, कहीं बकरी नखरे न दिखाने लगे?"

"अभी तो ऐन तैयार लग रही है। देखो, कैसी खेंच-तान मचा रई है?"

गयासुद्दीन को बेचैन बकरी देखकर पूरा विश्वास है कि बकरा आने पर वह स्वयं को उसके समक्ष हँसी-खुशी प्रस्तुत कर देगी।

"बाकी, एक बार के काम में बकरी गाभिन तो हो जाएगी न?" नत्थू ने शंका दूर कर लेना उचित समझा।

"होगी। ... काहे न होगी?"

"फिर भी, न हुई तो?"

"अगर हमारे बकरा से गाभिन न भई तो मान लो कि बकरी में ही कोई खराबी है या फिर तुमाई किस्मत में..."

"हमारी किस्मत का तो हमें अभी भी पता है।" नत्थू ने हँसकर कहा। आदमी की किस्मत इतने लम्बे समय तक खराब रहे तो उसे एक समय के बाद उस पर गुस्से की जगह हँसी आने लगती है। नत्थू ने आगे कहा, "हमारी किस्मत खराब है, तभी तो हमने आपसे जे बात पूछी है।"

"तुमाई जैसी भी हो, हमारे बकरे की किस्मत भौत बढ़िया है।"

"मान लो कि फिर भी बकरी गाभिन न भई तो?"

"तो क्या करोगे? पन्द्रह दिन बाद अपनी बकरी फिर इतें लइयो..."

"... तो फिर से पैसे लगेंगे?"

"क्यों नहीं, भाई?"

"पर अभी के पैसों का काम तो नहीं बना न?"

"पर बकरे ने तो अपना काम किया न? पैसे तो बकरे के काम के लग रहे हैं।"

"चच्चा, दूसरी बार हमसे कछू कम पैसे ले लेना।"

"पर तुम जे सोच ही काय को रये हो कि बकरी गाभिन न होगी?"

"का करें? हमारे साथ कभी अच्छा भी होगा, विश्वास नहीं हो पाता।"

"जरूर अच्छा होगा। जे काम तो जरूर अच्छा होगा। खुद पे विश्वास करो न करो, बकरे पे तो विश्वास करो।"

कहकर गयासुद्दीन उठ गए।

वे बकरा लेने के लिए जाने लगे। जाते-जाते वे पलटे। कुछ निर्देश देने लगे :

"काम होबे के बाद पाँच घंटे तक बकरी को बैठने न देना।" गयासुद्दीन ने कहा।

"अगर गलती से बैठ गई, तो?"

"तो तुम उसे डंडे से मारो और खड़ा कर दो। देखो कि बकरी बैठ न सके। ... अगर वह बैठ जाए, तो हमसे यह मत पूछना कि वह प्रेग्नेंट क्यों नहीं हुई।"

"ठीक। ... और कछू?"

"और देखियो, जे कहीं तेल वाली कोई चीज न खा ले। तुमें पता ही है कि बकरी हर चीज खा जाती है। घर में तेल वाली सब्जी, रोटी बची हो तो..."

"...हम नोन मिर्ची प्याज से रोटी खाबे वाले लोग हैं चच्चा। बच्चों को कभी पतरी दाल-तरकारी मिल जाए पर तेल वाली चीज खाबे का खतरा न हमें है, न बकरी को।"
"चलो, फिर बैठो। हम बकरा ले के आते हैं।"

गयासुद्दीन झोंपड़ी में चले गए। रूम नत्थू बकरी की रस्सी पकड़ के बैठे हैं। बकरी बेचैन है। एक बार वह ज़रा ज़्यादा ही ज़ोर से कूदी तो नत्थू ने बकरी से हँसकर कहा, "अरे,

आ रये न तुमारे भरतार। तनिक गम्म तो खाओ।"

थानेदारी का तिलिस्म

"बताइए, कुटिया पर कैसे आना हुआ?" दरोगाजी ने नेताजी से पूछा।

दारोगाजी का सरकारी घर।

घर वैसा ही है जैसे कि सरकारी क्वार्टर वाले घर हुआ करते हैं।

थाने के अहाते में ईंटों और सीमेन्ट के मेल तथा बेमेल से एक इमारत बनी हुई है। तीन कमरे। छोटा-सा बरामदा । बरामदे में लगी बाँस की जाफरी। एक बड़ा सा आँगन। आँगन के एक कोने में संडास। दूसरे कोने में स्नानघर। अन्दर, बरामदेनुमा रचना के एक सिरे पर रसोईघर। दो अर्दलीनुमा सिपाही भी इसी सरकारी क्वार्टर की बनावट और बुनावट का अहम हिस्सा हैं।

दरोगाजी का परिवार रहता है यहाँ। पत्नी, दो लड़के, एक लड़की।

थानेदारनी बाई मुटा गई हैं परन्तु उनके चेहरे पर वो लुनाई तथा चमक खूब है जो घर में रिश्वत की नियमित आवक होने पर आ ही जाती है। अभी वे टीवी पर कोई सीरियल देख रही हैं और अपनी ही तरह की भावुकता में लीन हैं। बेटी बड़ी है। दसवीं कक्षा में पढ़ने वाली। वह मोबाइल में गुम वहीं माँ के पास बैठी है। दो छोटे बेटे, सातवीं, पाँचवीं में पढ़ने वाले। अभी वे दूसरे कमरे में हैं। वे वहाँ क्या कर रहे हैं, यहाँ से बता पाना कठिन है। किसी दरोगा को जब तक ऐसे घरेलू वातावरण में न देखा जाए, विश्वास करना कठिन होता है कि वह भी एक पारिवारिक प्राणी हो सकता है। इतवार का दिन है। यूँ तो दरोगा के जीवन में कभी कोई इतवार नहीं होता पर इस दिन दरोगाजी सुबह देर तलक सोकर थोड़ा इतवार तो मना ही लेते हैं।

दिन के दस बजे हैं। दरोगाजी अभी-अभी सोकर उठे हैं। नित्य क्रियादि से निबटकर अभी बाहर के बरामदे में धरी आरामकुर्सी पर बैठकर चाय पी रहे थे कि नेताजी पधार गए। नेताजी यानी पंखीलाल कहार। अभी वे ही बैठे हुए हैं दरोगाजी के समक्ष। बरामदे में दो मूढ़े पड़े हैं। नेताजी एक मूढ़े पर बैठ गए हैं। उनके लिए भी चाय बुलवा दी गई है।

दरोगाजी चौखाने वाली तहमत पर मलमल का कुर्ता पहिने हुए हैं। पुराने रईसों वाली आभा और इत्मीनान चेहरे पर है। इधर नेताजी इलाके की पिछड़ी जातियों और समुदायों के नेता हैं। उनके चेहरे पर अपनी तरह की आभा है। सच यह है कि वे एक लोकल छुटभैया नेता हैं। एरिया के सभी अफ़सरों तक उनकी पहुँच है। विशुद्ध बिचैलिए हैं। अफ़सरों के बीच उनके इस रूप की अपनी ही इज़्ज़त है। जहाँ तक नेतागिरी का प्रश्न है, उनकी नेतागिरी उनके पिछड़े होने पर टिकी है। हर ज़ोर-जुल्म की टक्कर में वे अपना पिछड़ा वर्ग निकाल लेते हैं, जेब में धरे चाकू की भाँति। इलाके में नेताजी की इसी कारण एक न्यूसेंस वैल्यू तो है ही। पिछड़ी राजनीति को ही ओढ़ते, बिछाते, सिलते, रफू करते उनकी उम्र गुज़री है। पिछड़ों के आगे न बढ़ पाने में ही उनको सब हासिल है। अगड़ों से भी ज़्यादा इनकी रुचि है कि पिछड़े कहीं आगे न बढ़ जाएँ। राजनीति उनके बिचौलिए के काम में सहायक है। ठीक-ठाक पैसे बना लेते हैं।

स्थानीय राजनीति में वे पंडिज्जी के धुर विरोधी हैं। पंडिज्जी उन्हें 'मूँ' नहीं लगाते। वे बड़े नेता हैं। पंडिज्जी इनकी तुलना में बहुत बड़े खिलाड़ी हैं। वैसे तो ये जनाब भी 'नेताजी' ही कहाते हैं पर कोटरा वाले लोग तो पंडिज्जी को ही असली नेताजी मानते हैं। नेताजी इस बात से बहुत दुखी रहते हैं कि पंडिज्जी के रहते उनकी कोई बड़ी हैसियत नहीं बन पा रही है। एक सहज, नैसर्गिक-सी चिढ़ है नेताजी को पंडिज्जी से। वे इस सिलसिले में कुछ करना चाहते हैं, पर समझ नहीं पाते कि ख़िर क्या करें?

बिचौलिये बनकर दरोगाजी को भी जब-तब नोट-पानी दिलवाते रहते हैं वे और उसी प्रसंग में स्वयं भी बढ़िया कमा लेते हैं। इसी एक योग्यता के कारण नेताजी को दरोगाजी के घर पहुँच जाने तथा यहाँ की चाय तक पीने का विशिष्ट अधिकार मिला हुआ है।

"अरे, इसकी क्या जरूरत थी?" नेताजी ने चाय आती देखकर कहा है।

अर्दली चाय रख गया।

अब एकान्त था।

***

थानेदार ने चाय का घूँट लेते हुए पूछा :

"बताइए, कुटिया पर कैसे आना हुआ?"

नेताजी ने चाय का कप उठाते हुए बताया कि हम तो बस यूँ ही आ गए हैं।

"यहाँ बंगले के सामने से निकल रहे थे। देखा कि आप बरामदे में बैठे हैं सो..."

"इतनी मोटी जाफरी से भी हमें देख लिया?" दरोगाजी ने व्यंग्यपूर्वक पूछा।

"झलक दिख जाती है श्रीमान्। जाफरी से इत्ता तो नज़र आ ही जाता है।" नेताजी ने कहा।

"चलिए, झलक देख के हमें पहिचान लेते हैं, यही बड़ी बात है।" दरोगाजी ने कहा।

"यह तो प्यार है हमारा।" नेताजी बोले।

"... नेताजी का यही प्यार हम पर बना रहे।" दरोगाजी बोले।

नेताजी ने हाथ जोड़ दिये।

दरोगाजी चाय पीते-पीते दूरत रहे नेताजी को।

"कैसी लगी?"

"क्या?"

"चाय..."

"... बढ़िया है श्रीमान्।"

"तो फिर अब बताइए, यहाँ कैसे आना हुआ? निकलते तो आप रोज ही हो, आज यहाँ कैसे?"

"एक काम भी था।" नेताजी ने कहा।

दरोगाजी मुस्कुरा दिये। चाय खत्म थी। कप को परे रखकर देखने लगे नेताजी को।

"बताइए!" दरोगाजी ने फिर कहा।

"छोटा-सा एक पर्सनल काम था।" नेताजी के स्वर में संकोच भी है, सतर्कता भी।

"बताएँगे तब न हमें पता चलेगा कि जिस काम को आप छोटा-सा बता रहे हैं वो कित्ता बड़ा है।" दरोगाजी अब पूरी तरह दरोगा के अवतार में थे।

"काम भौत छोटा है।" नेताजी ने फिर कहा।

"यार, आप तनिक खुल के बताएँ। आप तो हमें सब कुछ खोलकर दिखा दें, हम खुद देख लेंगे कि बड़ा है कि छोटा?" दोनों जन इस द्विअर्थी संवाद पर जोर से हँस पड़े।

"काम छोटा-सा है पर, बस आप ही कर सकते हो," नेताजी ने कहा।

"अच्छा! कौन-सा काम?" दरोगाजी ने फिर से पूछा।

"इस पंडिज्जी के बच्चे को एक बार हथकड़ी डाल के भरे बाजार से निकलवा दें, बस।" नेताजी ने अन्ततः बता दिया कि वह छोटा-सा काम क्या था।

"अभी किसका नाम लिया आपने?" दरोगा को मानो विश्वास ही नहीं हो रहा कि नेताजी ने पंडिज्जी का है। नाम लिया

"पंडित।"

"बे स्कूल वाले पंडिज्जी?"

"हाँ।

"दीक्षितजी?"

"हाँ।

"और इसे आप छोटा-सा काम बताते हैं? यार, जे तो हद है!" दरोगाजी ने कहा।

"पर आप ही हमारा जे काम कर सकते हैं। जित्ते का कहेंगे, इंतजाम हो जाएगा।"

"बात पैसे की है ही नहीं।" दरोगा ने स्पष्ट मना कर दिया।

"अरे आप बताओ तो? कित्ता? जो भी खर्चा लगेगा..." नेताजी को विश्वास है कि पैसे देकर कुछ भी कराया जा सकता है। दरोगा लोगों को तो पैसा दिखा दो, बस। बोलते हुए कुछ इसी तरह के भाव उनके मुख पर भी थे जिन्हें दरोगा ने खूब पढ़ भी लिया।

दरोगाजी किंचित असहज हुए पर अपनी भावनाओं पर नियंत्रण करके चुप रह गए।

इधर, उनकी इस चुप्पी का गलत अर्थ निकाल लिया नेताजी ने। वे और उत्साहित हो चले।

"हम एक लाख तो अभी एडवांस कर देंगे।"

"आप दस लाख भी कर दें तो भी हम यही कहेंगे कि जे काम नहीं हो सकता।" दरोगा ने कहा।

"अरे, आपके लिए यह कौन-सा मुश्किल काम है? बस, एक बार। ... आप तो हथकड़ी डाल के एक बार भरे बाजार से इस आदमी का जुलूस निकाल दें, बस। स्साले की सारी ऐंठ निकल जाएगी।"

"ऐंठ निकालबे के और भी तरीके होते हैं नेताजी।"

"पर इनके लिए जेई सबसे सटीक होगा श्रीमान्। एक बार कानूनी तौर पे इनका मूँ काला कर दें, बस। आप जो भी खर्चा बताएँ, हम ..."

"पता है न, कित्ते बड़े आदमी हैं पंडिज्जी?"

"तभी तो हम इत्ती रकम..."

"...आप उनका जुलूस निकलवाने के लिए बोल रहे हो जो हमारा ही जुलूस निकलवाने में सक्षम हैं। लखनऊ तक जोरदार पकड़ है उनकी।"

"उनकी पकड़ का हमें पता है।"

"दूसरे ही दिन हमारा ट्रांसफर करा देंगे, तुरंत।"

"दरोगा की ताकत को इत्ता भी कमजोर न मान लें आप। रकम, जो आप बोलें और..."

"हमें अपनी ताकत का पता है, और कमजोरी का भी।"

"फिर बताइए न... कुछ रकम तो हम अपने साथ में ले के आए हैं।"

"वैसे आप पंडिज्जी को हथकड़ी लगवाना ही क्यों चाहते हैं?"

"वो बात छोड़िए न।"

"नहीं, वह सब तो आपको बताना पड़ेगा।"

"मान लें कि यह सब पालिटिक्स का खेल है। बस, ऐसा जान लें। आप तो अपने पैसे बता दें।"

"यह कोई पालिटिक्स नहीं है, यह तो हम भी समझ रहे हैं। दरोगा की कुर्सी पर बैठे आदमी को आप इत्ता चूतिया भी न मान लें नेताजी।"

"आप तो अपनी रेट बता दें," कहकर नेताजी ने कुर्ते की जेब में हाथ डालकर पचास हजार रुपयों की एक गड्डी चाय के जूठे कपों के पास रख दी।

स्साला! तबसे पैसे, रकम, एडवांस, खर्चा, रेट बोलता ही चला जा रहा है; दरोगाजी स्वयं को जब्त नहीं कर सके।

"हमें रंडी समझ रखा है क्या नेताजी?" नोटों की गड्डी को देखते हुए दरोगाजी बोले।

"अरे नहीं साहब।" नेताजी अचकचा गए।

"क्यों? रेट तो तुम बार-बार ऐसेई पूछ रहे हो मानो इलाहाबाद के जीरो रोड पर खड़े हो?"

"नहीं साहब, क्षमा करें। हम ऐसा सोच भी कैसे सकते हैं?" नेताजी घबरा गए।

"नहीं सोच रहे तो भौत अच्छा है पर हमें भी लगा कि आपको यह बात साफ कर दें कि हम थाना चला रहे हैं, कोठा नहीं।"

"अरे मालिक, आप तो बुरा मान गए!"

"क्यों न मानेंगे, बताइए?"

"ऐसा बिलकुल नहीं है साहब। हमारा तो आपसे रोज का काम पड़ना है। आपसे कभी कोई काम कराएँगे तो उस काम की फीस भी पूछना हमारा कर्तव्य है। है कि नहीं? बस, वही बात थी। आप तो नाहक बुरा मान गए।"

दरोगाजी मुस्कुराने लगे।

दलालों और छुटभैयों को इसी तरह बीच-बीच में कसते न रहो तो ये लोग दरोगा की ताकत से ज़्यादा अपनी रिश्वत की ताकत को समझने लगते हैं। अबे, रिश्वत तो तुम्हारा बाप भी देगा पर मात्र रिश्वत के कारण दरोगा की कुर्सी को कम न समझा जाए।

"अरे, हम तो सोच रहे थे कि आप पंडिज्जी का नाम किसी मर्डर या डकैती में डलवा दें श्रीमान्। किसी भी गवाह से कह दें कि उनका नाम ले दे। बस।" नेताजी ने सुझाव दिया।

दरोगाजी कानून जानते हैं और कानून के गैरकानूनी इस्तेमाल की सीमाएँ भी।

"देखिए, न तो आप चूतिया हैं, न हम। और हम तो बिलकुल भी नहीं।"

"ऐसा क्यों कह रहे हैं आप?"

"क्योंकि आपकी बात बड़ी ही चूतियाटिक है।"

"हमने सोचा कि मर्डर में नाम रहेगा तो हथकड़ी डालने में आपको आसानी रहेगी।"

"पंडिज्जी पर हाथ डालना इत्ता आसान काम समझे हैं क्या?"

"आसान काम होता तो हम इत्ते पैसे..."

"यार, तुम फिर पैसों की बात कर रहे हो? चलो, अब तुम हमें बता ही दो। इस काम के हमें कित्ते पैसे दोगे?"

"आप आज्ञा दें?"

"नहीं, आप ही बताएँ? आपका क्या संकल्प है?"

"आप खुद बता देते तो..."

"मान लो, हम कहें कि पाँच लाख पाँच लाख रुपए तो तुरन्त अभी..."

"... इत्ते भी न माँगें सरकार।"

"क्यों? पूरा काम तो बीस लाख का है।"

"इत्ते देकर तो हम पंडिज्जी का मर्डर करा सकते हैं।"

"फिर वही करा लें।"

"अरे, हमने तो एक बात कही।"

"ऐसी बात आगे से कभी कहना भी मत, और सोचना भी मत। हम इस कुर्सी पर यूँ ही नहीं बैठे हुए हैं। अभी तुमाए हाथों में हथकड़ी डालेंगे, बिना कोई लिहाज किए, सीधे। परेड निकाल देंगे कोटरा के बाजार से, मर्डर करने वाले की भी, सुपारी देने वाले की भी।"

"अरे, हमने तो यूँ ही..."

"... पता है न? ऐसी बात पर भी पुलिस केस बनता है। पढ़ते हैं न, डकैती डालने की योजना बनाते हुए तीन लोग गिरफ्तार? सुने हैं न? क्या है वह? डकैती अभी हुई नहीं है। बस, कुछ लोगों को हमने डकैती की बातें करते हुए पाया है, बस। कानून के लिए यही भौत होता है। डकैती की तैयारी भी अपराध है। मन में पंडिज्जी के मर्डर की बात लाने पर भी केस बनता है नेताजी।" कहकर दरोगाजी हँसने लगे।

नेताजी ने हवा में हाथ जोड़ दिये।

"आप राजा हैं इस इलाके के। जैसे हमें आप मर्डर की सोचबे पे भी हथकड़ी डालबे का कानून बता रहे हैं, बस वैसई कछू पंडिज्जी पर भी लगा दिया जाए न?"

"हमने तो बस, ऐसेई कहा है। कानून में इत्ता आसान भी नहीं है कि..."

"... ऐसा न कहें साहब, सबको पता है।"

"क्या पता है?"

"कि कानून आपकी ताबेदारी में है। हथकड़ी आपकी संपत्ति। डंडा आपका गुलाम। हवालात के मालिक आप। सलाखों का आगा और पीछा, दोनों के मालिक हैं आप; जिसे चाहें, अन्दर बेंड़ दें।"

"थानेदारी इतना भी सरल काम नहीं है नेताजी। ... पता है न? पंडिज्जी इस इलाके के गणमान्य नागरिक हैं। गणमान्य नागरिक होने का मतलब समझते हैं न?".....

"हमें तो बस जे पता है कि हम गणमान्य नहीं हैं।"

"आपको जे भी पता होना चइए कि पंडिज्जी पक्के गणमान्य नागरिक हैं। बे अच्छे-खासे गणमान्य हैं। भौत बड़े वाले गणमान्य हैं। अभी उस दिन एसडीएम ने भी फोन पर हमें याद दिलाते हुए जेई कहा था कि पंडिज्जी इलाके के गणमान्य हैं।... गणमान्यों के साथ कानून को भी बड़ा सँभलकर चलना पड़ता है। उनके साथ कभी कुछ हुआ तो पूरे इलाके में खलबली मच जाती है।"

"साहब, वही तो हम चाहते हैं कि आप एक बार जे खलबली करा दें, बस। आप एक बार हथकड़ी भर डाल दें। हम न्यूज चैनल वाले, अखबार वाले - सबको इकट्ठा कर लेंगे। दिन भर टीवी पर इसकी न्यूज भी चलवा देंगे। सारा देश देख लेगा कि पंडिज्जी हथकड़ी पहिने कैसे दिखते हैं।"

"नेताजी, तनिक समझो। अरे, हम उनके मोंड़ा पे तो हाथ डाल नहीं पाए, आप उन पर हाथ डालने की बात कह रहे हो? आपको पता ही नहीं है कि वो आदमी कित्ता हरामी

है!"

"सबको पता है।"

"वैसे हमें हरामियों से भी डर नहीं लगता है नेताजी परन्तु पंडिज्जी तनिक अलग किस्म के हरामी हैं। वे बड़े सुलझे हुए हरामी हैं। भौत गहरे आदमी हैं। बाँभनों के तो सर्वेसर्वा हैं ही, वे ठाकुरों के भी सगे हैं। उन्होंने सबके लौंडों को फर्स्टक्लास में पास कराया है। यादवों की जजमानी है सो आपके उधर भी पूजनीय हैं। उनको हथकड़ी डालने की सोचना भी हमारी थानेदारी के लिए बड़ा ब्लंडर कहाएगा।" दरोगाजी ने कहा।

दरोगाजी जब यह सब कहकर रहे थे, उनकी निगाह टेबल पर रखे पचास हजार रुपयों पर लगातार लगी हुई थी।

कहा। "हम तो आपके पास बड़ी उम्मीद से आए थे।" नेताजी ने

"उम्मीद बाँधने पर कोई कानूनी रोक तो है नहीं। कोई भी, कित्ती भी बाँध सकता है। पर आदमी को असलीयत का ज्ञान भी होना चाहिए। अकेली उम्मीद बाँधने भर से क्या होता है? मान लो, हम उम्मीद बाँध लें कि माधुरी दीक्षित कभी हमें देगी तो क्या वो हमें दे देगी? बताइए न? पता है न आपको?

कभी न देगी। तो उम्मीद का तो ऐसई है।"

नेताजी निराश हो गए।

"देख लें दरोगाजी।" नेताजी ने अंतिम कोशिश के तौर पर कहा।

"देख लिया।"

"फिर?"

"फिर क्या?"

नेताजी चुप हो गए। चुप ही बैठे रहे कुछ देर।

दरोगाजी कभी उनको देख रहे थे, कभी मेज पर धरी नोटों की गड्डी को।

"तो हम चलें श्रीमान्?" कहकर अचानक ही नेताजी उठ गए। जाने की तैयारी में उन्होंने मेज़ पर धरे पचास हजार रुपयों की गड्डी उठाने का उपक्रम किया तो दरोगाजी ने हाथ के इशारे से उन्हें रोक दिया।

नेताजी ने प्रश्नवाचक मुद्रा में दरोगाजी को देखा। दरोगाजी अब आरामकुर्सी पर और भी ज़्यादा पाँव फैलाकर

लगभग लेट से गए थे।

"बमोंठी डकैती कांड का तो सुने हैं न, नेताजी?" दरोगाजी ने अर्थपूर्ण निगाहों से उन्हें देखते हुए पूछा।

नेताजी के चेहरे का रंग अचानक ही बदल गया।

वे दरोगाजी को देखने लगे।

"बमोंठी डकैती का क्या?"

"हमने तो आपसे अभी बस जे पूछा है कि इस डकैती का आपको पता तो है न?"

"क्यों? इलाके में सबको पता है।" नेताजी का स्वर बदला-बदला-सा है।

"तगड़ी लूट भई है।" दरोगाजी ने नेताजी के चेहरे से नज़र नहीं हटाई है।

"सुना हमने भी है।" नेताजी ने कहा।

"आगे आपका किसी और डकैती का भी प्लान हो तो अभी से हमें बता दें, और जे भी बता दें कि बमोंठी डकैती का सारा माल अकेले हजम कर जाएँगे या ...?"

"...हम कुछ समझे नहीं?"

"हम समझाते हैं न। पर आप पहले यह तो समझाएँ कि पुलिस वालों को इत्ता चूतिया क्यों समझ रहे हैं आप?" दरोगाजी ने कहा।

नेताजी ने पचास हजार की गड्डी उठाते-उठाते मेज़ पर वापस रख दी।

"जे सब आप हमें काय को सुना रये हैं?" नेताजी ने पैसा मेज़ पर वापस रखते हुए सहज बनने की कोशिश करते हुए कहा।

"फिर बताइए न, बमोंठी डकैती में अपने हिस्से की बात हम किससे करें?" दरोगा ने

हँसकर पूछा।

"क्या मतलब?"

"हम आपको मतलब भी समझा देंगे। आप तो यह संयोग देखिए। आज ही आप दूसरे काम से इतें पधार गए वर्ना हम एकाध दिन में आपको बुलवाते ही।"

"काय को?"

"जेई, बमोंठी डकैती की पूछताछ के लिए।"

"अरे, हम काहे किसी डकैती-फकैती में उलझेंगे साहब?" नेताजी ने कहा। उन्हें कोफ़्त हुई कि उनकी आवाज़ में यह कंपन जैसा क्यों है?

"बमोंठी वाले वैदजी को तो जानते हैं न? डकैती डालबे वालों की जो हुलिया बे बता रये हैं, उससे आपके एक बड़े खास आदमी की पहिचान बन रही है। हमने उसे पकड़ के सामने खड़ा कर दिया तो वैदजी तुरत पहिचान लेंगे।"

"ये सब पूरी तरह झूठ है।"

"वो तो खैर जाँच से पता चल ही जाएगा। जहाँ हमने सही जगह पर दो सुलेमानी डंडे लगाए, आपका आदमी सब उगल देगा। रकम और गहने भी बरामद करा देगा। किसी का नाम भी ले सकता है। सोच लें। और अगर हमें इत्ती मेहनत करनी पड़ी तो हम माल तो सारा धर ही लेंगे, डकैती डालबे वालों से अपना मेहनताना अलग वसूलेंगे। हाँ, अभी हम जरूर एक मौका देने को तैयार हैं।" दरोगाजी ने कहा।

नेताजी ने हथियार डाल दिये, बोले, "तो क्या कहते हैं आप?"

दरोगाजी मुस्काए, बोले, "आप अपने आदमी हैं सो हम आपको टाइम देने को तैयार हैं। अपने उस आदमी को तुरन्त फरारी पर निकालने का बोल दें। समय रहते उसे इधर से निकाल दें।"

दरोगाजी ने ऐसा कहते हुए पचास हजार की गड्डी टेबल से उठा ली।

नेताजी कुछ देर तक चुपचाप खड़े रहे, फिर संकोच के साथ बोले, "पर वह अपना बड़ा ही खास आदमी है श्रीमान्।"

"यार, इत्ता खास था तो उसे कुछ समझा के तो भेजते। स्साले को डकैती की बेसिक चीज़ों की नालिज है नहीं और चले हैं जनाब डकैती डालने। वो अपने मूँ पे तनिक ठीक

से ढट्टी नहीं बाँध सकता था?"

"साहब, हमने इसकी फरारी करा दी तो इतें हमारे भौत से काम रुक जाएँगे।" नेताजी परेशान हैं।

"और वो यहाँ रह गया तो हमें एक दिन उसकी शिनाख्त करानी ही पड़ेगी। तब वो तो जेल जाएगा ही और काम तो आपके तब भी रुकेंगे। फिर यह बहुत दुबला-पतला, दो हड्डी का आदमी है। पुलिस की ठुकाई दो मिनट भी बरदाश्त न कर पाएगा। उसने कहीं आपका नाम अपने मूँ से निकाल दिया तो हम धर्मसंकट में पड़ जाएँगे कि आपका क्या करें? कानून बड़ा बेमुरव्वत होता है नेताजी।"

"आप हमें धमकी दे रहे हैं?" नेताजी ने बुरा माना।

"धमकी की कोई जरूरत नहीं है हमको। हमारी वो आदत भी नहीं। हम तो बस, आपको बता रहे हैं। जाँच की आँच आप तक भी पहुँच सकती है। बाद में फफोलों पे मलहम लगाते बैठने से अच्छा है कि इस आदमी की फरारी करा दें।"

"अब आप कह रहे हैं तो..."

"...बाकी हम पूरे हिसाब के लिए एक दिन आपके साथ बैठते हैं।" दरोगाजी आरामकुर्सी से उठ गए। उठकर जाफरी के दरवाज़े तक आए। घर आए मेहमान को ठीक से रुख़सत करने का शिष्टाचार जानते हैं वे।

नेताजी ने कुछ नहीं कहा। वे चुपचाप नमस्कार करके बाहर की तरफ़ चलने लगे।

"चलते हैं।" जाते-जाते बस इतना बोले।

बरामदे के दरवाज़े पर खड़े दरोगाजी ने कहा, "हाँ, हाँ, जरूर चलिए।"

नेताजी बाहर निकले, फिर कुछ सोचते हुए वे सड़क पर निकल गए। तभी दरोगाजी ने पीछे से आवाज़ देकर नेताजी से मुस्कुराकर पूछा, "तो फिर पंडिज्जी को हथकड़ी लगवाने का किस्सा तो अपुन अभी भूल ही जाते हैं, क्यों नेताजी?"

नेताजी ने पलटकर सुना ज़रूर पर वे बिना कोई उत्तर दिये निकल गए।

अब हम ऐसे नादान शख़्स की कथा बताते हैं जो रिश्वत देने के बाद अपने घर पर पाँव फैलाकर निश्चिंत बैठ गया था कि अब तो अपना काम हो ही जाएगा। उस भोले आदमी ने रिश्वत को आटोमैटिक वेंडिंग मशीन जैसा सरल मान लिया था कि इधर से हमने रिश्वत डाल दी है तो उधर से वांछित सामान निकल ही आएगा। काश कि सरकार की मशीन के पुर्जे, खटके, तार, बटन और खाँचों का तिलिस्म इतना ही आसान होता। वही हुआ। मशीन धोखा दे गई।

रिश्वत तो पूरी दी थी पर काम नहीं हुआ।

रिश्वत के मामले में एक साख़ थी बड़े साहब की कि उनने एक बार आपसे रिश्वत ले ली तो फिर आपका काम रुकेगा नहीं। नादान शख़्स को भी उन पर यही विश्वास था। साहब ने रिश्वत स्वीकार की थी। फिर काम तो होना ही था। और रिश्वत भी बिस्मिलजी के थ्रू दिलवाई थी। साहबों को रिश्वत दिलवाने में बिस्मिलजी की भी अपनी ही एक साख़ है। साहब हर एक के हाथ से लेते नहीं। वो तो बिस्मिलजी बीच में रहे तो साहब ने उसकी रिश्वत ले ली थी वर्ना लोग तो बड़े साहब को रिश्वत देने को तरसते हैं। बिस्मिलजी ने ही देने के बाद बताया था कि साहब ने पूरे पैसे गिनकर रख लिए हैं, आपका काम हो जाएगा।

अब वही आदमी रो रहा है। काम नहीं हुआ। अगर रिश्वत के बाद भी काम न होगा तो सरकार से नागरिक का भरोसा ही उठ जाएगा। ऐसा आदमी बड़ा रुवंटा हो जाता है। कहीं भी मौका भर मिले, अपने धोखा खाने की कहानी सुनाते हुए रोने लगता है।

पंडिज्जी वकील साहब के पास बैठे हुए थे। दोनों इस बात के लिए ईश्वर को धन्यवाद दे रहे थे कि उस दिन रिश्वत देने के पहले ही लैंड-रिकॉर्ड अफसर सिक-लीव पर चले गए वर्ना अपना पैसा फँस गया होता! वहीं, वकील साहब के दफ्तर में ये धोखा खाए हुए नादान सज्जन भी किसी काम से बैठे हुए थे। रिश्वत का ज़िक्र हुआ और वे रोने लगे। अपनी कहानी बताकर कहने लगे कि रिश्वत का पैसा फँसता नहीं डूब ही जाता है। वकील साहब उनकी बात से असहमत दिखे, बोले, "डूबने तो खैर हम कभी देते नहीं। इत्ते सालों से हम जैन साहब को रिश्वत दिलवाते रहे हैं। ऐसे में एक नाता बन जाता है अफ़सर से। अब अगर हमारे ये जैन साहब पंडिज्जी का काम न करते तो हम उनसे पैसे तो पूरे ही वापस करा लेते।" यह बात सुनकर नादान शख़्स रोते-रोते हँसने लगा। बोला कि, "ठीक यही बात हमें बिस्मिलजी ने भी कही थी पर आज तक हमें तो एक धेला भी वापस नहीं मिला।" इस बात पर वकील साहब ने बड़ा आश्चर्य प्रकट किया। बोले, "कायदे से तो आपके पूरे पैसे वापस मिलने चाहिए थे। रिश्वत का यही नियम है। हम कभी रिश्वत दिलवाते हैं तो पैसा कुछ दिनों को फँस भले ही जाए,

डूबता तो कभी नहीं।"

फिर अचानक ही वकील साहब ने पूछ लिया, "आपने साहब को खुद अपने हाथों से पैसे दिये थे?"

"और क्या! नकद चालीस हजार दे के आए थे बिस्मिलजी ।"

"आपने दिये थे कि बिस्मिल जी ने?"

"एकई बात है।"

"एक ही बात नहीं है न, तभी ..."

"...कैसे?"

"क्या बिस्मिलजी ने आपके हाथों से साहब को दिलवाए थे?"

"हमारे हाथों से कैसे लेते साहब?"

"क्यों? क्यों न लेंगे भैया? हम भी किसी को दिलवाएँ तो क्लाइंट को हमेशा साथ रखते हैं। उसी से दिलवाते हैं। अभी भी, हमने पंडिज्जी से यही कहा था कि पैसे लेकर वे खुद लैंड-रिकॉर्ड दफ्तर पहुँच जाएँ। है न पंडिज्जी? हम अगर दिलवाते तो पंडिज्जी के हाथ से ही पैसे दिलवाते। क्लाइंट स्वयं दे तो उसके मन में एक विश्वास बना रहता है।" वकील ने रिश्वत दिलवाने का अपना नैतिक तरीका स्पष्ट किया।

"पर हमने तो बिस्मिलजी को ही दे दिये थे।"

"इसका मतलब जे कि आपने खुद अपने हाथ से साहब को नहीं दिये?"

"एक ही बात है। बिस्मिलजी ने तो दिये हैं।"

"आपके सामने दिये थे न?"

"नहीं, पर बे खुद नकदी पहुँचा के आए थे।"

"तो उनसे एक बार पूछ लो; उनने पहुँचाए भी थे कि नहीं?"

"क्यों न पहुँचाएँगे?"

"क्यों? क्यों पहुँचाएँगे? मान लो कि खुद उनका मन जे पैसे रखने का हो गया हो तो?"

"अरे, ऐसे कैसे!"

"बस, ऐसेई..."

"...पर बे तो हमारी आँखन के सामने अन्दर साहब को दे के आए थे।"

"फिर तो जाकर सीधे साहब से ही पूछो..."

"...पर साहब से तो हम कभी मिले ही नहीं।"

"यार, अभी तो आप कह रहे थे कि आपकी आँखों के सामने साहब ने पैसे लिए थे, फिर?"

"नहीं। हम साहब से नहीं मिले थे।"

"फिर जे आँखन के सामने कैसे कहाया?"

"बिस्मिलजी खुद हमें साहब के बंगले पे लेकर गए थे। गेट पे पहुँचकर बोले कि तुम इतईं रुको। बे, जे कह के अकेले अन्दर चले गए कि हम साहब को रकम दे के अभी आते हैं।"

"और तुम?"

"हम फाटक पे खड़े रहे।"

"और तुमने बिना खुद देखे जे मान लई कि बे तुमाई रिश्वत दे आए होंगे? क्यों?"

"और क्या? इसी के लाने तो बे अन्दर गए हते।"

"अजीब चूतिया आदमी हो यार!"

"इसमें क्या चूतियाई?"

इसी को अपनी आँखों के आगे पैसा देना बता रहे थे न आप?"

"तो?"

"तो क्या? जेई तो गलती भई तुमसे।"

"कैसे? बे पैसा ले के खुद हमारे सामने बंगले के अन्दर गए..."

"...इसे आँख के सामने देना नहीं कहा जाता। जे तो पीठ पीछे रिश्वत देना कहाया भाई साब।"

"पर बे अन्दर तो गए हते?"

"तो? इससे जे कैसे पता चलता है कि बिस्मिलजी ने साहब को पैसे पहुँचा ही दिये होंगे? हो सकता है कि बे उनके चपरासी का हाल-चाल ले के बाहर ही बाहर लौट आए हों?"

"नहीं वकील साब, बिस्मिलजी इस मामले में भरोसे के आदमी हैं। हम उनका सब पता करके ही बिस्मिलजी के पास गए थे।"

"जब बिस्मिलजी के सत्त पर आपको इत्ता भरोसा है तो फिर हम क्या बोलें?"

"रिश्वत तो साहब खा गए है ही ।" । हमसे पैसा लेकर भी काम नहीं किया उन्होंने "

"यार, साहब लोग फालतू का हल्ला कभी नहीं चाहते। इसीलिए, रिश्वत ले लें तो काम जरूर करते हैं।"

"हमारा तो नहीं किया?"

"तभी तो! आप सीधे बिस्मिलजी से ही पूछो न। कहो कि तुम्हारा पैसा वापस दिलवाएँ।"

"वे दिला देंगे?"

"अरे, कोशिश तो करो न। उनने साहब को पैसे दिये भी थे कि नहीं- जरा जे भी पूछो।" वकील साहब ने सलाह दी।

नादान शख़्स सोच में पड़ गया था।

***

यहाँ से कहानी का पार्ट टू शुरू होता है।

वकील साहब ने उसके उठते-उठते पंडिज्जी से जो बात कही थी वह लगातार उसका पीछा करती रही। ... वकील साहब ने कहा था कि इनको बिस्मिलजी से एक बार यह

बात पूछनी तो जरूर चाहिए। अगर रिश्वत देने पर भी काम न हुआ करे तब तो लोगों का इस गणतंत्र से ही भरोसा उठ जाएगा।

तो पार्ट टू यूँ हुआ कि फिर वह शख़्स एक दिन बिस्मिलजी के घर पहुँच गया।

बिस्मिल साहब ने खिड़की से ही उसे आता देख लिया।

वे पहले से जानते थे कि यह एकाध दिन आने ही वाला होगा। थोड़ी देर तक तो उन्होंने दरवाज़ा ही नहीं खोला। फिर, बड़े कराहते, कूलते हुए चलकर गए और दरवाज़ा खोल दिया। कराहते हुए ही उन्होंने इनको बैठने को कहा। बोले कि आप तनिक देर बैठो, हम ज़रा टट्टी करके आते हैं। तीन दिनों से हम बड़े बीमार चल रहे हैं। दस्त लग रहे हैं, बवासीर अलग तकलीफ़ दे रही है और भगंदर के कारण मूँ के बल लेटना पड़ रहा है। बुरे हाल हैं। बस, खटिया पे कैसे तो भी पड़े हुए हैं। टट्टी, पेशाब करने के लिए ही उठते हैं। तीन दिन से तो घर के बाहर भी नहीं निकले हैं। ... ऐसा कहकर वे अन्दर चले गए।

नादान शख़्स उनकी प्रतीक्षा में बैठा हुआ सूखता रहा। पूरे आधे घंटे बाद ही बिस्मिलजी वापस लौटे। फिर उन्होंने इस शख़्स के मुँह से वह सारा किस्सा सुना जिसे वे पहले से जानते थे। फिर उसको वे बड़े आश्चर्यचकित दिखे कि अरे, ऐसे कैसे? हम तो यह मानकर चल रहे थे कि अब तक आपका काम हो ही गया होगा। आपने भी बीच में कभी हमको जे बात नहीं बताई। अभी आप बता जरूर रहे हैं पर हमें बिलीव ही नहीं हो रहा! ऐसा कैसे हो सकता है? हमारी तबीयत जरूर खराब है पर अब आपके लिए हम कल ही कालपी जाते हैं। हम खुद ही वहाँ पहुँचकर पता करेंगे कि यह सब कैसे हुआ? सीधे ही पूछेंगे साहब से।

नादान शख़्स समझ नहीं पा रहा था कि बीमार शख़्स से प्रश्नोत्तर करके उसे और परेशान कैसे करे? पर कुछ बुनियादी सन्देह मन में खलबला रहे थे। पूछना ज़रूरी था। वकील साहब ने मन में सन्देह भी पैदा कर दिया था।

"जब हमसे पैसे पूरे लिए थे तो आदमी को हमारा काम तो करना चाहिए था न?"
नादान शख़्स ने धीमे स्वर में
बुदबुदाते हुए बात शुरू की।

हो?" "आदमी? आदमी ! भैया, जे तुम 'आदमी' किसे कह रहे

"क्यों?"

"इत्ते बड़े अफसर को आदमी तो मत बोलो; फालतू में हमें कन्फ्यूजन होता है। यार, अफसर, अफसर होता है और आदमी, आदमी। अफसर और आदमी में फर्क को

समझते हो कि नहीं?" बिस्मिलजी ने पूछा।

"कैसा फर्क? एकई तो बात है।" नादान शख़्स वास्तव में नादान था।

"हद्द बात करते हो यार। जे स्साली एकई बात दिखती है तुम्हें?"

"क्यों?"

"तुम अफसर को भी आदमी मानते हो? यार, हद्द हो गई जे तो। फिर तो तुम किसी दिन देवता को भी आदमी कहने लगोगे?

"देवता लोगन की बात अलग है।"

"तो अफसर को भी देवता ही समझो।"

"चलो, देवता सही। पर हमसे नकद पैसे धरा लिए थे तो देवता को हमारा काम तो करना था न?"

"कभी हनुमानजी के मन्दिर पर जाकर तुमने ऐसी शिकायत करी है? बताओ न, कभी पुजारी से जा के ऐसे पूछा है कि तुमने हमसे प्रसाद तो पूरा चढ़वा लिया और तुम्हारे हनुमानजी ने हमारी मनौती भी पूरी नहीं करी? तो भला ऐसा कैसे?"

"हनुमानजी तो भैया भगवान ठहरे ! उनकी मर्जी; काम करें, न करें।"

"तो साहब लोग भी भगवान से कोई कम हैं क्या? याद रखो, पैसा लेकर अफसर हम पर एहसान ही करता है।"

"पर वो अपनी अफसरी भी तो निभाएँ?"

"वो तो हम कालपी जाकर पता करेंगे न। कह तो रहे हैं। दोपहर तक तबीयत ठीक लगी तो कल हम उनके बंगले पर होकर आते हैं। सब ठीक से पता करते हैं।"

"पता करबे से क्या होना है? सब तो पता तो है।"

"तो तुम क्या चाहते हो? साहब को हम फाँसी पर चढ़ा दें?"

"हम जे तो नहीं कह रये?"

"बड़ा अफसर है भाई साहब। उससे तो बस पता ही किया जा सकता है। और वो भी हमें भौत विनम्र होकर उनसे पूछना पड़ेगा।"

"अच्छा, आप उनसे क्या पता करेंगे?"

बिस्मिलजी लड़खड़ा गए।

वे कुछ बोल पाते, तब तक वह नादान शख़्स बोला, "आप तो उनसे बस जे पूछिएगा कि हमसे पैसे लेने के बाद भी उनने हमारा काम काय को नहीं किया? और काम नईं करना था तो फिर हमसे पैसे काय को लिए?"

"अफसरों से ऐसे नहीं पूछा जाता।"

"क्यों? क्या गलत है इसमें?"

"गलत कुछ भी नहीं है पर इसके जवाब में वो आपकी गांड़ पे लात मार सकता है।"

"अच्छा, आप उनसे जे तो कह सकते हो कि बे हमारा पैसा वापस कर दें?"

"और जो बे कहने लगें कि कौन-सा पैसा, तो फिर? रिश्वत की कोई रसीद मिलती है क्या?"

"आप तो, कैसे भी हमारे पैसे वापस दिला दो।"

"यार, ऐसा भी होता है कहीं? आपई बताओ; आप हमें अपने घर पे बुला के बढ़िया पूड़ी-खीर खिला दो, फिर दो दिन बाद वापस आ के हमारे पेट से उसे निकालना चाहो, तो वो निकलेगी क्या?"

"आप तो हमारे पैसे वापस दिला दो।"

"यार, चूतियाटिक बातें तो तुम करो मती। जाओ, पूरे जमाने से खुदई पता कर लो। दी गई रिश्वत कभी वापस मिलती है क्या?"

"फिर?"

"फिर क्या? हम भी उनसे बस हाथ जोड़ के पूछ ही सकते हैं।"

"क्या पूछेंगे?"

"जेई कि हुजूर, उस दिन आपको चालीस हजार दिये थे तो..."

"... तो वे क्या उत्तर देंगे?"

"हम जे बात कैसे बताएँ?"

"बे जो भी बताएँ आप तो उनसे इत्ता भर कहना कि अगर हमें पैसा वापस नहीं मिला तो हम उनके बंगले के सामने खड़े होकर ऐलानिया जहर खा लेंगे। सच्ची कह रहे हैं हम। हमने अपनी बड़ी मोंड़ी की जचकी के लाने रखी हुई थी वो रकम।"

बिस्मिल साहब घबरा गए। ये स्साला, कुछ ऐसी-वैसी गड़बड़ वास्तव में न कर बैठे?

"भैया, तुम इत्ते बड़े अफसर के सामने तमाशा करबे की सोचियो भी मती।" उन्होंने घबराकर चेतावनीनुमा सलाह दी।

"भैया, हमाई मेहनत की कमाई थी वो।"

"सबकी कमाई मेहनत की ही होती है। रिश्वत भी तो अफसर की मेहनत की कमाई ही होती है। तुमें पता भी है, अफसरी की झाँकी जमाबे में कित्ती मेहनत लगती है?"

कहकर बिस्मिलजी पेट पर हाथ फेरने लगे।

"पेट खलबला रहा है।" वे स्वगत बोले।

नादान शख़्स कुछ देर तक तो उनका पेट देखता रहा, फिर देर तक उन्हें तब तक घूरता रहा जब तक वे असहज नहीं हो गए।

नादान शख़्स की आँखें भर आई थीं।

"तरैयाँ काय को भर आईं तुमाँईं?" बिस्मिलजी ने पूछा।

"मन तो खूब जोर-जोर से रोने का हो रहा है हमारा।"

"अगर ऐसे रोबे से तुम्हारा काम हो जाए तो हम भी तुम्हारे संग रो लेते हैं।"

नादान शख़्स कुछ बोला नहीं। बस, सिर को झुकाए हुए कुछ सोचता रहा मानो हिम्मत बटोर रहा हो।

ख़िरकार उसने हिम्मत जुटाकर वह प्रश्न पूछ ही लिया जिसे पूछने के लिए वो यहाँ तक आया था।

"अच्छा बिस्मिलजी, हमें एक बात सच्ची-सच्ची बतइयो।"

"बोलो?"

"तुमने हमारे पैसे अफसर को दिये तो थे न, कि ऐसेई?"

बिस्मिल साहब अचानक पूछे गए इस प्रश्न से एकदम बेपटरी हो गए। यार, हम तो इस स्साले को एकदम चूतिया समझते थे! तुरन्त कुछ भी कहते नहीं बना उनसे। सँभलने में थोड़ा समय लगा। अन्ततः प्रकृतिस्थ होकर शिकायती स्वर में उन्होंने पूछा, "जे सीख तुमें किसने दी?"

"किसी ने नहीं दी। वो तो बस हमईं पूछ रये हैं कि..." नादान शख़्स ने कह तो दिया परन्तु उसका लड़खड़ाता हुआ स्वर उसकी चुगली कर रहा था।

बिस्मिलजी उसे लगातार घूर रहे थे। वह असहज हो गया। उसे घबराता देख बिस्मिलजी वापस अपने चोले में आ गए।

"हमें इस मामले में डालने से पहले सलाह क्यों नहीं ली तुमने?"

"किनसे?"

"बेई जिनसे अब जे सीख ले के तुम हमसे इत्ती बड़ी बात कह गए हो अभी? उनसे पहले ही पूछ लेते कि जे बिस्मिल भैंचो भरोसे का आदमी है कि नहीं? अरे, हम तो तुमें अपना मान के इस पाप कर्म में उतरे थे वर्ना पैसे अफसर को मिलने थे, काम तुमारा होना था; हमें इस नीच कर्म में क्या मिल जाना था, बताइए? जे तो स्साली, कोयले की दलाली में हाथ काला होबे की बात सिद्ध कर दी तुमने।" कहकर बिस्मिल साहब रिसानी मुद्रा में बैठ गए।

अचानक ही वे पेट पर और भी जोर-जोर से हाथ फेरने लगे। उन्होंने चेहरा और भी बीमार बना लिया। नादान शख़्स यह सब देखकर घबरा गया। उसने रिश्वत तो कभी दी नहीं थी। रिश्वत की जटिलताओं को भी उसने कभी जाना नहीं था।

नादान शख़्स लीपापोती पर उतर आया।

"अरे, हमारा जे मतलब बिलकुल नहीं था जो तुम समझे हो बिस्मिलजी।" वह बोला।

"कहा तो आपने जेई है।" बिस्मिलजी ने रूठे स्वर में कहा।

"अरे, हमारा काम नहीं हुआ न, सो दिमाग चकरा गया है हमारा। मूँ से कुछ का कुछ निकला जा रहा है। हमारा मतलब..."

"अच्छा तो बतलाइए, आपका क्या मतलब था?"

"देखिए, आपने हमसे कहा था न कि अफसर बड़ा ईमानदार है; रिश्वत लेगा तो काम कर देगा।"

"तो? हमने क्या गलत कहा था?"

"पर हमारा काम तो उन्होंने नहीं किया न?"

"वही तो हमें उनसे पूछना है।"

"हमारी कोई बात आपको बेजा लग गई हो तो भैया क्षमा करना। हमने तुमें अपनी आँखन से पैसा देते हुए नहीं देखा था सो..."

"...तो क्या कोई अफसर दो गवाहों के सामने तुमसे रिश्वत लेगा? क्या बड़े साहब किसी एफिडेविट पे सही लगाकर तुमें रसीद देंगे कि हमने इनसे रिश्वत ली? भइया, रिश्वत तो होता है टोटली आपसी भरोसे का खेल। भरोसे पे ही सारा लेन-देन होता है।"

"भैया, हमारा दिमाग फिर गया है। खीसे के पैसे निकर गए हैं सो..."

"... दिमाग को सँभालो महाराज। रिश्वत देने में पैसा डूब भी सकता है। हमने जे बात तुम्हें शुरू में ही बताई भी जरूर होगी, क्योंकि हम जे बात हरेक से बताते हैं।"

नादान शख़्स अब अत्यन्त दयनीय हो गया।

लो।" "फिर भी भैया, हमारे लिए कुछ कोशिश करके देख तो

"वो तो हम करेंगे ही। साहब से चिरौरी करेंगे कि मालिक, गरीब आदमी है। शायद उनसे कुछ पैसा वापस मिल जाए। कौन अफसर कब पिघल जाए, पता थोड़ेई चलता है! हम पूरी कोशिश करेंगे।"

"बस भैया, इत्ता भर काम करा दो तो..."

"...करेंगे।"

"फिर हम आपसे कब पता करें?"

"यार, अभी तो तुम जाओ अपने घर और हम जाते हैं टट्टी। बाकी, हम वहाँ जाएँगे।

अगर हम कुछ भी रकम उनसे निकाल पाए तो कल ही तुम्हारे घर पटक के जाएँगे। पर आगे से किसी ऐसे-वैसे काम के लिए हमारे पास आना मत। हवन करते में अंगुरियाँ कैसे बर जाती हैं, आज हमने तुमसे सीख लिया।" स्साले को दस हज़ार रुपए कल रात में ही वापस पकड़ा देंगे तो बचे हुए तीस हज़ार पचाने में आसानी होगी -ऐसा सोचते हुए बिस्मिलजी उठ गए।

नादान शख़्स "ऐसी बात नहीं है भैया" जैसे वाक्य बोलता रह गया।

बिस्मिलजी तेज़ी से उठकर अन्दर चले गए।

नादान शख़्स भी अन्ततः वहाँ से उठ गया। अब वह इस अपराधबोध से भरा हुआ था।

बिस्मिलजी पर निरर्थक सन्देह करने के लिए वह स्वयं को माफ़ नहीं कर पा रहा है।

मेरा तिरंगा कहाँ गया?

पूरे कोटरा को ख़बर हो गई है कि गजानन बाबू इस बार का राष्ट्रपति का चुनाव लड़ने वाले हैं।

गाँव में तरह-तरह की बातें चल रही हैं। कोई कहता है कि गजानन बाबू फार्म भी भर चुके हैं, बस उस पर सांसदों के दस्तखत होने हैं सो आगे का काम रुका हुआ है। बे अब दिल्ली जा के पकड़ेंगे सांसदों को। ... सांसद उनकी सुनेंगे?... क्यों न सुनेंगे? ... कोटरा के लोग भी उनकी सुनते हैं कि नहीं? फिर? यदि रामराज्य लाने में उनकी तनिक भी रुचि है, तो सांसदों को सुनना तो पड़ेगा। ... कोई तो यह भी बता रहा है था कि दिल्ली में चर्चा है कि जब गजानन बाबू खुद खड़े हो रहे हैं तो बिना किसी के दस्तखत के भी फारम जमा कर लिया जाएगा; कोटरा में जो हो, पर दिल्ली में गजानन बब्बा की बड़ी इज्जत है। ... "घंट इज्जत है", किसी ने जवाब में कहा। कहते तो यह भी हैं कि गजानन बाबू ने अपनी खुपड़िया के टाँकों की फोटू ही फार्म पे चिपका दी है; सरकार को झक मार के फार्म जमा करना पड़ा है। दस तरह की बातें।

हाँ, यह सच है कि देश में राष्ट्रपति चुनाव होने वाला है।

यह भी सच है कि गजानन बाबू ने तय कर लिया है कि अगर देश को बदलना है तो उन्हें ही राष्ट्रपति बनना होगा। वे इस बार राष्ट्रपति पद के लिए खड़े होंगे। यह सच है पर यह भी सच है कि कोई भी पार्टी उन्हें खड़ा करने को राजी नहीं है। उन्होंने सबसे पूछकर देख लिया है। कालपी के कांग्रेस दफ़्तर के तो वे तीन चक्कर मार चुके हैं। उनसे कहा भी कि इस बार हमारा नाम दिल्ली भेजा जाए तो हँसकर टाल गए हरामी लोग। बताइए, ऐसे कहीं देश चलता है? ... "जब हम तीसरी बार उनसे मिले तो जिला-प्रमुख हमसे बोले कि राष्ट्रपति बनबे के लाने तो सरकार ने इस बार आदमी के पास शेरवानी का होना कंपल्सरी कर दिया है। बताइए, बे हमसे पूछने लगे कि कोई शेरवानी है आपके पास? अब कोई शेरवानी तो नहीं है भैया हमारे पास ! हम तो जे बंडी-धोती पहिनबे वाले आदमी हैं भैया। कहीं होती भी तो हम न पहिनते। जिला-प्रमुख कहने लगे कि कांग्रेस का तो अब जेई नियम है कि आदमी के पास शेरवानी होगी तभी उसे केंडीडेट बनाया जाएगा। बताइए। जे तो हाल है कांग्रेस का। हमने समाजवादी, भाजपा, भैनजी वाली पार्टी से भी कहा कि हमारा नाम भेज दो तो जे स्साला देश बच जाए पर सबने ऐसेई कुछ न कुछ बहाने बना दिया।"

."फिर?" फिर क्या, अब गजानन बाबू निर्दलीय लड़ने वाले हैं।

इसी के चलते गजानन बाबू आजकल बेहद व्यस्त हो गए हैं। जहाँ भी खड़े दिखते हैं, लोग उन्हें घेर लेते हैं। ..."आजकल बड़ी ही चूतियाटिक बातें करते हैं पगलट बाबा।

तुम उनसे एक बार जे भर पूछ के देखो कि आप राष्ट्रपति कब बनबे वारे हो दद्दा? बस। फिर देखियो। फिर सुनियो उनकी बातें। कभी उनसे पूछियो। भौत मजा आएगा।" ... सब कहते हैं कि गजानन बाबू को इस बार पागलपन का जो दौरा पड़ा है, उससे उनका निकलना मुश्किल रहेगा। देशभक्ति तो खुपड़िया पर पहले से चढ़ी हुई थी अब जे राष्ट्रपति बनबे की धुन उनका जो न करा दे! बेचारे गजानन बाबू।

***

"जयहिंद बब्बा।"
"जयहिंद।"
"महात्मा गांधी की जय।"
"महात्मा गांधी की जय।"

बाज़ार के बीच का वही चबूतरा।

वहीं बैठे हैं अभी गजानन बाबू। लोग आ आकर 'जय हिंद' बोलते हैं और चबूतरे पर बैठ जाते हैं।

लोगों के पास फुर्सत है और गजानन बाबू के पास देशभक्ति है। समय काटने के लिए देशभक्ति से बढ़िया चीज़ और क्या होगी? देशभक्ति को एक बार मज़ाक का विषय बना दो, फिर देखो, कित्ता मज़ा आता है। लोग मज़े ले रहे हैं। कोई आदमी गजानन बाबू की भाँति इतनी गंभीरता से देशभक्ति की बातें कैसे कर सकता है? बस यही बात विनोद पैदा कर रही है अभी। लोग गंभीरता का अभिनय करते हुए गजानन बाबू से हीही-ठीठी कर रहे हैं। नहीं, वे गजानन बाबू की बेइज़्ज़ती नहीं कर रहे। बड़ी इज़्ज़त है उनकी लोगों के मन में परन्तु पागलपन पर हँसी तो आती है न? लोग यहाँ देशभक्ति का मखौल भी नहीं उड़ा रहे हैं। बड़े देशभक्त हैं ये सारे लोग। आपको विश्वास नहीं हो रहा है न? अच्छा, अभी 'भारत माता की जय' का नारा लगवा के देख लें। ये ही लोग अभी ऐसा गगनभेदी नारा लगाएँगे कि आसमान में सुराख हो जाए! पर अभी देशभक्ति का चुटकुला चल रहा है तो उसका भी मज़ा क्यों न ले लिया जाए?

"जयहिंद दद्दा।"

"जयहिंद।"

"महात्मा गांधी की जय।"

"महात्मा गांधी की जय।"

माहौल बन गया है।

"कब निकल रये महाराज?"

"कितें खों?"

"दिल्ली।"

"बस, निकलते हैं।"

" पैदल तो नहीं कढ़ राए ? दांडी मार्च जैसा कुछ नहीं करने की नहीं ठानी है ?"

"आजकल घुटने पिराते हैं बेटा, वरना हम पैदल ही जाते।" गजानन बाबू बोले।

"राष्ट्रपति बनबे के बाद पहला काम आप जेई करियो -अपना घुटने बदलवाने वाला आपरेशन जरूर करवा लइयो।" एक ने कहा।

"एकदम सही बात। राष्ट्रपति बनबे पे आदमी को तेज-तेज चलना पड़ता है।" दूसरे ने कहा।

"राष्ट्रपति तेज न चले तो का करे? आगे-पीछे मिलेट्री वाले लोग लगे रहते हैं। रगेदते हैं कि तेज चलो दद्दा।" तीसरे ने कहा।

"वैसे राष्ट्रपति को उत्ता चलना नहीं पड़ता है भैया। बढ़िया, पाँच घोड़ों वाली बग्घी रहेगी दद्दा की सेवा में।" पहले ने कहा।

"दद्दा का जल्वा रहेगा।" दूसरे ने कहा।

"किसी जल्वे के लाने राष्ट्रपति नहीं बन रहे हैं हम।" गजानन बाबू रिसा चले।

"हम आपकी नहीं, घोड़ों के जल्वे की बता रये थे। स्सालों को ऐसा सजा- धजा के बग्घी में जोतते हैं कि उनकी शक्ल बग्घी के मालिक टाइप निकल आती है।" कोई बोला।

"वैसे जल्वा तो आपका भी रहेगा ही।" कोई और बोला।

"यार, दद्दा के जल्वे की तो आप बातई न करो। इतें उनका कोई कम जल्वा है क्या? जल्वे के लाने दिल्ली नहीं जा रये बे।" एक ने कहा।

"बे तो उतें रामराज लावे की खातिर जा रये हैं। है न महाराज?" कोई बोला।

"हाँ, वही सब सोचते रहते हैं हम।" गजानन बाबू ने ऐसी

गंभीरता से कहा मानो राष्ट्रपति पद की शपथ लेने के बाद

पत्रकार वार्ता में बोल रहे हों।

सुबह का समय है। दुकानें धीरे-धीरे खुल रही हैं। आवाजाही बढ़ गई है।

"रामराज में जे सब नहीं चलेगा भाई साब। एकदम टेम पे दुकान खोलनी पड़ेगी गुप्ताजी।" किसी ने गुप्ताजी को आवाज़ देकर बताया। गुप्ताजी अपनी छोटी-सी दुकान का शटर खोल रहे हैं।

"अरे, दद्दा का आर्डर होगा तो हम तो पाँच बजे से ही खोल के बैठ जाएँगे। रामराज के लाने तो हम रोज सुबह चार बजे का अलार्म लगा दिया करेंगे।" गुप्ताजी ने हँसकर

कहा।

"बताते हैं कि आप देश में घी दूध की नदियाँ निकलवा देंगे?" किसी ने गजानन बाबू से पूछा।

"हाँ, हमने इसकी योजना बना ली है।"

"घी और दूध की नद्दी अलग-अलग बहेंगी कि..." एक ने पूछा।

"...इसमें पूछबे की क्या बात है? भैया, घी की अलग बहेगी, दूध की अलग।" दूसरे ने गजानन बाबू की तरफ़ से उत्तर दिया।

"और मठ्ठा? उसकी नदी?"

"मठे की नदी तो नहीं बहेगी पर शायद उसकी नहर निकाली जाए, क्यों दद्दा?" किसी और ने कहा।

"दूध वाली नदी को पानी वाली नदी से दूर बहाना पड़ेगा, क्यों दद्दा?"

"वो तो हैई। अगर पानी मिल जेहे तो दूध अपने रामदयाल अहीर टाइप न हो जाएगा?"

गजानन बाबू सबकी बातें सुन रहे हैं।

वे आश्चर्यचकित हैं कि घी, दूध की नदियाँ बहाने की उनकी बात को कोटरा निवासी क्या समझ रहे हैं! गजानन बाबू ने प्रत्युत्तर में बस यही कहा कि देश में दूध, घी की नदियाँ बहाने के कागजात भी एकदम तैयार हैं।

"कभी हम लोगन को भी बे कागजात दिखाए जाएँ न दद्दा?" किसी ने कहा।

"कागज तो भौत हैं। कुछ बात पैम्फलेट में लिखी है। तुम लोग बस हमारा पैम्फलेट पढ़ लेना।"

"कितें है पैम्फलेट?"

"अभी हमने कालपी की जयवंती प्रेस में दिया है छपने को।"

"पैम्फलेट में ऐसा क्या है?"

"खुदई पढ़ के देखियो। हम तुमें का बताएँ? खुदई देख लेना। सब कुछ एकदम क्लीयर छपा है हमारे इस पैम्फलेट में। रामराज लाबे की, घी-दूध की नदियाँ बहाबे की सारी

योजनाएँ लिखी हैं हमारे पैम्फलेट में। जेई पैम्फलेट हम बाँटेंगे उतें दिल्ली जा के, संसद में। तब देखियो, जेई सारे नेता हमें दौड़-दौड़ के वोट देंगे। हमारी योजनाएँ ही ऐसी हैं कि सब हमारे पीछे लग जाएँगे कि आपई को राष्ट्रपति बनाना है। सच कहते हैं हम। देखना।" गजानन बाबू के चेहरे पर संतोष तथा गर्व की आभा है। अब ज़रूर सब ठीक हो जाएगा। वे सब कुछ ठीक कर देंगे। एक बार राष्ट्रपति बन गए तो फिर देश में सब ठीक हो जाएगा। गांधीजी का सपना मरा नहीं है। हम जरा-सी उँगली भर कोंच देंगे तो सपना उचक के खड़ा हो जाएगा। रामराज्य का सपना साकार होने के दिन आ गए हैं।

"जयहिंद!" अचानक ही, बैठे-बैठे, बस यूँ ही, जोर से नारा लगा दिया गजानन बाबू ने। उत्साह से लबरेज रहते हैं वे आजकल ।

उनके चेहरे पर एक पागल चमक देखी जा सकती है।

"जै हिंद!" नारे के जवाब में सबने कहा। कुछ ने हँसकर कहा, कुछ ने जोश में।

"... महात्मा गांधी की।"

"जय!" सबने ज़ोर से कहा। गजानन बाबू का ख़ुद का स्वर सबसे ऊँचा था।

गजानन बाबू मंत्रमुग्ध और मंत्रबद्ध, दोनों हो गए। चबूतरा अचानक ही मऊरानीपुर के मंडी चौराहे में तब्दील हो गया। वे सपनों में उतर गए। आज तो चौराहे पर तिरंगा लगाकर ही हटेंगे।

"इंकलाब!" वे और ज़ोर से चिल्लाए।

"ज़िंदाबाद!" लोगों ने ऊँची आवाज़ में नारा लगाया।

वे अब बेचैन होकर सब तरफ़ कुछ खोज रहे हैं। अब वे पूरी तरह से मऊरानीपुर के सपने में विचर रहे हैं। उन्हें अभी के अभी वहाँ चौराहे पर तिरंगा लगाना है। अभी। और वह मिल ही नहीं रहा। कहाँ गया मेरा तिरंगा?

"क्या खो गया दद्दा?" किसी ने पूछा।

"हमारा तिरंगा कहीं नहीं दिख रहा।" गजानन बाबू परेशान हैं।

"तिरंगा तो आजकल बस छब्बीस जनवरी और पन्द्रह अगस्त को ही लगता है न महात्माजी?" किसी ने कहा।

"और बाकी के टेम?" गजानन बाबू ने आश्चर्य से पूछा।

"बाकी के टेम तो तिरंगा स्टोर में धरा रहता है।" एक ने कहा जो शायद किसी दफ़्तर में काम करता है।

"ऐसे तो फिर हम अपने तिरंगे को भूल ही जाएँगे? बताओ, अभी हमें तिरंगा न मिला तो हम यहाँ क्या फहराएँगे? ...और अंग्रेजों को इस बात का पता चला तो अंग्रेज तो भैंचो भौत खुश होंगे। बे तो हमें झंडा लगाबे से रोक नहीं पाए पर आज हम अपने सुराज में ही तिरंगा न फहरा पाए तो देश की बड़ी बेइज्जती हो जाएगी भैया। ... कोई तो हमारा तिरंगा तो ढूँढ़ दो भैया। ... कोई तो हमारा तिरंगा ला के दे दो। हमें मऊ के चौराहे पे अभी तिरंगा लगाना है।" गजानन बाबू उत्तेजित हो गए।

"जे चौराहा नहीं है दद्दा। चबूतरा है।" किसी ने कहा। "तिरंगा तो ला दो बेटा। ... मेरा तिरंगा खो गया है। ... तिरंगा ही न रहा तो हम राष्ट्रपति बन के क्या करेंगे?" गजानन बाबू उद्वेलित होकर बेचैनी से यहाँ-वहाँ घूमने लगे। अभी तक उनका मज़ा लेते लोग भी उनकी यह उत्तेजक अवस्था देखकर घबरा गए।

सब लोग उन्हें शान्त करने की कोशिश करने लगे।

"मिल जाएगा। ... आपका तिरंगा अभी मिल जाएगा।" किसी ने पीठ पर हाथ फेरकर उन्हें सांत्वना देने की कोशिश की।

गजानन बाबू फूट-फूटकर रोने लगे।

रोते-रोते भी वे निरन्तर बुदबुदाते जा रहे हैं, "मेरा तिरंगा, मेरा तिरंगा।"

स्त्री होने की सजा : अँधेरे में एक स्त्री विमर्श

रात के दस बज रहे हैं।

गली सूनी पड़ी है। निचाट अँधेरा है। दो दिन हुए, खंभे का लट्टू फोड़ दिया पटवारी के छोटे मोंड़ा ने। यह गली पटवारीजी की गली के नाम से प्रसिद्ध है। पटवारीजी बीस वर्षों से यहीं रहते हैं। पटवारीजी स्वयं भी दो बातों के लिए प्रसिद्ध हैं : एक, कि वे बिना नोट लिए कटी उँगली पर भी नहीं मूतते। कोई कभी यूँ ही खाली जेब लिए उनके पास पहुँच भी जाए तो वे उससे यही पूछते है : "यार, तुम खुदई बताओ न? तुमाई कटी

उँगली पर आखिर हम क्यों मूतें? उँगरिया तुम्हारी कटी है। जरूरत तुम्हारी है। तुम्हें जे उम्मीद क्यों है कि हमने पानी पी-पी के इत्ती मेहनत से जो पेशाब बनाई है, उसे हम ऐसेई तुमाई कटी उँगली पर बहा देंगे? क्यों मूतें हम? बताओ न? और अभी तो वैसे भी हमें पेशाब आ नहीं रई। तुम कल आना।

कल आ के पूछना। ... और कल तुम ऐसे सूखे-सूखे न पधार जाना। थोड़ी समझदारी दिखाना। इत्ता तो तुमें भी पता होगा कि दुनिया में हर काम का रेट होता है? पंडिज्जी भी मुर्दा फूँकबे का मंत्र पढ़ने की दान-दक्षिणा लेते हैं कि नहीं? फिर? हमसे तुम ऐसेई सूखे-सूखे कैसे मुतवा लोगे भैया?"

तो पहली बात तो यही कि पटवारीजी पैसे का मुँह देखे बिना किसी का भी मुँह देखने को राजी नहीं होते हैं। एकाध आदमी ने कलेक्टर साहब से उनकी शिकायत करने की धमकी दी तो पटवारी जी ने स्वयं ही उन्हें कलेक्टर साहब का फोन नम्बर दे दिया; कहा कि आप उनसे तो जरूर ही बात कर लो। यह तो सरकार का बनाया सिस्टम है भैया। कलेक्टर साहब को भी इसका पता है। उन्हें सब पता है। पता है।

और दूसरी बात?

उनकी दूसरी बात है, पत्नी को पीटने की उनकी आदत, जज़्बा तथा बेशर्मी।

वे बड़े ही सहज होकर पत्नी की पिटाई करते हैं और खुलेआम करते हैं। इसे वे अपना लगभग नैसर्गिक-सा अधिकार मानते हैं। इसे वे अपने पुरुष होने का हिस्सा भी मानते हैं। वे पुरुष हैं, यह सिद्ध करने के लिए भी वे पत्नी को पीटते हैं। हर दिन किसी न किसी बात पर पीटते हैं क्योंकि वे हर दिन पुरुष हैं। फिर उनकी ऊपरी कमाई इतनी है कि उनको घर जाने से पहले रोज़ पीनी भी पड़ती है। दिन की कमाई के अनुपात में रात में पीते हैं, फिर पीने के अनुपात में पत्नी की ठुकाई करते हैं। और जिस दिन न पी पाए हों तब? तब भी पीटते हैं। अभ्यास बना रहना चाहिए।

यदि लोहे की छड़ जैसी बेजान चीज़ को भी नियमित पीटा जाए तो वह चपटा होकर पैने चाकू में तब्दील हो जाएगी। लोहे और नारी में कदाचित यही अन्तर है जबकि पैना होने की काबिलियत नारी में भी है। और इसी का फ़ायदा उठाते हैं पटवारीजी। गालियाँ देते जाते हैं और जो भी उनके हाथ में आए, उसी से पत्नी को मारते चले जाते हैं।

पत्नी बस 'हाय', 'हाय' करती जाती है जो पटवारीजी के लिए उद्दीपन का काम करता है। पत्नी परम्परा से मजबूर है; पति को परमेश्वर मानने की परम्परा। परमेश्वर हैं पटवारीजी। 'जाहि बिधि राखे राम, ताहि बिधि रहिए' वाला मसला है। परमेश्वर ही यदि पीटने की ठान ले तो फिर उसे कौन बचाए?... हरि इच्छा। ईश्वर ने ही तो उसे पत्नी बनाया है, पटवारीजी को पति। वे पति हैं। जैसे हैं, हैं। अब वे जो चाहें, करें। मारें, प्यार

करे; मर्जी उनकी। वरदान दें, या चाहें तो कठोर सज़ा दे दें। स्त्री होने की सज़ा। पत्नी ने ख़ुद की माँ को भी वर्षों तक ऐसे ही पिटते देखा है। उसी से सीखा है कि मौन ही स्त्री का गहना है। वह भी पिटती है। वह भी चुप रहती है। पटवारीजी स्वयं उसके इस गुण की तारीफ़ करते हैं। कभी लाड़ में उसे 'गुणवंत नार' तक कह डालते हैं। कभी मौज में आ जाएँ तो पत्नी के मौन और धैर्य की बड़ी तारीफ़ भी करते हैं।

आस-पास के दस घरों तक यह पिटाई सुनाई देती है। सब सुनते हैं। प्रकृति में अनेक आवाजें हैं। ऐसी ही एक सहज आवाज़ 'हाय', 'हाय' और गालीगलौज की भी है-सब ऐसा मानते हैं। लोग इसे अपने दैनिक जीवन का एक बेमतलब-सा पार्श्व संगीत मानते हैं। निष्ठुर जीवन का बेसुरा पार्श्वसंगीत। शोर है, बस। क्या तो इसे ध्यान से सुनना? क्यों इस पर ध्यान देना? अरे, वही, रोज का तो मामला है। किसी को इससे कोई मतलब नहीं। पत्नी उनकी है। वे जानें। हम क्यों पड़ें उनके मामले में? उनका मामला है। उनके बीच की बात है। वे जो चाहें करें। वे हमारे बीच कभी पड़ते हैं क्या? सबकी अपनी-अपनी स्त्री है। उसके साथ वह जो भी करे, करे। मारे, कूटे, चूमे, चाटे, जो करे। पटवारीजी सात फेरे लगा के इसे अपने घर लाए हैं। दोनों ने सात जन्मों तक इक-दूजे का साथ देने की कसम खाई है। अग्नि को साक्षी मान के फेरे लगाए हैं। अब वो उनकी औरत है। उनकी मेहरारू । उनकी संपत्ति है। अब वे जानें, उनका काम जाने। वे सात जन्मों तक भी पीटें तो यह उनके दाम्पत्य का आंतरिक अरेंजमेंट है। मारने-पीटने से पति-पत्नी के संबंधों की पवित्रता पर कोई असर नहीं पड़ता। संबंध चलता रहता है। पवित्र रिश्ता कायम रहता है। देखा ही होगा;

कैसा बढ़िया मोटा सिंदूर भरती हैं पटवारिन अपनी माँग में। बताइए, किसके नाम का सिंदूर है यह? पटवारीजी के नाम का ही है न? तो भैया, जे होती है पतिव्रता नार! तीजा का निर्जला व्रत रखती हैं वे। आजकल, टीवी में देख-देखकर करवा चौथ भी मनाने लगी हैं। पूरे हृदय से पूजा-पाठ करके प्रार्थना करती हैं कि ईश्वर पटवारीजी को लम्बी उम्र दे, ईश्वर स्वयं उन्हें सधवा की मौत दे, अर्थी पर वे सोलहसिंगार करके ही लेटें। ...तो क्या पत्नी की तमन्ना है कि ईश्वर उसके ताउम्र पिटने की माकूल व्यवस्था करके रखे ?

पर कभी, किन्हीं कोमल पलों में तो पटवारीजी को अपराधबोध तो होता होगा न? कभी तो अपने इस घिनौने कृत्य पर शर्म आती होगी उनको?... ऐसा लगता तो नहीं। वे सुबह ऐसे सहज उठते हैं मानो उन्होंने रात में ऐसा कुछ किया ही न हो! माथे पर शर्म की एक लकीर भी नहीं होती। चेहरे पर पश्चात्ताप की एक शिकन भी नहीं। सब भूल गए हों मानो। ...और, जब हम ही सारी बात भूल चुके हैं तो फिर तुमको भी भूल जाना चाहिए। ... मुझे फालतू फंड की कोई शिकायत नहीं चईए। "यदि तुमने सुबह-सुबह, रात की पिटाई की शिकायत की तरफ इशारा भी किया तो हम तुम्हें अभी भी रात जैसा ही घसीट के मारेंगे; आगे से ऐसी बेकार की शिकायतें करनी भूल जाओगी।" ... पटवारीजी सुबह उठते ही पत्नी को पूरे आत्मीय अधिकार से आवाज़

देते हैं। उनके हृदय पर कहीं कोई बोझा ही नहीं होता। ... "काहे का बोझा भाई? बोझा महसूस करते तो क्या रात में हम ऐसे आराम से सो पाते?..." हमने तो बढ़िया ठुकाई भी करी और रात में बढ़िया नींद भी ली। देखिए न, सुबह कैसे, एकदम तरोताज़ा होकर उठे हैं। ... उठकर पुकारा है पत्नी को कि चाय में अदरक तनिक अच्छे से डाल देना।

...और उनके बच्चे? वे भी तो रोज़ रोज़ अपनी माँ की पिटाई देखते-सुनते होंगे? क्या पटवारीजी कभी अपने बच्चों की नहीं सोचते हैं? उन पर कोई गलत असर पड़ेगा, ऐसा नहीं सोचते हैं क्या?... और बच्चे कोई विरोध नहीं करते उनका? वे

लोग कुछ क्यों नहीं करते? पर वे आख़िर करें क्या? वे, बस देखते-सुनते, और जीवन के स्याह पक्ष के बारे में नया-नया सीखते रहते हैं। वे किशोरवय के चार बच्चे हैं। माँ-बाप के बीच में पड़ने की उनकी उम्र नहीं, हैसियत भी नहीं। इनमें से दो तो पुत्रियाँ हैं। ये क्या देखती होंगी इस रोज़ घटती दुर्घटना में? शायद वे दोनों नित्य अपनी नियति से साक्षात्कार करती हैं। या, कदाचित, नित्य ही विद्रोह के बीज पड़ रहे हों उनके मन में? कदाचित, ख़ुद के स्त्री होने के ही विरुद्ध होती जा रही हों ये लड़कियाँ? कदाचित कोई और ही स्त्री बनने की मौन तैयारी चलती हो उनके मन में। काठ-सा चेहरा लिए, माँ को पिटता देख रही इन लड़कियों के चेहरे बहुत कुछ छुपा ले जाने में माहिर हो गए हैं। वे अगर बड़ा होने से भयभीत रहती हों तो भी आश्चर्य नहीं होना चाहिए। और उनके दोनों पुत्र? दोनों शायद अपने पुरुष होने की ट्रेनिंग ले रहे हैं, और बेशर्म होने की भी।

पटवारीजी के घर में कोई शर्मिंदा नहीं। जो है, वो बताती नहीं। बताएगी तो और पिटेगी।

***

पंडिज्जी की मोटरसाइकिल जब पटवारीजी की गली में घुसी तब भी वहाँ यही सब चल रहा था।

पटवारिन की 'हाय' 'हाय' बड़ी दूर से सुनाई दे रही थी।

पंडिज्जी ने गाड़ी को न्यूट्रल में डाल दिया। पटवारी की गली में मोटरसाइकिल की क्षणिक रोशनी भर गई। पंडिज्जी ने गाड़ी को लुढ़कने दिया। गाड़ी फिर पटवारीजी के घर के सामने ही जाकर रुकी।

पंडिज्जी ने गाड़ी का इंजन बन्द कर दिया। गली फिर से अंधकार में डूब गई।

'हाय-हाय' की आवाजें और पटवारीजी का ऊँची आवाज़ में गालियाँ देना-सब कुछ अब और भी तेज़ और साफ़ सुनाई दे रहा था।

"अब?" पंडिज्जी ने पलटकर पीछे की सीट पर बैठे बिस्मिलजी से पूछा।

"तनिक रुकें। वैसे भी जे तो इधर रोज का किस्सा है। अभी खत्म हो जाएगा। अपुन पटवारीजी से मिलकर ही चलेंगे।" बिस्मिलजी ने बड़े इत्मीनान से कहा और मोटरसाइकिल से उतरकर वहीं अंधेरी गली में नाली से बचते-बचाते खड़े हो गए।

पंडिज्जी ने अपने दोनों पाँव गली के कंक्रीट पर जमा लिए। वे मोटरसाइकिल पर ही बैठे रहे।

गली में बहुत अँधेरा है।

पिटाई का शोर इसी अँधेरे में यहाँ-वहाँ छुपता फिर रहा है। ... चलिए, किसी को तो शर्म आ रही है।

***

और पंडिज्जी इतनी रात को पटवारी के घर कैसे? क्यों?

अरे, वही !

वकील साहब ने कब्रिस्तान की भूमि मामले के लिए कुछ ऐसे पेपर सुझाए हैं जो अगर पटवारीजी बनाकर दे दें तो वे फिर लैंड-रिकॉर्ड दफ़्तर में भी काम आ जाएँगे और अदालत में भी। पंडिज्जी जानते हैं, इस काम के दाम लगेंगे। बिस्मिल को बीच में डालेंगे तो फालतू की संकोच भरी बातें बच जाएँगी। तब पटवारी को उनसे पैसे लेने में अड़चन न आएगी। बिस्मिलजी ने पहले ही इस बाबत पटवारी से बात कर रखी है। पटवारी ने तो रात आठ बजे ही घर बुलाया था परन्तु पंडिज्जी को कालपी से आने में ही बड़ी देर हो गई।

कालपी में उनकी मोटरसाइकिल पंचर हो गई थी।

उसी चक्कर में, कालपी से पंडिज्जी फिर आठ बजे रात को तो चल ही पाए।

रकम उठाने घर पहुँचे तो पता चला कि पत्नी सिरदर्द से तड़प रही हैं। पंडिताइन को चाहे जब 'आधा सीसी' सिरदर्द होता रहता है। तब तो विशेष तौर पर, जब उन्हें

पंडिज्जी से कोई शिकायत हो। अब यह पंडिज्जी का कर्तव्य बनता है कि वे पता करें कि पंडिताइन की मर्जी के ख़िलाफ़ ऐसा क्या घट गया? वैसे भी पंडिज्जी के ऐसे पचासों कर्म हैं जो पंडिताइन की मर्जी के विरुद्ध हैं- सो पता करना आसान नहीं रहता। ..."तुम लोग कम्पोंडर साहब को घर बुला के काहे नहीं दिखा दिये?" पंडिज्जी बुदबुदाए।... "अम्मा ने ही मना कर दिया। कहने लगीं कि हमें तो मर ही जाने दो", छोटे बच्चे ने बताया।

पंडिज्जी सोचने लगे- 'यार, जे औरत, हर बात का बतंगड़ बनाने पर क्यों तुली रहती है? ... सुबह कालपी को निकलते-निकलते इससे हमारी जरा-सी बहस जरूर हो गई थी पर वो थी बस ऐसेई। हम तो उसे भूल भी गए पर जे अभी तक जरूर उसी को पकड़े बैठी होगी। जे स्साला उसी का सिरदर्द है। ... वैसे बताओ, हमने ऐसा क्या गलत कह दिया था? एक तो तुमने सब्जी में इत्ता नमक झोंक दिया और तुम चाहती हो कि हम तुमसे कुछ बोलें भी न? और हमने तब भी तुमें ऐसा बोल क्या दिया? बस, जेई तो कहा था न कि फिर कभी ऐसी सब्जी बनाई तो हम थाली तुम्हारे मूँ पे फेंक देंगे। ...बताइए! हमने इसमें ऐसा क्या गलत कह दिया? कभी गुस्सा आ जाए तो आदमी ऐसेई तो बोलता है न?... पर इन्हें हमारी जरा-सी बात का इत्ता बुरा लग गया! अब हम इधर लीपा-पोती में टाइम भेस्ट करें कि पटवारी के पास जाएँ? ... पहले ही कालपी में हमें इत्ती देर हो चुकी है। वहाँ बिस्मिल हमारा इंतजार कर रहा है। पटवारी भी प्रतीक्षा में होगा।' ... लल्लो-चप्पो में आधे घंटे लगे। अपने हाथों से पंडिताइन को दर्द की गोली खिलाई। महारानी के सिर पे हाथ तक फिराया। ...'करना पड़ता है साहब। ... किया।' यह सब जल्दी-जल्दी निबटाकर ही पंडिज्जी घर से निकल पाए। फिर बिस्मिल को उसके घर से लिया। गाड़ी के पीछे बिठा के फिर इधर पटवारी की गली को भागे।

तब भी, रात के दस तो बज ही गए।

***

अब वे पटवारी की गली में ही खड़े हैं। पंडिज्जी मोटरसाइकिल की सीट पर बैठे हुए हैं। उनके बगल में बिस्मिलजी खड़े हैं। गली पर अँधेरे का कब्जा है और पटवारिन के रुदन का भी। दस मिनट ऐसे ही बीत चुके हैं।

"क्यों बिस्मिलजी? क्या कहते हो?" पंडिज्जी ने पूछा।

बिस्मिलजी चुप रहे। कुछ अंतराल के पश्चात् उन्होंने कुछ अलग ही उत्तर दिया :

"आपने जे बात नोट करी पंडिज्जी? गालियाँ एक से एक याद हैं यादवजी को?"

यादवजी अर्थात पटवारीजी।

पंडिज्जी ने मानो सुना ही नहीं।

"न हो तो अपुन कल आएँ? एकदम, सुबह-सबेरे?" पंडिज्जी ने पूछा।

"परन्तु पटवारीजी बस रात में में ही पैसे लेते हैं।" बिस्मिल ने समस्या बताई।

"यार, रिश्वत का जे कौन-सा टाइमटेबल बनाया है पटवारीजी ने?" पंडिज्जी हँसने लगे।

"कभी कुंडली दिखाई थी किसी महात्माजी को। उनने ही चेताया था कि तुम कभी भी दिन के टेम पर रिश्वत न लेना; कुछ दोष है पटवारीजी की कुंडली में।"

"वाह रे महात्माजी!" पंडिज्जी ने हवा में हाथ जोड़ दिये जिसे अँधेरे के कारण किसी ने नहीं देखा।

"महात्मा जी ने बताया था कि तुमारे पास लक्ष्मी तो भौत आएगी, पर आएगी वो रात में ही। दिन वाली लक्ष्मी तुम्हें फलेगी नहीं।"

"पर तनख्वाह तो दिन में मिलती है?"

"तो?... अकेली तनख्वाह कभी फली है किसी को ? तनख्वाह तो वैसे भी न फलने वाली लक्ष्मी ही होती है, हर सरकारी आदमी के लिए।"

दोनों हँसने लगे। पंडिज्जी ज़रा जोर से हँसे तो बगल के घर से निकलकर कोई शख़्स गली में आ गया। उसे नींद नहीं आ रही थी, या वह कोई जागरूक टाइप नागरिक है, पता नहीं।

"कौन है भाई?" उसने बाहर निकलकर अँधेरे में खड़े लोगों को पहिचानने की पहल की।

"हम हैं।" पंडिज्जी ने गुरु गम्भीर स्वर में सूचना दी।

पंडिज्जी का मानना है कि कोटरा में प्रत्येक नागरिक को उनकी आवाज़ को पहिचानना ही चाहिए।

"पंडिज्जी?" उसने पहिचान भी लिया।

"ठीक पहिचाने।" बिस्मिलजी ने कहा।

"अरे, आप भी। बिस्मिलजी!" उसने बिस्मिलजी की आवाज़ भी पहिचान ली।

कहा। "खूब पहिचाने।" पंडिज्जी ने प्रशंसा में कहा।

"हमें कोटरा में रहना है कि नहीं? बताइए, आपको न पहिचानेंगे?" कहकर वह शख़्स हँसने लगा।

"अरे वाह, साहूजी हैं जे तो? क्यों? पर जे बात भी आपने ऐन कही; छटाँक भर खून बढ़ा दिया हमारा।" पंडिज्जी ने भी उस शख़्स को पहिचान लिया।

"और आपने तो हम जैसे अकिंचन को पहिचान के हमारा पाव भर बढ़ा दिया।" शख़्स बोला।

"वाह!" बिस्मिलजी ने कहा।

अँधेरे में परिचय की औपचारिकताएँ संपन्न हुईं।

"इत्ती रात?" साहूजी ने पूछा।

"पटवारीजी से तनिक काम था पर इतें तो मारतमाम गालीगुफ्तार चल रहा है?" पंडिज्जी ने कहा।

"अरे जे? जे सब तो चलता रहता है।" साहूजी ने लापरवाही से कहा।

"फिर भी..."

"...अरे, कछू नहीं। आप तो बस इनका दरवज्जा जोर से खड़का दो। अभी, तुरत सब बन्द हो जाएगा। पटवारीजी का मन न भरा होगा तो बाकी का आपके जाने के बाद मार लिया जाएगा।" साहूजी ने बताया।

"यार, पत्नी पर ऐसे हाथ उठाना तो ठीक बात नहीं।" पंडिज्जी बुदबुदाए।

"तो कैसे उठाया जाए? अरे उनकी अपनी लुगाई है; मारें, पुचकारें, जो करें।" साहूजी पंडिज्जी से सहमत नहीं।

"फिर भी..."

"... चलिए, बे तो बिलकुल न मारें; तो क्या अपने मुँड़ पे बिठाएँ? आप भी कैसी बात कह रहे हो पंडिज्जी?"

"भैया, जमाना तो मोंड़ा-मोंड़ी को एक जैसा मानने का चल रहा है। अब वो पुराना समय थोड़ेई रह गया है।" बिस्मिलजी बोले। वे पत्रकार हैं। ख़ुद को आधुनिक सोच का बताने का कोई अवसर हाथ से जाने नहीं देते।

"वो समय नहीं रहा का क्या मतलब? अरे, वोई समय चल रहा है महाराज। वोई का वोई चल रहा है। वही है। दिख नहीं रहा आपको? बल्कि अभी तो सुनाई भी दे रहा होगा? यह हाय-हाय सुन रहे हैं न? तो? समय बदला नहीं है। सब वोई चल रहा है पंडिज्जी।" साहूजी बोले।

पंडिज्जी ने एक बार पुनः कहा, "फिर भी।"

"देखिए, मोंड़ा-मोंड़ी तो सब बराबर हैं- जे सब कहने में भी बड़ा अच्छा लगता है। खूब कहिए। पर हमें सच्ची-सच्ची बतइयो, मोंड़ी का दहेज आप भी बना रहे हैं कि नहीं?"

"वो तो खैर एक रीत चली आ रही है वर्ना..."

"...तो मानिए कि जे भी एक रीत ही चल रही है।" साहूजी ने पटवारिन के रुदन की ओर इशारा किया।

"यार, आप अपने घर की औरत को पीट रहे हो, जे स्साली कौन-सी रीत है भैया?" पंडिज्जी बोले।

"आपने कभी नहीं मारा पंडिताइन को?"

"राम, राम।" पंडिज्जी ने अँधेरे में अपने कान पकड़ लिए।

"हिम्मत नहीं पड़ी कि...?" साहूजी ने उनकी दुखती रग पर हाथ रख दिया।

"इसमें हिम्मत की कौन-सी बात? यह भी कोई हिम्मत का काम है?" पंडिज्जी बोले।

"पर कभी आपका भी मन तो करता ही होगा? हाँ, हर

कोई इसकी हिम्मत नहीं जुटा पाता है।" साहूजी ने हँसकर कहा।

क्या आज ही उनका मन नहीं किया था? ... पंडिज्जी ने सोचा। पर बोले वे कुछ और ही बात। उन्होंने साहूजी को बाकायदा फटकार दिया, "यार, तुम चूतियों टाइप बात तो

करो मती।"

"बताइए, पत्नी को ऐसा मारना!" बिस्मिल ने भी पंडिज्जी का साथ दिया।

"ऐसा का मतलब?... ऐसे मारा कि वैसे मारा; जैसे भी मारा, पत्नी को मारबे में ऐसा कौन-सा अनर्थ हो गया? बताइए? अरे, पूरे बुंदेलखंड में पिट रही हैं न औरतें? क्या हो गया इससे? बताइए? आप तो लिखबे-पढ़बे वाले लोग हैं। पढ़ा ही होगा। पूरे हिंदुस्तान में ही औरतें पिटती हैं कि नहीं? फिर? पढ़ी-लिखी औरतें भी पिटती हैं। डाक्टर, इंजीनियर और बहुत बड़े घर की औरतें भी पीटी जाती हैं। तो यहाँ पटवारीजी पीटते हैं तो इसमें स्साली कौन-सी अटपटी बात हो गई? कोई अनर्थ हो गया क्या? अपने चारों तरफ देखिए तो जरा। बुंदेलखंड बढ़िया चल रहा है न? और अपना हिंदुस्तान भी कौन-सा खराब चल रहा है? कुछ फर्क नहीं पड़ता है। औरत के पिटबे का आप लोग ऐसा शोक न मनाएँ।" साहूजी बोले।

"कौन-सा बढ़िया चल रहा है?... बताइए?" पंडिज्जी हार मानने को राजी नहीं।

"क्यों?... रोज ही कित्ते धूमधाम से शादियाँ हो रही हैं! कैसी जोरदार करवा चौथ और हरतालिका तीज मन रही है! सौभाग्यकांक्षिणी मोंड़ी को जैसे-तैसे ससुराल भेजबे के बाद आप कैसी संतोष की श्वास लेते हो - मानो, छाती से भारी बोझ उतर गया हो। जे सब क्या है?... कहबे-सुनबे में तो भौत बढ़िया लगता है पंडिज्जी कि स्त्री, पुरुष सब बराबर हैं। एक गाड़ी के दो पहिए हैं- पैसई बोलते हैं न? पर जे सच नहीं है। जे तो एकदम अलग तरह की गाड़ी है। आपने वो भौत पुरानी वाली साइकिल की फोटू देखी है न? वैसा ही मामला है। गाड़ी का एक पहिया भौत बड़ा है। दूसरा पहिया छोटा रहे और अपनी औकात को पहिचाने तभी यह गाड़ी चलती है। इसके लिए छोटे पहिए को बार-बार टाइट करना जरूरी होता है। जो औरत गाड़ी की इस डिजाइन को स्वीकार लेती है, उसका ठीक रहता है। समझदार औरत कहाती है वो। जो इस डिजाइन से अलग चले उस पहिए की बार-बार मरम्मत करनी पड़ती है। इसका यही एक इलाज है। तो मरीज की हाय हाय पर मत जाइए। डाक्टर जब सूई लगाता है तो मरीज कैसी हाय, हाय मचाता है? अभी वोई हो रहा है। पटवारीजी मरीज के इलाज में लगे हुए हैं।" साहूजी ने स्त्री को पीटने के पीछे की फिलासफी समझाई। अपने घर में वे भी इसी पद्धति से इलाज करते रहते हैं। पटवारीजी के व्यवहार से उन्हें बल मिलता है।

पंडिज्जी चुप्पी लगा गए। उनकी चिन्ता इस बहस में जीतने की थी भी नहीं। वे तो अभी पटवारी से मिलने को उत्सुक हैं।

वैसे पिटाई भी अब बन्द हो चुकी है। हाँ, सिसकियाँ ज़रूर चल रही हैं। इसी बीच पटवारीजी ने एक बार ज़ोर से चिल्लाकर उसे धमकाया है, "तू जे अपनी फें फें बन्द करती है कि लगाऊँ एक और लात?" उस धमकी के पश्चात् अब सिसकियाँ भी बन्द हैं।

अँधेरी गली में अब बेचैन सन्नाटा भर रह गया है।

"क्या कहते हैं बिस्मिलजी?" पंडिज्जी ने पूछा।

"चलिए, दरवाजा खटखटाते हैं।" बिस्मिलजी ने कहा।

"हमें भी लगता है कि अब आप खटखटा ही लीजिए। ... बस, अन्दर उनसे जे स्त्रियों के सम्मान वाली बात न कहने बैठ जाना।" साहूजी ने वापस अपने दरवाज़े की तरफ़ जाते हुए कहा।

"यार, इत्ते चूतिया भी नहीं हैं हम।" पंडिज्जी ने कहा।

अब दोनों जन पटवारी का दरवाज़ा दो बार खटखटाकर प्रतीक्षा में खड़े हैं।

बहुत अँधेरा है गली में परन्तु दरवाज़े के दूसरी तरफ़ के अँधेरे से कुछ कम ही होगा यह।

जमानत का तिलिस्म

"भैया, जमानत के लिए चलना है आपको।"

"चले चलेंगे। जेई तो काम है हमारा। बताओ, कब चलना है?"

"हम देख के बताते हैं।"

"तो बताना फिर। किसकी करानी है?"

"मोंड़ा अन्दर बन्द है।"

"तो रहन दो न उसे अन्दर। बाहर कछू नौकरी-फौकरी करता है क्या?"

"नहीं भैया। ऐसेई है, जानते तो हैं। ... ऐसेई कुछ करता रहता है; इतें, उतें।"

"तो फिर? काहे जमानत कराते हो उसकी ? अन्दर ही रहन दो न! जेल ऐसी बुरी जगह भी नहीं है। दोनों टेम ठाठ से रोटी मिल जाती है, बिछाबे-ओढ़बे को सरकारी कंबल, नहाबे को बाल्टी-लोटा; और क्या चइए?... वैसे, कछू पढ़े-लिखे भी हैं लल्ला?"

"आठवीं कक्षा के बाद पढ़ाई छोड़ दई। कहने लगा कि मास्टर लोग चूतिया हैं। हमने भौत कही कि आगे पढ़ ले बेटा। ... फिर एक दिन हेडमास्साब का मूड़ फोड़ के घर आ गया। फिर गया ही नहीं।"

"सही किया उसने। पढ़-लिख के उसे कौन-सा कलेक्टर बनना था।"

"वो तो है।"

"बाहर निकल के भी जब उसे ऐसेई 'बाई के बेर अढ़ाई सेर' ही घूमना है तो काय को जमानत करवा रहे हो उसकी ? रहने दो वहीं।"

"अभी तो उसका निकलना भौत जरूरी है महाराज। ब्याव कराना है उसका। हमने दो-तीन घर भी देख रखे हैं। जे बाहर आ के मोंड़ियन को देख ले तो आगे बात चले।"

"जब ऐसे करम हैं तो इनकी शादी काय खों कर रये?"

"जिम्मेदारी पड़ेगी तो मोंड़ा सुधर जाएगा।"

"और जो न सुधरा तो?"

"तो फिर, जे बहू का भाग्य।"

"और कुँवरजी का कुछ नई?"

"बहू अच्छी मिल गई तो वो इसे सुधार देगी।"

"और जो न सुधरा तो आप इसे बहू की गलती मानोगे, क्यों?"

"पहले मोंड़ी तो मिले।"

"वो तो मिलेगी ही।"

"आप इसे जेल से छुड़वा दोगे तब न मिलेगी?"

"आपको कितनी ज़मानत चाहिए?"

"वकील साब तीस हजार की बता रये थे।"

"बस! इत्ते कम की? जेबकटी में अन्दर भए हैं का?"

"नहीं महाराज, मोंड़ा ने थोड़ी-सी मारपीट कर दई हती।"

"चलो, जे तो कम से कम ठीक काम किया। आदमी जेल जाए तो ऐसे काम के लाने जाए कि बताबे में शरम न लगे। मारपीट करी है तो ठीक है। इसमें तो घर की इज्जत ही बढ़ती है। ... पर जरा-सी मारपीट में मोंड़ा अन्दर कैसे हो गया? तुमने थाने में मिठाई नहीं चढ़ाई हती?"

"वो बात नहीं है महाराज। चढ़ाई हती। फिर थानेदार साब भी बिरादरी के ही निकल आए हते। भौत कम पैसों में राजी भी हो गए थे। उनकी चलती तो मोंड़ा थाने से ही छूट जाना था।"

"फिर उनकी काहे नहीं चली? थानेदार जरूर बदमाश आदमी है।"

"नहीं महाराज, थानेदार साब तो बड़े भले हते।"

"यार, आदमी भला हो सकता है या फिर थानेदार-एक साथ दोनों कैसे हो सकता है?"

"नहीं महाराज, बड़े भले आदमी हैं बे।"

"ऐसे भले हैं तो अभी तक थानेदारी से निकाले काहे नहीं गए?"

"सब उनकी तारीफ करते हैं।"

"फिर तुम्हारी संतान को अन्दर काहे बेंड़ दिये?"

"पालिटिक्स चल गई भैया। पिटबे वाला आदमी समाजवादी निकल गया। अब उनईं की सरकार। बस, लखनऊ से फोन आ गया। थानेदार साब मजबूर हो गए।"

"लखनऊ के फोन की लीला तो खैर अपरंपार होती है भैया। सही बात कही तुम्हारे दरोगाजी ने।"

"पर थानेदार साब ने इत्ती मदद जरूर कर दी कि केस कमजोर बना दिया। बोले कि मामला ठंडा होबे तक मोंड़ा को जेल में बिठाओ। केस कमजोर बनाया है। जमानत आसानी से मिल जाएगी। वोई हुआ।"

"सुनवाई कब की लगी है?"

"परसों की। वकील साब कह रहे थे कि जमानत के लाने जमीन के दस्तावेज...

"यार, हमारी जिन्दगी इसी काम में कटी है। अपने वकील से बोलना कि जमानत द्विवेदीजी दे रहे हैं। हमारा नाम लोगे, बाकी बे खुदई समझ जाएँगे। वैसे, वकील कौन है तुम्हारा?"

"वर्मा वकील।"

"वो कोरी?"

"हओ बेई, वर्माजी।"

"काहे के वर्माजी! कोरी है भैंचो । जे स्साले सगरे कोरी, चमार, ढुमार; सब आजकल शर्मा-वर्मा लिखने लगे हैं। और तुम जैसे लोग उनके नाम के आगे जी लगा देते हो; वर्माजी ! काहे के 'जी' भैया?"

"हमें कौन-सी उनसे रिश्तेदारी जोड़नी है। कोरी हों, लुहार हों, जो हों।"

"फिर भी। देखभाल के तो अपना वकील करते।"

"जो कम पैसे में मिल गया हमने उसे कर लिया।"

"तुम्हें कोई सवर्ण वकील नहीं मिला? जे स्साले, रिजर्वेशन वाले लोग; जे क्या जानें? न ज्ञान, न सऊर। जज के सामने हैं-हें करने लगेंगे। कानूनी दाँव-पेच का धेले भर ज्ञान नहीं है इनको। रिजर्वेशन में डिग्री तो मिल जाएगी पर ज्ञान कहाँ से लाओगे भैंचो? अरे, ज्ञान के लिए चाहिए रक्त की शुद्धता। शुद्ध रक्त है, स्साले तुमाऐ अन्दर? हो तो बताओ?"

"पर अभी तो हमने वर्माजी ही कर लिए हैं।"

"फिर वर्माजी!"

"वर्मा...। अभी तो हमने वर्मा कर लिए हैं।"

"कर ही लिए हो तो ठीक है पर स्साले को हमारे सामने बार बार 'वर्माजी', 'वर्माजी' न बोलना वर्ना हम जमानत के लिए न जा सकेंगे। ... उसे बस वर्मा बोलो। 'जी' 'फी' कुछ कुछ नहीं। समझे न?"

"जी, वोई।"

"वोई क्या?"

"वर्मा वकील।"

"वर्माजी नहीं?"

"नहीं, वर्माजी नहीं।"

"सब ठीक से निबटा पाएँगे आपके जे वकील साहब?"

"बताते तो बे जेई हैं कि सब बढ़िया हो जाएगा। वैसे अभी भी कोई अड़चन आ सकती है क्या?"

"वकील चूतिया हो तो अड़चन ही अड़चन। उसने मुंशी से सेटिंग तो कर ली है कि नहीं?"

"कर तो ली होगी वर्माजी ने।"

"यार, फिर तुमने उसे वर्माजी बोला?... वर्मा...। वर्मा कहो। समझे न? वर्मा से बता देना कि ठीक से सेटिंग करके रखे। नहीं तो मुंशी शाम तक वहीं बिठा के रखेगा।"

"सब काम जल्दी हो जाएगा महाराज।"

"और अपना केस जरा जल्दी लगवइयो। आगे हमें झाँसी निकलना है। एक जिजमान का गृहप्रवेश है। शाम का महूरत है। जज्जी में तो मुहूर्त आगे-पीछे हो सकता है पर गृहप्रवेश के मुहूर्त का निरादर नहीं किया जा सकता।"

"नहीं महाराज। सब कुछ टेम पे ही कराएँगे वर्माजी।"

"फिर वर्माजी? यार, तुम्हारे वर्माजी की माँ की..."

"...वर्मा।"

"तो वर्मा को बोलियो कि सुबह-सुबह की सेटिंग कर ले।"

"जी।"

"और हमारी फीस का तो पता करके ही आए होगे?"

"अरे, आपका तो बड़ा नाम है पूरी जज्जी में। सबने जेई कहा कि जमानत करानी है तो द्विवेदीजी के दरबार में चले जाओ।"

"दरबार तो खैर घंटा है पर द्विवेदीजी सबसे सेट करके चलते हैं। उसी की इत्ती फीस है। उसी जमीन पे पचासों की जमानत करानी हो तो हर देवता को प्रसाद लगता है। कानून का मन्दिर है भाई। कानून के देवता बैठे हैं सब तरफ, कोई भी तीसरा नेत्र खोल दे तो जमानत के कागजन समेत भस्म हो जाएँ हम तुम।"

"आपकी फीस हमारे खीसे में है।"

"तो उसके निकालबे का टेम आ गया है।"

"जी महाराज।"

वह कुर्ते की जेब टटोलने लगा।

"अभी पाँच हजार निकाल दो। पाँच जज्जी के गेट पर दे देना।"

"तीन हैं अभी हमारे पास। बाकी वहाँ जज्जी में..."

"... किसी ने तुमें जे नहीं बताया कि हम पूरा एडवांस में लेते हैं?"

"हम पूरा ही देंगे। वायदा है हमारा।"

"भैया, तुम्हारा नहीं, इसमें गांधीजी का वायदा चलता है। करारे कागजों पे छपे गांधीजी वायदा कर दें, हम मान लेंगे।"

"हम बाकी का कल देते हैं, पक्का।"

"ठीक। तो हम पहुँच जाते हैं।"

"कहें तो हम आपको लेबे खों आ जाएँ?"

"काय? हमें अपनी करिहा पे लाद के ले जाओगे क्या? तुमें धुकधुकी काय को लगी है? कह तो दिया। हम पहुँच जेहें।"

"महाराज, धुकधुकी लगी है क्योंकि लड़के का कल निकलना भौत जरूरी है।"

"परसों भी छूटा तो क्या?"

"कल हमने मोंड़ी के घरवालों को टेम दे रखा है।"

"तो बे तो स्साले लड़की वाले हैं न? प्रतीक्षा करेंगे। देर से पहुँचोगे तो भी तुमारी वैसी ही लल्लो-चप्पो करेंगे।"

"नहीं महाराज, मोंड़ी वाले भी आजकल बड़े हरामी हो गए हैं। वो वाला जमाना नहीं रहा।"

"जमाना तो भैया वोई चल रहा है। बस, तुम तनिक लड़के वालों की ठसक से जाना। छाती को फुला के रखना। फिर देखना। जमाना तुम्हें एकदम वोई मिलेगा।"

"जी महाराज।"

"याद रखियो, जमाने की अभी भी उसी तरह फटती है और उन्हीं चीज़ों से फटती है। जमाने का रोना न रोया करो।"

"जी महाराज। ... हम आपको जज्जी के सामने चाय की गुमटी पर मिल जाएँगे। वर्माजी को भी साथ ले आएँगे।"

"अगर तुमने वहाँ भी जेई 'वर्माजी,' 'वर्माजी' करी न, तो हम जज्जी के गेट से वापस आ जाएँगे - सच्ची बता रहे हैं।"

"वर्मा वकील के साथ। अब ठीक?"

"ठीक।"

"हम चलें?"

"तनिक हमें जे तुमाई गड्डी तो चेक कर लेने दो। एक तो तुम जे स्साली सौ रुपए वाली गड्डी ले आए। जब सरकार ने हजार के नोट बना दिये हैं तो तुम लेन-देन में इस सरकारी सुविधा का इस्तेमाल करने को काहे राजी नहीं?"

वे गड्डी के नोट गिनने लगे।

***

तभी बिस्मिलजी वहाँ से निकले।

"हम गिनवा दें महाराज?" बिस्मिलजी ने हँसकर पूछा।

"हमारी कमाई आप जित्ती कहाँ कि गिनबे में दस आदमी लगें।"

"हमारा आपसे क्या मुकाबला महाराज? आप तो न्याय के मन्दिर के रखवाले हैं।"

"मन्दिर का घंटा तो भैया, वकीलों के कब्जे में है। हमारे हाथ तो घंटे की रस्सी आ जाती है, वो भी कभी-कभी।"

दोनों हँसने लगे।

****

हनुमानजी और मुसलमान बकरा

"जे काहे का प्रसाद है?" पंडिज्जी ने चिरौंजी दाने हथेली पर लेते हुए नत्थू से पूछा।

"हनुमानजी का प्रसाद है महाराज।"

"हम देवता की नहीं पूछ रहे। चढ़ाया क्यों?"

"बकरी एक बार में ही गाभिन हो गई महाराज। हमने उसी की मन्नत माँगी हती।" नत्थू ने प्रसाद की पुड़िया को माथे से लगाते हुए कहा।

"बजरंगबली तो ब्रह्मचारी देवता हैं। पता है कि नहीं?"

"बुढ़िया की बड़ी लगन है हनुमानजी में।"

"लगन का तो ठीक है पर कुछ माँगते टेम जे सब तो सोच लो कि कौन-से देवता से क्या माँगना है?" ऊं

"हम कौन-से पंडित आदमी हैं महाराज!"

"तो? किसी से कुछ भी माँगने लगोगे क्या? लक्ष्मी मैया से विद्या माँगोगे तो वो दे पाएँगी क्या? वे तुमसे जेई कहेंगी कि जे सब तुम देवी सरस्वती से माँगो। है कि नहीं? ऐसेई, हनुमानजी से बकरी के गाभिन होने की तुम्हारा अरज करना ठीक बात है क्या?"

"पर उनने हमारी अरज सुन तो ली।"

"हनुमानजी हैं सीधे सरल देवता, सो मान गए। पर भक्त को भी उनका खयाल रखना चइए कि नहीं?"

"पाप हो गया महाराज।" नत्थू ने सिर झुका लिया।

"पाप तो खैर नहीं हुआ पर आगे से ध्यान रखियो।" पंडिज्जी बोले।

पंडिज्जी मोटरसाइकिल पर हैं। खेत पर आए थे। लौटने को थे कि तभी नत्थू ने यह प्रसाद दिया तो उक्त वार्तालाप हुआ।

"बकरा किसका था?" पंडिज्जी ने चलते-चलते पूछ लिया।

"बीजू बकरा था मालिक।" नत्थू ने गर्व से बताया।

"रमई का बकरा इस मामले में बड़ा गुणी है।" पंडिज्जी को रमई का बीजू बकरा याद आया।

"बकरा रमई का नहीं हता महाराज।"

"फिर?"

"गयासुद्दीन का था।"

पंडिज्जी जाते-जाते रुक गए। कसैला मुँह बनाकर बोले, "तुम्हें जे मुसल्टे का बकरा ही मिला?"

"बकरों में कौन हिंदू, कौन मुसलमान महाराज?"

पंडिज्जी गुस्से में घूरने लगे तो नत्थू सटपटा गया।

"बकरा तो बकरा है महाराज।" नत्थू ने आगे बोलने की कोशिश की।

"तुम तो हिंदू हो कि नहीं?"

"जी मालिक।"

"फिर? ऐसा अनर्थ काहे किया? मान्यता माँगी हनुमानजी से और बकरा मियाँ का ढूँढ़ा?"

नत्थू ने सिर झुका लिया।

"उसी बकरे की सेवाएँ लेने का संकल्प था तो मन्नत भी मस्जिद जा के अल्ला से ही माँगते न।"

"हम उतें कैसे जाते? हमारे देवता तो हनुमानजी हैं न?" नत्थू असमंजस में है।

"मन्दिर में माँगी मन्नत के बीच में मुसलमान को काहे घुसेड़ लिया तुमने? जे स्साली मन्दिर तोड़बे वालों की कौम है, इत्ता भी नहीं पता है तुम्हें?"

"गयासुद्दीन ने कौन-सा मन्दिर तोड़ा है महाराज? गरीब आदमी है। वो तो मन्दिर के सामने से भी निकले तो बाहर से प्रणाम करे बिना आगे नहीं बढ़ता है।" नत्थू पंडिज्जी की गूढ़ बातें समझ नहीं पा रहा।

"चूतिया हो तुम।" पंडिज्जी झल्लाए।

"असल में हम कछू समझ नहीं पा रये मालिक। जात-पाँत तो आदमियों की बातें हैं; बकरे की कैसी जात?" नत्थू ने
कहा।

"यार, मुसलमान का बकरा क्या हुआ? मुसलमान हुआ कि नहीं? इत्ती-सी भी बात नहीं समझते हो क्या?"

"हमारी समझ इत्ती ऊँची कहाँ महाराज!"

"हनुमानजी पे क्या बीती होगी, जे भी सोचा है? हिंदू बकरी पर मुसलमान बकरा चढ़वा के आ गए; जे तुमसे कित्ता बड़ा पाप हुआ है, पता भी है?"

"पर भौत सारे हिंदू गयासुद्दीन के बकरे के पास बकरी लाते हैं। कभी किसी ने उनको नहीं रोका।"

"अब रोकेंगे न। अगले साल चुनाव हैं। चिन्ता न करो। सबको समझाया जाएगा।

सबको रोका जाएगा! गयासुद्दीन को भी ठीक से चेताया जाएगा। उसके बकरे का यह भ्रष्ट आचरण बन्द कराया जाएगा।" पंडिज्जी जाएगा।" पंडिज्जी ने मानो चुनाव भाषण ही दे डाला।

नत्थू चुपचाप सुनता रहा।

पंडिज्जी चल दिये। पीछे-पीछे नत्थ आया। मोटरसाइकिल पर बैठ गए। पीछे-पीछे नत्थू आया। पंडिज्जी

वे इधर से सीधे कालपी जा रहे हैं। नया शिक्षाधिकारी परेशान कर रहा है। नन्हे मास्साब की शिकायतों पर जाँच बिठाने की धमकियाँ दे रहा है। इधर परीक्षा पास आ रही है, उधर वह उनके परीक्षा केंद्र की मान्यता ही निलंबित करने की बात कर रहा है। पंडिज्जी पीछे लगे हैं पर वह अपने पुढे पर हाथ ही नहीं रखने दे रहा। आजकल वह पंडिज्जी के मुँह पर ही सीधे-सीधे आदर्शवादी वाक्य तक बोलने लगा है। इसका कुछ तो तोड़ निकालना होगा। पर कैसे? आज फिर से उसी चक्कर में कालपी जा रहे हैं वे। फिर से टटोलते हैं उसे।

पंडिज्जी ने चुपचाप मोटरसाइकिल स्टार्ट की।

"हनुमानजी क्षमा तो कर देंगे न महाराज?" नत्थू ने पूछा।

"सब हनुमानजी के मूड पर है।" कहकर पंडिज्जी ने मोटरसाइकिल आगे बढ़ा दी।

साहब का मूड पढ़ना होगा- वे रास्ते में सोच रहे हैं। चिरौंजीदानों का स्वाद अभी तक मुँह में है। हनुमानजी नत्थू से

खफा हों, न हों, उनसे तो खफा लग ही रहे हैं आजकल। क्या वे भी हनुमानजी से यह मन्नत माँगे कि शिक्षाधिकारी उनसे रिश्वत लेने को राजी हो जाए?

ज्ञान रज बाँटने वाले

परीक्षा कमेटी की मीटिंग होनी है।

सामने की कुर्सी पर अपोली बैठे हुए हैं। वे स्कूल के मैनेजर हैं। तीन वरिष्ठ अध्यापक परीक्षा कमेटी के नामित मेम्बर हैं। प्रिन्सिपल साहब भी मौजूद हैं। हेड क्लर्क तो बैठा

ही है। दो भृत्य कमरे के बाहर चक्कर लगा रहे हैं। पंडिज्जी पधारें तो बैठक शुरू हो । मुन्ना मास्साब बाउंड्री वाले फाटक पर उनकी प्रतीक्षा में खड़े हैं। वे वहीं गेट पर पंडिज्जी का इस्तकबाल करेंगे। मुन्ना मास्साब पंडिज्जी के ख़ास हैं। वे पंडिज्जी का यहीं, अलग से ही स्वागत करेंगे। फिर वे पंडिज्जी के साथ ही मीटिंग में घुसेंगे। मुन्ना मास्साब ही परीक्षा की मुख्य व्यवस्थाएँ देखते हैं जिनमें नकल करवाना भी शामिल है। जाहिर है कि वे पंडिज्जी के मुँहलगे हैं।

बाउंड्रीवाल पर चूने की पुताई पूरी हो चुकी है। फूहड़ मेकअप के बाद जैसी शक्ल निकल आती है, कुछ वैसी ही शक्ल निकल आई है बाउंड्री की परन्तु पंडिज्जी इसी पर ख़ासे फिदा हैं आजकल। आते-जाते आदमी से रोक-रोककर पूछते हैं कि बताइए, कैसा लग रहा है? सब लोग यही कहते हैं कि कालिज बड़ा खूबसूरत निकल आया है। ऐसे प्रश्नों के उत्तर में ऐसे ही मूर्ख बनाने का रिवाज़ चलता है यहाँ - पंडिज्जी स्वयं भी यह तथ्य जानते हैं परन्तु झूठ सुनकर भी उन्हें बहुत अच्छा लगता है। मुन्ना मास्साब अभी इसी सद्यपुती बाउंड्री के पास खड़े हुए हैं।

कि तभी पंडिज्जी की मोटरसाइकिल आती हुई दिखाई दी। मुन्नामास्साब उसी तरफ दौड़ गए। मुन्ना मास्साब के पास आकर गाड़ी रोक ली पंडिज्जी ने।

मुन्ना मास्साब ने लपककर उनके चरण छू लिए। पंडिज्जी ने हैंडल से एक हाथ हटाकर आशीर्वाद दिया तो मोटरसाइकिल फिसलते-फिसलते बची।

"कैसी लग रही है?" पंडिज्जी ने बाउंड्रीवाल को प्यार से ताकते हुए पूछा।

मुन्ना मास्साब ने कदाचित दसवीं बार बताया है कि मात्र पुताई की इस छोटी-सी कारगुजारी से पूरी इमारत शानदार निकल आई है। वे लगभग हर मामले में जानते हैं कि क्या बोलने से पंडिज्जी गद्गद होंगे? और वे हुए भी। पंडिज्जी मुस्कुरा दिये।

"बैठो।"

पंडिज्जी ने मुन्ना मास्साब को अपने पीछे बिठा लिया। मोटरसाइकिल शानदार इमारत की तरफ़ चल पड़ी।

गाड़ी को बाहर ही खड़ी करके पंडिज्जी बरामदे की सीढ़ियाँ चढ़ गए। मुन्ना मास्साब पीछे-पीछे।

बरामदे में कई कमरे खुल रहे हैं। शाम का समय है। कॉलेज अभी ख़ाली-सा पड़ा है।

दोनों लोग साइंस लैब के सामने से गुज़रे। दरवाज़ा उढ़का हुआ था। पंडिज्जी रुक गए।

"आज ताला नहीं लगाए साहूजी?"

साहूजी साइंस टीचर हैं।

कहा। "लापरवाह आदमी हैं।" मुन्ना मास्साब ने लापरवाही से

"कभी लैब में चोरी हो गई तो रोते फिरेंगे।" पंडिज्जी के स्वर में क्षोभ है।

"हमने भी कित्ती बार इन्हें समझाया है।"

"फिर?"

"कहते हैं कि लैब में अन्दर कुछ है ही नहीं तो चोर स्साला क्या ले जाएगा?"

"जरा भेजिए तो उन्हें कल हमारे पास।"

मुन्ना मास्साब मुस्कुरा दिये। स्साला ख़ुद को बड़ा न्यूटन समझता है। सीधे मुँह बात ही नहीं करता।

दोनों जन मैनेजर के कमरे की तरफ़ बढ़ते रहे।

"सब पहुँच गए?" पंडिज्जी ने पूछा।

"सब हैं। बस, आपई के लिए रुके हैं।" मुन्ना मास्साब ने बताया।

"आज की इस मीटिंग की रिपोर्ट कालपी जरूर पहुँच जाए। शिक्षाधिकारी आग मूतने की ठाने है। स्साला यही बहाना न ले बैठ जाए कि हम समय पर सूचनाएँ नहीं देते।" पंडिज्जी बोले।

तब तक कमरे के अन्दर से लोगों ने पंडिज्जी को आते हुए देख लिया है। सब लोग कमरे से बाहर आ गए। 'पंडिज्जी पाँलागी' हुई।

अपोली एक तरफ खड़े रहे। मास्टर लोगों ने पंडिज्जी के पैर छुए। प्रिंसिपल साहब ने पहले तो हाथ भर मिलाया, फिर माहौल देखकर पंडिज्जी के चरण स्पर्श भी कर डाले। अपोली पंडिज्जी की तरफ़ देखकर मुस्कुराया भर। सगे बाप के क्या तो पैर छूना !

सब अन्दर आ गए।

मैनेजर का कमरा कोटरा के मापदण्डों पर शानदार ही कहा जा सकता है। बड़ी-सी एक मेज़ है। उस पर बिछा चौखाने की डिज़ाइन वाला चादर। कुछ फाइलें। एक काला टेलीफोन। मेज पर बड़ा-सा काँच जो बीच से चटका हुआ है। एक तरफ़ पाँच-छह रजिस्टर। पानी का जग। एक ट्रे पर सजे पानी के ग्लास। लक्ष्मीजी की आरती वाली एक बुकलेट। दो समाचार-पत्र। विवेकानंद की एक मोटी-सी किताब ।

प्रिंसिपल साहब ने पंडिज्जी से आग्रह किया कि आप कुर्सी पर बिराजें तो मीटिंग का काम शुरू किया जाए। प्रिंसिपल का इशारा मैनेजर की कुर्सी तरफ़ है। सबको पता था कि पंडिज्जी नहीं बैठेंगे। हमेशा का नाटक है। सभी नाटक के इस लोकप्रिय दृश्य की प्रतीक्षा कर रहे थे। हर बार यही होता है। इस बार भी हुआ।

पंडिज्जी ने नाटकीय विनम्रता से आमंत्रण अस्वीकार कर दिया।

"भाई, अब यह जिम्मेदारी तो युवा रक्त ही सँभाले।" कहकर उन्होंने अपोली की तरफ़ इशारा किया। ऐसा कहते हुए उनके मुख पर अनोखा तेज, ग़ज़ब की लुनाई और त्याग की अनोखी आभा बिखर गई जिससे उनकी शक्ल और भी अविश्वसनीय और शातिर निकल आई।

पंडिज्जी ने आग्रहपूर्वक अपोली को मैनेजर की कुर्सी पर बिठाया।

रहा-सहा नाटक प्रिंसिपल साहब ने पूरा कर डाला।

प्रिंसिपल साहब ने प्रत्युत्तर में संक्षिप्त सा वक्तव्य देते हुए कहा, "जब तक युवा ऊर्जा को आप जैसे अनुभवी की सही दिशा मिलती रहेगी, इस शिक्षा संस्थान का भविष्य उत्तरोत्तर उज्ज्वल ही होता जाएगा।" पंडिज्जी ने सबके हाथ जोड़े और एक तरफ़ उनके लिए ही रखी गई आरामकुर्सी पर जाकर बैठ गए। अपोली सहित सबने अपना-अपना स्थान ग्रहण किया।

महानता में पगी सात्विक किस्म की औपचारिक शुरुआत का संक्षिप्त वक़्फ़ा समाप्त हुआ।

अब असली बातें शुरू हुईं।

अपोली ठीक सामने हैं। मेज़ के एक तरफ़ पंडिज्जी, सामने की कुर्सियों पर मास्टर लोग, अपोली की कुर्सी से किंचित दूरी पर लगी कुर्सी पर बिराजे हैं प्रिंसिपल साहब।

मुन्ना मास्टर साहब अलबत्ता इसी बीच, इन सबसे अलग, एक कोने में कुर्सी के सामने स्टूल रखकर बैठ गए थे। स्टूल के पास, बगल में ही, ज़मीन पर परीक्षा की कोरी कापियों के बंडल पड़े हुए हैं। ढेर-सी कोरी कापियाँ हैं। मुन्ना मास्साब ने इन कापियों

पर अपना काम शुरू भी कर दिया। वे बंडल से एक-एक कापी उठाते जा रहे हैं। हर कापी को अपने सामने धरे स्टूल पर रखते हैं, फिर उसके हर पेज पर स्कूल के नाम की सील ठोंकते जाते हैं। जब पंडिज्जी वगैरह बैठने-बिठाने के ठनगन में व्यस्त थे, मुन्ना मास्साब ने कापियों पर सील लगाना भी चालू कर दिया था। अभी भी लगाए चले जा रहे हैं। दरअसल, ऐसा करके वे सरकार के एक आदेश का पालन कर रहे हैं। सरकार की सदिच्छा है कि परीक्षा में नकल न होने पाए। इसी के तहत सरकार का आदेश है कि उत्तर पत्रिका के हर पेज पर परीक्षा केंद्र की सील लगे। यह होगी तो असली मूल्यांकन में नकली उत्तर पुस्तिकाएँ नहीं डाली जा सकेंगी-ऐसा विश्वास है सरकार का। अगर मात्र एक सील मारने से ही परीक्षा की विश्वसनीयता बढ़ जाती है तो फिर यही सही! किसी के बाप का इसमें कुछ जाता भी नहीं और परीक्षा पर गुणवत्ता का मोर मुकुट लग जाता है; भला और क्या चाहिए?

मुन्ना मास्साब परीक्षा की कोरी उत्तर पुस्तिकाओं को अभी यही मोर मुकुट पहिना रहे हैं।

जब लोग कुर्सियों पर बैठ ही रहे थे तभी कापियों के दो बंडल एक तरफ़ से उठाकर दूसरी तरफ़ पटक दिये मुन्ना मास्साब ने।

धूल का एक गुबार उठा फर्श से।

"यार, धूल तो न उड़ाओ मुन्ना मास्साब!" एक मास्टर ने कहा।

"यह तो ज्ञान रज है भैया।" मास्साब ने हँसकर कहा।

"कोरी कापियों में कौन-सा ज्ञान?" किसी ने कहा।

"कोरा ज्ञान है; और क्या! आजकल सब तरफ कोरा ज्ञान ही चलता है।" मुन्ना मास्साब ने कहा।

"बड़ी ऊँची बात कह गए मुन्ना मास्साब।" पंडिज्जी हो-हो करके हँस पड़े।

मुन्ना मास्साब पंडिज्जी के मुँहलगे हैं। उनके भरोसे के आदमी हैं। स्कूल में सब जानते हैं कि पंडिज्जी के लिए आँख और कान का काम करते हैं मुन्ना मास्साब। सब समझदार हैं। सबने पंडिज्जी की बात पर 'हें' 'हें' की। बस, प्रिंसिपल साहब एकदम अलग ही बात बोले।

"ज्ञान के मन्दिर में बैठकर तो ज्ञान को चुटकुलों का विषय न बनाएँ मुन्ना मास्साब।" प्रिंसिपल साहब ने कहा।

प्रिंसिपल साहब मुन्ना मास्साब से नाराज़ रहते हैं। कॉलेज की हर हगी-मुती बात भी पंडिज्जी तक पहुँचाता है यह आदमी। पंडिज्जी की भी शह है इसे। यह शख़्स प्रिंसिपल को

ठेंगे पर भी नहीं भजता। कभी पूछो कि "कहाँ थे आप?" तो यही कहता है कि पंडिज्जी के काम से कहीं गया था। वो काम क्या था, आप न तो इससे पूछ सकते हैं, न पंडिज्जी से।

"प्रिंसिपल साब ने अभी हमसे कुछ कहा क्या? ठप्पा मारबे के चक्कर में हम ठीक से सुन नहीं पाए।" मुन्ना मास्साब ने भोले बनकर कहा।

पंडिज्जी हमेशा दोनों के बीच के ऐसे तनाव का पूरा आनन्द लेते हैं। पंडिज्जी ने कहा, "प्रिंसिपल साहब कह रहे हैं कि ज्ञान के मन्दिर में बैठकर ज्ञान का मजाक न उड़ाओ।"

"ज्ञान का मन्दिर?"

"हाँ।"

"कहाँ है ज्ञान का मन्दिर?"

"और जे अपना कॉलेज क्या है? जेई तो ज्ञान का मन्दिर है।"

"ऐसा क्या? बताइए, हम इतें रोज आते हैं और हमें ही जे बात पता नहीं। हम तो स्साला रोज ही जूता पहिन के मन्दिर में घुस आते हैं! बताइए। जे तो बड़ा पाप हो गया स्साला।" मुन्ना मास्साब सील मारते-मारते बोले। उन्होंने दाँत दिखाते हुए प्रिंसिपल साहब की तरफ़ देखा।

इधर पंडिज्जी उनकी बात पर हँसने लगे तो प्रिंसिपल साहब भी चुप हो गए। वे समर्थन हेतु अपोली की तरफ जरूर देखने लगे। वैसे मुन्ना मास्साब अपोली के भी मुँहलगे हैं परन्तु अपोली प्रिंसिपल साहब की रक्षा को भी अपनी रणनीति का हिस्सा मानते हैं।

"तो मीटिंग शुरू करी जाए?" अपोली ने मैनेजर का कर्तव्य निर्वाह करते हुए पंडिज्जी से मीटिंग शुरू करने की इजाज़त माँगी। पंडिज्जी ने इशारे से अनुमति दी। अपोली ने प्रिंसिपल साहब की तरफ़ देखा। वे पहले ही उन्हें देख रहे थे।

"प्रिंसिपल साहब, तो शुरू करें फिर?" अपोली ने कहा।

प्रिंसिपल साहब ने मीटिंग का उद्देश्य बताते हुए बात शुरू की। प्रिंसिपल साहब ने सबसे पहले तो यह बताया कि परीक्षा सिर पर आ गई है। सबने सहमति में अपना-अपना सिर हिलाया। फिर उन्होंने यही बात और भी कई तरह से बार-बार कही। समय कम बचा है, मार्च आते देर नहीं लगती, बस तीन महीने शेष रह गए हैं, समय फुर्र से उड़ जाता है, गया हुआ समय कभी वापस नहीं आने वाला आदि कई वाक्य बोलकर उन्होंने बताया कि परीक्षा इतने पास आ गई है कि कब यह हमारे मूँड़ पर खड़ी हो जाएगी, पता भी नहीं चलेगा। इसके बाद उन्होंने सभी का आह्वान किया कि हम सभी को परीक्षा की तैयारी में अभी से लग जाना है। उन्होंने कुछ सर्कुलर भी पढ़कर सुनाए जिनमें यही सब लिखा हुआ था। फिर वे सबको फुसलाने-सा लगे कि परीक्षा पास है और सबको इस काम में अभी से जी जान लगा देनी है।

उनके प्रेरक भाषण से नितांत असंपृक्त मुन्ना मास्साब ठप्पे मारे जा रहे थे। वे बार-बार सिर उठाकर प्रिंसिपल साहब को देखकर मुस्कुराते भी जा रहे थे।

प्रिंसिपल साहब अचानक ही रुक गए।

"आप समझ तो रहे हैं न मुन्ना मास्साब?" उन्होंने मुन्ना मास्साब से पूछा।

मुन्ना मास्साब की मुस्कुराहट बढ़ गई। वे अब और भी गौर से प्रिंसिपल साहब को देखने लगे। साथ-साथ ही वे, बिना नीचे की दिशा में देखे हुए ही लगातार ठप्पे भी मारते रहे।

"कौन-सा जे स्साला कोई गणित का सवाल है जो हम समझ न पाएँ?" मुन्ना मास्साब ने कापी में एक और ज़ोरदार ठप्पा मारते हुए पूछा।

"वा भई वा। भौत ही चंट है मुन्ना मास्टर।" पंडिज्जी को मुन्ना मास्साब का उत्तर पसंद आया। वे हो-हो करके हँसने लगे।

पंडिज्जी के ख़ास चेला हैं मुन्ना मास्साब। कॉलेज में नकल निर्विघ्न संपन्न हो, इसकी जिम्मेवारी मूलतः मुन्ना मास्साब की है। वे कैंडीडेट्स जुटाने, पैसे वसूलने, लठैतों का इंतज़ाम करने से लेकर सोल्वर लाने तक का सारा काम देखते हैं।

इधर प्रिंसिपल साहब मीटिंग की गरिमा बनाए रखने के हामी हैं।

"आप पंडिज्जी को खूब हँसाइए। बहुत अच्छी बात है यह। पर यह भी न भूलिए कि सरकार ने सर्कुलर भेजकर आगाह किया है कि इस बार नकल पर जबरदस्त सख्ती बरती जाएगी। उसे भी थोड़ा देखिए।" प्रिंसिपल ने कहा।

प्रिंसिपल साहब स्कूल में नकल करवाने के काम में कोई सक्रिय भाग नहीं लेते हैं। सक्रिय क्या, कैसा भी भाग नहीं लेते। नहीं, ऐसे कोई ईमानदार भी नहीं हैं वे; बस, उनसे बेईमानी बनती नहीं। फिर जब यहाँ उनके ही स्कूल में खुली नकल होती है तब इनका रुख़ क्या रहता है? ये वहाँ रहते हुए भी नहीं रहते; दूसरी तरफ़ देखने लगते हैं, बस। साक्षी भाव से देखकर भी सब कुछ अनदेखा करते हैं, पंडिज्जी जहाँ दस्तखत करने को बोलें, वहाँ कर देते हैं और कभी फ्लाइंग स्क्वाड वगैरह आ जाए तो अपने कमरे में एक सौहार्दपूर्ण माहौल में उनका स्वागत करते हैं, उनकी चाय-पानी का इंतज़ाम देखते हैं। अपने ही स्कूल में नकल होने को वे देह धरे का दंड मानते हैं। मन से तो वे बड़े सात्विक, संयमी, नैतिक और नियम-कायदे वाले हैं- पर वे अपने इन गुणों पर कोई गर्व न करके आज की दुनिया में फिट होना चाहते हैं परन्तु चाहकर भी हो नहीं हो पाते। बनना तो वे भी मुन्ना मास्साब चाहते हैं पर बन नहीं सकते। उनके सद्गुण उनके आड़े आ जाते हैं। ऐसी बातें करके वे दरअसल ख़ुद को ही कोसते हैं। पंडिज्जी उनकी कमियों को जानते हैं पर वे यह भी जानते हैं कि अभी वे कोई और प्रिंसिपल रखें तो वह भी अपना बड़ा हिस्सा माँगेगा। इसे तो जो दे दो, कृपा मानकर ले लेता है। बेईमानी के सिस्टम को चलाने के लिए कुछ नपुंसक किस्म के ईमानदारों की भी दरकार होती है। ऐसे लोग भी उन्हें चाहिए। माना कि इनसे न तो लीपने का काम ले सकते हैं, न ही पोतने का; पर मान लो कि कभी फँस ही गए तो कोई तो ऐसा चाहिए जिसके सिर पर सब कुछ डाला जा सके !

जब से नकल पर लगाम लगाए जाने की बातें प्रशासन की हवाओं में हैं, सबसे ज्यादा तनाव प्रिंसिपल साहब को है। चिन्ता पंडिज्जी को भी कम नहीं है पर वे ऐसी विकट स्थितियों

का तोड़ निकालने की चिन्ता करते हैं, उनको लेकर रोते नहीं। मुन्ना मास्साब को वे काम पर लगा भी चुके हैं।

अब पंडिज्जी ने वार्तालाप की बागडोर सँभाली। सीधे प्रिंसिपल से ही पूछ लिया, "अच्छा, आप इस बारे में क्या कहते हैं?"

"बस सर, हम थोड़ा सोच रहे थे कि..."

"...सोचा करिए। अच्छी आदत है। अध्यापक न सोचेंगे तो कौन सोचेगा? वैसे क्या सोच रहे थे आप?"

"...कि इस बार क्या होगा?"

"काहे में क्या होगा?"

"यही, परीक्षा में?"

"परीक्षा में परीक्षा होगी। ... और क्या होना है?"

"फिर भी हमें डर लगता है कि सरकार इस बार बिलकुल नकल न होने देगी तो ...", प्रिंसिपल साहब ने मानो स्वयं से कहा।

"...हम भी बिलकुल न होने देंगे। क्यों न पंडिज्जी?" मुन्ना मास्साब ने बीच में पड़ते हुए कहा तो बैठक में उपस्थित सभी लोग हँसने लगे।

केवल अपोली ने प्रिंसिपल साहब की भाषा बोली, "फिर भी ठीक से देख लें मुन्ना मास्साब। प्रिंसिपल साहब ऐसा कुछ गलत भी नहीं बोल रहे हैं। इस बार थोड़ा कठिन तो रहने वाला है।"

पंडिज्जी भी गम्भीर हो उठे।

"जे तो खैर सही है।" पंडिज्जी ने कहा।

"और यह जो सर्कुलर आया है, सीसीटीवी कैमरा लगवाने का, उसका क्या?" प्रिंसिपल साहब विकट चिन्तित हैं।

जवाब मुन्ना मास्साब ने दिया, "लगवाएँगे न। ... जरूर लगवाएँगे। सब तरफ लगवा देंगे। इसी काम के लिए हमें पंडिज्जी ने कानपुर भेजा था। हमने सब पता कर लिया है। कैमरे आ जाएँगे। लग भी जाएँगे। बढ़िया, चकाचक सबकी फोटू खिंचेगी। सबसे निवेदन है कि उन दिनों अच्छे कपड़े पहनकर आएँ। शेविंग, फेविंग करें। गाल चिकने रखें। फोटू अच्छी आनी चाहिए।" मुन्ना मास्साब बोले।

"कैमरा लगवाने का मतलब भी समझते हैं आप?" प्रिंसिपल ने चिढ़कर पूछा।

"समझते हैं न प्रिंसिपल साब। खूब समझते हैं।" मुन्ना मास्साब ने बताया।

"यहाँ का सब कुछ सीधा वहाँ जिला मुख्यालय में दिखेगा।"

"हमें पता है न। कैमरे तो आने दें। सब तरफ लटकवा दिये जाएँगे महाराज। वे नेट से जोड़ भी दिये जाएँगे। हम तो नेट के चलबे के लाने इन्वर्टर भी आर्डर कर रहे हैं।" मुन्ना मास्साब बोले।

"उन्हें कहीं कोई भी गड़बड़ दिखी तो..."

"... नहीं दिखेगी। फिल्म में उनको बस वही दिखेगा जो उनको हम उन्हें दिखाएँगे।"

"करेंगे तो दिखेगी क्यों नहीं?"

"नहीं दिखेगी न। हम कह रहे हैं न। खर्चा जरूर बढ़ जाएगा पर कहीं भी कोई गड़बड़ नहीं दिखेगी।"

"पर..."

"... कैमरा भगवान थोड़ेई है प्रिंसिपल साब। ... और कैमरों की तस्वीरों की पड़ताल करने वाले भी भगवान नहीं हैं। खर्चा होगा पर सब सेट हो जाएगा।"

प्रिंसिपल चुप रह गए परन्तु परेशान तो हैं। पंडिज्जी जरूर मंद-मंद मुस्कुरा रहे हैं।

"आपको खर्चे की चिन्ता तो नहीं हो रही है प्रिंसिपल साहब? उसका इंतजाम भी है। जे सारा खर्चा कैंडीडेट्स से वसूला जाएगा।" पंडिज्जी ने बताया।

कैंडीडेट्स मतलब वे विद्यार्थी जो नकल में बैठने वाले हैं।

"सब देंगे। सबको देना पड़ेगा। हमने बता दिया है कि इस बार पिछले साल की रेट पर काम न होगा। रेट बढ़ाएँगे हम।" मुन्ना मास्साब ने बताया।

अपोली को संबोधित करके वे एक बात और बोले, "इस बार का कलेक्शन जोरदार रहेगा।"

इस पर पंडिज्जी बोले, "... और हमारी तरफ से हर आदमी को उसी हिसाब से ज्यादा देने की कोशिश की जाएगी।"

सब मुस्कुरा दिये।

"सब अच्छा होगा।" एक मास्टर ने कहा।

अपोली मुन्ना मास्साब की तरफ ही देख रहे हैं। "पंडिज्जी ने भी एक से एक हरामी पाल रखे हैं" - उन्होंने खुद ही खुद से कहा और मुस्कुरा दिये।

"वैसे नकल रोकबे का हमारा इंतजाम ऐसा सख्त दिखाई देगा कि जो भी वहाँ बैठ के कैमरे पर देखेगा, नाचने लगेगा। परीक्षार्थी मूतने भी जाएगा तो उसके साथ हमारा एक आदमी जाएगा। तुम अन्दर मूतो, बाहर हमारा आदमी धार की आवाज पर ध्यान

लगाए खड़ा है - ऐसा होगा। ... सरकार कहेगी तो वो आदमी अन्दर परीक्षार्थी का पकड़ के भी रख सकता है।" मुन्ना मास्साब ने बताया।

सब मुस्कुराने लगे।

"कैमरों पे सब दिखेगा। कहेंगे तो जिप खोल के वहाँ भी कैमरा लगा देंगे। जिला मुख्यालय वाले देख लें कि नकल नहीं पेशाब चल रही है। सरकार की बात पूरी मानी जाएगी। आप चिन्ता न करें प्रिंसिपल साहब। सब काम बड़े कायदे से होगा।" मुन्ना मास्साब ने कहा।

अपोली भी हँसने लगे।

अब तो प्रिंसिपल साहब भी खिसियानी हँसी हँसने लगे।

अचानक ही एक मास्टर ने कहा, "सर, मऊरानीपुर के हमारे तीन कैंडीडेट्स हैं। सेठ लोगन के मोंड़ामोंड़ी हैं। ... कहें तो बुलवा लिया जाए?"

पंडिज्जी बुरा मान गए।

"यार, इस मीटिंग में तो ऐसी बातें न करो। अवसर देखकर थोड़ी तो मैं देखी हर कोई करता है।" पंडिज्जी ने कहा।

मास्टर घबरा गया।

मास्टर मज़ाक को नहीं पकड़ पाया। क्षमा माँगने लगा।

पंडिज्जी हँसने लगे। मुन्ना मास्टर ने भी मौज में आकर एक ज़ोरदार ठप्पा लगाया और ठठाकर हँस पड़े। मास्टर अब जाकर समझा कि मज़ाक़ चल रहा है। वह भी मुस्कुराने लगा।

"बुलवा लो। उन्हें अपोली या मुन्ना मास्साब से मिलबे की बोल दो।" पंडिज्जी ने अभयदान-सा देते हुए कहा।

"आप तो मुन्ना मास्साब से ही मिलवा देना।" अपोली ने मास्टर से कहा।

"तुम्हारी जेई बात हमें नहीं सुहाती।" पंडिज्जी ने अपोली से कहा।

"कौन-सी बात?" अपोली बोले।

"तुम कैंडीडेटन से खुद भी तो मिल लिया करो न। जिम्मेदारी से ऐसा क्यों भागना? काम सीखो। अरे, हम कब तक तुम्हारे साथ हैं? आगे तो सब कुछ तुम्हें ही देखना है। सँभालना है सब।" पंडिज्जी में दशरथ महाराज की आत्मा उतर आई जिन्होंने कभी अपने सिर में एक सफेद बाल देखकर गद्दी छोड़ने का निर्णय ले लिया था।

"आप वैराग्य लेबे वाले हैं क्या?" अपोली ने हँसकर पूछा।

"मान लो कि ले ही लें तो?" पंडिज्जी ने कहा।

"मत लीजिएगा। आपसे सधेगा नहीं। जो सधता है, वही साधिए न। कॉलेज चला तो रहे हैं। बढ़िया चला रहे हैं।" अपोली बोले।

पंडिज्जी तैश में आ गए।

"यार, कल को हम मर भी तो सकते हैं। फिर?" पंडिज्जी बोले।

"तब की तब देखी जाएगी वैसे आपकी उम्र लम्बी है। ...आप खुदई अपनी कुंडली की बात हमें बताते रहते हैं कि रम्मू पंडित ने कुंडली बाँच के कहा था कि आपको नब्बे साल तक जीना है।" अपोली बोले।

"तुम सौ बातें करोगे पर काम की जिम्मेदारी न लोगे?"

"लेंगे न। ले लेंगे। अभी यहाँ मीटिंग में बैठे हैं कि नहीं? जे भी एक तो जिम्मेदारी ही चल रही है कि नहीं? बताइए?"

अपोली बुरा मान गए।

बात कदाचित और आगे चलती कि तभी जुग्गल मास्साब की आमद हो गई और बात की दिशा बदल गई।

"इत्ती देर से?" प्रिंसिपल साहब ने दीवार पर टँगी घड़ी की तरफ़ इशारा करके जुग्गल मास्साब से देर से आने का कारण जानना चाहा।

जुग्गल मास्साब नित्य कालपी से अप-डाउन करते हैं। उनके हाथ में आज का अखबार है जो अभी तक कोटरा में नहीं पहुँचा है। यहाँ दोपहर तक यह अखबार आ पाता है। जुग्गल मास्साब का एक महत्त्व यह भी है कि वे राजधानी का ताज़ा अखबार ला देते हैं।

"आने में थोड़ा लेट तो हो गए महाराज।" जुग्गल मास्साब ने क्षमाप्रार्थी मुद्रा में कहा।

"समय बड़ा मूल्यवान है जुग्गल मास्साब। इसका सम्मान करना सीखें।" पंडिज्जी बोले।

"जी महाराजा"

"प्रिंसिपल साहब ने जो कहा है, उसे ठीक से समझ लें जुग्गल महाराज। याद रखें। किसी महापुरुष ने कहा है कि बीता हुआ समय कभी लौटकर वापस नहीं आता।" पंडिज्जी ने कहा।

"शायद गांधीजी कह गए हैं।" जुग्गल महाराज ने मूल बात का जवाब न देते हुए बताया।

"उन्होंने न भी कहा हो परन्तु बात है एकदम गांधीजी टाइप।" अपोली ने कहा।

"बेई ऐसी बातें कहते रहते थे।" किसी ने सहमति जताई।

"बात को भटकाइए मत। आप समय पर आया करें। क्या जब तक आपको स्वयं गांधीजी आकर नहीं कहेंगे, तब तक आप समय पर नहीं पहुँचेंगे?" प्रिंसिपल ने विमर्श में उतरते हुए कहा।

"नहीं मालिक, हमारे लिए आपई गांधी हो। आप हमसे कह रहे हैं, हमारे लिए जेई काफी है।" जुग्गल मास्टर ने कहा।

"इस मामले में यहाँ गांधीजी से ज्यादा आपकी चलेगी सर।" जुग्गल मास्टर ने कहा।

मीटिंग लगभग समाप्ति की ओर थी।

प्रिंसिपल साहब सर्कुलर और फाइलें इत्यादि समेटकर एक मास्टर को पकड़ाने लगे। मुन्ना मास्साब अभी भी सील मारने में मशगूल थे।

"कोई नया समाचार?" सील मारते-मारते मुन्ना मास्साब ने जुग्गल से पूछा।

"कैसा?" जुग्गल समझे नहीं।

"यार, आपके अखबार में कुछ नया छपा है?" मुन्ना मास्साब ने अखबार की तरफ इशारा किया।

"सब वोई है।" जुग्गल मास्साब ने लापरवाह स्वर में कहा।

"वोई का मतलब?"

"अरे वोई बात! शिक्षामंत्री ने झाँसी में फिर से बयान दिया है कि प्रदेश में नकल के अभिशाप को मिटाने के लिए वे कृतसंकल्पित हैं।"

"जे बात तो बे लखनऊ में भी बोल चुके?" एक बोला।

"... आगरा में भी।" दूसरे ने कहा।

"वैसे शिक्षामंत्री का संकल्प अभिनंदनीय है।" पंडिज्जी ने कहा।

इसी बीच अपोली जुग्गल मास्साब से समाचार-पत्र लेकर पलट रहे थे। वे एक समाचार पर आकर रुक गए।

"जरा जे तो पढ़िए पिताजी।" उन्होंने अखबार पंडिज्जी की तरफ बढ़ाना चाहा।

"तुम भी पढ़े-लिखे हो। पढ़कर बताओ।" पंडिज्जी ने कहा।

"अखबार में आपके बुधौलियाजी की फोटू छपी है।"

"कैसे?"

"थाने में बैठे दिख रहे हैं। दो सिपाही अगल-बगल। पीछे दरोगा।"

"अरे! क्यों?"

"धरा गए।"

"कैसे?"

"नकली उत्तर पुस्तिकाएँ छपवा रहे थे। प्राइवेट प्रेस से। तीन हजार कापियों के साथ पकड़े गए हैं।"

"चूतिया हैं।" बाबू मास्साब का निर्णय था।

"कलयुग आ गया है।" पंडिज्जी बोले।

सब चुप रहे।

"सरकार सख्त हो रही है।" प्रिंसिपल साहब ने चिन्तापूर्वक कहा।

"क्यों न होगी? हमने स्वयं इन बुधौलियाजी को पहले भी चेताया था कि इतनी आग कभी न मूती जाए कि खुद की चड्डी में आग लग जाए।" पंडिज्जी बोले।

"अब लग गई न।" अपोली ने बताया।

अखबार मेज पर फैला दिया गया है। तस्वीर तथा समाचार का सामूहिक निरीक्षण चल रहा है।

"जमाना खराब है। ... खुलेआम नकल करवाने के दिन अब नहीं रहे।" पंडिज्जी बोले।

"एकदम सही कहा पंडिज्जी, आजकल नकल के दिन नहीं रह गए हैं। आदमी तुरत फँस सकता है।" प्रिंसिपल साहब ने कहा।

"ऐसा न कहें प्रिंसिपल साब। नकल के दिन तो रहेंगे। नालायक छात्रों का भी फर्स्ट आने का मौलिक अधिकार है कि नहीं? पर हाँ, सँभल के चलने की बात एकदम सही कही है पंडिज्जी ने।" मुन्ना मास्साब बोले।

"बुधौलिया जी की जमानत फमानत भई कि अभी भी हवालात में ही बिराजे हैं?" किसी ने ने पूछा।

"पेपर में जमानत का ठीक से कुछ लिखा नहीं है।" अखबार पर निगाह डालते हुए अपोली बोले।

"तो फिर अभी अन्दर ही होंगे। लाकअप की मोरी में मूत रये होंगे।" कोई बोला।

"जब असली कापियों से सारा काम किया जा सकता है तो बुधौलियाजी नकली कापियाँ काहे छपवा रहे थे?" एक ने पूछा।

"विनाशकाले विपरीत बुद्धि ! सबको पता है कि शिक्षामंत्री अभियान चलाए हुए हैं। महीना, दो महीना तनिक गम्म खा लो न यार। परीक्षा में वैसे भी अभी टेम है। कुछ न कुछ तो सेट हो ही जाएगा। कोई सतयुग लाने के लिए तो मंत्री बने नहीं हैं बे? नए-नए बने हैं; अपना भी बिजनेस जमाएँगे कि नहीं -बताइए?" पंडिज्जी को क्षोभ है कि शिक्षा के बिजनेस में ऐसे आतुर लोग घुस आए हैं जिन्हें बाज़ार की समझ नहीं है। तेजड़ियों की मार्केट नहीं है शिक्षा का बाज़ार।

मुन्ना मास्साब सील ठोंकते-ठोंकते थक गए हैं शायद। वे काम रोककर तंबाकू बनाने लगे। हथेली पर तंबाकू मलते हुए वे पंडिज्जी की बातें सुन रहे हैं। उन्हें देखकर अन्य

मास्टरों ने भी अपने-अपने गुटका पाउच निकाल लिए। माहौल तंबाकूमय हो गया। लोग तनावमुक्त होकर अपनी-अपनी कुर्सी पर फैल गए।

"फ्लाइंग स्क्वाड को इस बार शिकायत का कोई मौका न मिलने पाए प्रिंसिपल साहब; आवाभगत का बढ़िया इंतजाम रखिएगा।" पंडिज्जी ने चेताया।

"बढ़िया रहेगा।" प्रिंसिपल साहब ने संक्षिप्त उत्तर दिया।

"पिछली बार जैसा न हो..." मुन्ना मास्साब बोले।

"क्या हुआ था पिछली बार?" कोई अज्ञानी पूछ बैठा।

"याद नहीं? राठौर साहब ने जरा-सी रबड़ी माँग ली थी।

...याद आया? बेचारे पौना घंटा बैठे रहे पर हमारी रबड़ी नहीं आई।" पंडिज्जी को पूरा प्रकरण याद है।

"स्सालों को इत्ता तो चटाया था? एक रबड़ी न मिल पाने को ऐसा इश्यू न बनाया जाए।" अपोली ने आपत्ति उठाई।

"हमने कोई इश्यू नहीं बनाया है पर राठौर तो आज तक बनाए बैठा है न? अभी मुख्यालय में मिल गया था हमें। कहने लगा कि आपके सेंटर में परीक्षा की तैयारी अप टू डेट नहीं रहती। हम तुरत जान गए कि इशारा रबड़ी प्रकरण की तरफ है। खामखां, हमें उस दिन शर्मिंदगी उठानी पड़ी।" पंडिज्जी ने बताया।

मुन्ना मास्साब ने तंबाकू को मुँह में चुभलाते हुए आश्वस्त किया, "इस बार, प्रिंसिपल साहब के साथ हम भी आवभगत के इंतजाम में लगेंगे। लेंड़ी तर कर दी जाएगी सबकी। इस बार राठौर साहब चाँद भी माँगेंगे तो उसे हम दिन में भी आसमान से उतरवा के उनकी जीप में धरवा देंगे।"

पंडिज्जी ने मुन्ना मास्साब की तरफ गर्व से देखा। "सब लोग यदि इसी संकल्प के साथ काम करें तो सेंटर का नाम दिगदिगंत तक फैल जाए। जित्ता नाम होगा, हमें उत्ते ही कैंडीडेट मिलेंगे।" वे बोले।

मीटिंग ख़त्म हुई।

उठते-उठते मुन्ना मास्साब का फोन बज उठा। वे देर तक किसी से 'हाँ,' 'अच्छा,' 'ओके,' 'करते हैं,' 'पंडिज्जी को बता देते हैं' वगैरह बोलते हुए उसकी बातें सुनते रहे। मुन्ना मास्साब के चेहरे और लहजे में तनाव आ गया था।

"कालपी से फोन था, साहब के पीए का। ... कह रहे थे कि आप फोन ही नहीं उठा रहे?" फोन बन्द करके मुन्ना मास्साब ने पंडिज्जी को बताया।

"अरे, फोन तो स्साला घर पे ही पड़ा रह गया!" पंडिज्जी कुर्ते की जेब टटोलते हुए बोले।

"तभी तो उनने हमें फोन किया। ... आप अभी उनसे तनिक बात कर लें।" अपना फोन पंडिज्जी को देकर वहाँ से हट गए मुन्ना मास्साब। उन्हें कमरे से बाहर जाता देख अन्य सब भी फटाफट बाहर निकल गए।

तख़लिया टाइप माहौल हो गया। अब कमरे में अपोली थे बस, और पंडिज्जी।

पंडिज्जी देर तक पीए से बतियाते रहे।

पंडिज्जी के चेहरे पर तनाव है।

"ऐसे कैसे कर सकते हैं वे?" पंडिज्जी फोन पर पूछ रहे थे।

किताब पर जूता

"जरा सुन लो, जे बिन्नू क्या कह रही हैं!" पंडिताइन ने आवाज़ देकर पंडिज्जी से कहा।

बिन्नू से यहाँ तात्पर्य पंडिज्जी की इकलौती बेटी से है। अपोली से सात साल छोटी। लक्ष्मी।

लक्ष्मी इस साल इंटर की परीक्षा देने की तैयारी कर रही है।

पंडिज्जी की यह बेटी परिवार में एकदम अलग-सी है। अपोली से तो नितांत अलग और कोटरा के शिक्षाजगत के कीचड़ में कमलवत्। अपोली ने भी कभी अपने कॉलेज से ही इंटर किया था। तब वे यूपी बोर्ड की मेरिट लिस्ट में आते-आते बचे थे। उनके मेरिट में न आ पाने के कारण पंडिज्जी के कॉलेज की तब बड़ी थू-थू भी हुई थी। ... खुद की औलाद को तो मेरिट में ला न पाए और दावा करते हैं कि पैसा लाओ तो यूपी में टॉप करा दें! बाद में अपोली कालपी में आगे पढ़े। उनके लिए ऐसा कॉलेज चुना गया जहाँ नींव के पत्थरों से लेकर छत के कंगूरों तक नकल की वास्तुकला, पच्चीकारी और मीनाकारी ही थी। यहीं से बिना चुरेंट बोले उन्होंने फर्स्ट क्लास में बीए की डिग्री ली थी और अब वे घर के कॉलेज में मैनेजर थे। वे शिक्षा व्यवस्था की इस देशी मशीन में अभी पुर्जे और तेल, दोनों की महती ज़िम्मेवारी निभा रहे थे। स्थानीय राजनीति में भी वे पंडिज्जी की सवर्ण राजनीति का सुयोग्य उत्तराधिकारी बनने की ट्रेनिंग ले रहे थे। पंडिज्जी को अपोली से अपनी ही तरह की आशाएँ थीं जिन्हें अपोली अपनी ही तरह से पूरा भी कर रहे थे।

इधर पंडिज्जी की यह लड़की बड़ी अजीब थी। अपोली की पैदाइश के बाद की संतान है यह।

अपोली के जन्म के बाद सात साल तक तो पंडिज्जी को कोई संतान नहीं हुई।

फिर यह बिटिया पैदा हुई। नाम रखा गया-लक्ष्मी। पंडिज्जी ने बेटी को लेकर कभी ऐसा कोई विशेष सपना नहीं पाला। इस इलाके में लड़की से कोई ऐसा सपना पालता भी नहीं। अरे, लड़की से कैसी आशाएँ? उसको लेकर कैसी कोई महत्त्वाकांक्षा? कौन-सा ऐसा बड़ा सपना? यहाँ तो बेटियों को लेकर यदि सपने हैं भी तो ये वही सनातन सपने हैं। चंद छुद्र सपने। ... कि बिन्नू ठीक-ठाक से बड़ी हो जाएँ। उनका रंग गोरा निकले। वे कहीं लूली-लंगड़ी न निकल आएँ। बेटियाँ संस्कारी हों। आज्ञाकारी निकलें। हमेशा सिर झुकाकर चलें। किसी से आँखें मिलाकर न बतियाएँ। लड़कों से हँसकर बातें न करें। घर की इज़्ज़त का ख़याल रखें। समझदार हों। तेज़-तेज़ न हँसें। भाइयों से कभी अपनी तुलना न करें। ईश्वर ने लड़की बनाया है तो लड़की की तरह ही रहें। फालतू मुसकुराएँ न। रसोई में माँ की सहायता करें। चूल्हा-चक्की सँभालना सीखें। हमेशा याद रखें कि उनके सिर पर घर की मानमर्यादा के पालन की ज़िम्मेवारी है। घर की मानमर्यादा का भार भाइयों के सिर पर क्यों नहीं है; वे ऐसे कठिन प्रश्न कभी न उठाएँ। घर की इज्जत की परिभाषा आख़िर क्या है; यह भी कभी न पूछें। ... बस ऐसी ही कुछ मामूली-सी आशाएँ लक्ष्मी से भी हैं पंडिज्जी की और ऐसा करके वे कुछ अनोखा नहीं कर रहे। इस तरफ़ लोग अपनी बेटियों से यही चाहते हैं कि एक उम्र में उनकी शादी ठीक से निबट जाए। उसे सुयोग्य वर मिल जाए। सुयोग्य का मतलब? मतलब वह वर, जो अनुमानित दहेज में सहज उपलब्ध हो सके। फिर लड़की की अपनी गृहस्थी हो। गृहस्थी में वह सुखी रहे। अपनी ससुराल में ख़ुश रहे। दुखी भी हो

तो उस दुख से वह स्वयं निबटे। शादी के पश्चात् मायके से बहुत आशाएँ न रखे। पति को परमेश्वर माने और मायके को एक बीता हुआ किस्सा। ... लक्ष्मी को लेकर भी इसी तरह की छोटी-छोटी इच्छाएँ पाल रखी हैं पंडिज्जी के परिवार ने।

परन्तु (पंडिज्जी की) यह लड़की तो एकदम अजीब निकली।

एक तो उसने यह परेशानी पैदा कर दी कि वह पढ़ाई-लिखाई में बेहद होशियार निकल आई वरना वैसे तो घर की ही बात थी। बाप का कॉलेज था। पढ़ने की ज़रूरत ही नहीं थी। पूरा कॉलेज उसे टॉप कराने को बेक़रार था। घर में ही नकल

की पूरी मशीनरी मौजूद थी और ग़ज़ब था कि फिर भी वह पढ़ती थी। खूब पढ़ती थी। पढ़ने की ज़रूरत नहीं थी पर वह खूब पढ़ती थी। दूसरा यह कि वह नकल करने वालों से नफरत करती थी। नकल कराने वाले घर के ही लोग थे सो मन मसोस कर रह जाती। हाँ, घर में वह सबके सामने कहती रहती कि नकल के कारण मेहनती और पढ़ाकू छात्रों का हक मारा जाता है। जब-तब वह अपने ही पिता से इस विषय पर बहस भी कर बैठती। पिता इस बहस को अपनी बेइज़्ज़ती मानते। अपोली से तो इसी विषय पर लक्ष्मी की खूब तू तू मैं मैं तक हो जाती। अपोली इसे लक्ष्मी की अक्षम्य बेशर्मी मानते।

तीसरा अजूबा यह था कि लक्ष्मी माँ को बताती रहती थी कि हमारे कॉलेज के अध्यापकों को पढ़ाना ही नहीं आता। उन्हें ज्ञान ही नहीं है। उन लोगों को पता ही नहीं कुछ। शुद्ध भाषा बोलना तक तो वे जानते नहीं। ग़लत अंग्रेजी, और उससे भी ग़लत हिन्दी बोलते हैं। माँ चुपचाप उसकी बातें सुन लेती है। इतनी होशियार बेटी को देखकर मन ही मन भयभीत रहती है माँ। पंडिज्जी से यह सब बताओ तो वे गुस्सा हो जाते हैं। समझाते हैं कि बेटा, पढ़ने, पढ़ाने वाले टीचर्स का ज़माना तो कब का गुज़र चुका है। अब तो वे नाकारा लोग ही मास्टरी में आते हैं जो कहीं और किसी काम में फिट नहीं हो पाते। अपनी मर्जी से अध्यापन में तो कोई विरला मूर्ख ही आता है। मास्टरी के नाम पर अब या तो लफंगई चल रही है या ऐसेई बस टाइम पास। इनसे पढ़ाने की उम्मीद करना भी पाप है। महापाप। जे स्साले किसी को, किताब देखकर भी तो नकल करा नहीं पाते, पढ़ाएँगे क्या! ... आपको अपने कॉलेज के स्टैंडर्ड की चिन्ता नहीं होती पिताजी ?... लड़की ने पूछा था कभी। तब वे उसके भोले प्रश्न पर मुस्करा दिये थे, बस। उन्होंने कहा कुछ नहीं। उन्हें खूब पता है; ज्ञान का जो यह दीपक कोटरा की मुंडेर पर उन्होंने रख छोड़ा है उसके तले तो घना अँधेरा है ही, उसकी बाती और तेल की क्वालिटी भी कुछ ऐसी है कि मुंडेर पर न तो उजाला होता है, न अँधेरा हटता है-बस, एक धोखा-सा कुछ बना रहता है।

लक्ष्मी जैसी बेटी को इस तरफ़ जिद्दी और बिगड़ैल कहा जाता है।

अपनी बेटी को समझाने की कोशिश करते रहते हैं पंडिज्जी। ... क्या करना है तुम्हें पढ़-लिख कर?... वे उसे अक्सर कहते हैं। मैट्रिक में वह अच्छे नम्बरों से फर्स्ट आई थी। मेरिट से बस थोड़ी ही कम रह गई थी। अब इंटर में है। अपनी पढ़ाई का बड़ा घमंड है उसे, ऐसा मानते हैं पंडिज्जी और अपोली। उसे देख-देख कर घबराती रहती है माँ। इस लड़की का आख़िर क्या होगा? पंडिज्जी ने इसका एक ही पारम्परिक तोड़ सोच रखा है- लक्ष्मी की शादी। पहले ही बिरादरी में सुयोग्य वर खोजा जा रहा है। पहिचान वालों में जन्मपत्री बँट चुकी है। रिश्तेदार लोग काम पर लगे हुए हैं। एक ठीक-ठाक से घर और वर की गुपचुप तलाश चल रही है। हाँका जारी है। सुयोग्य वरों को घेरा जा रहा है। सभी हितचिंतक काम पर लगे हैं। लड़की जवान हो जाए तो पूरी बिरादरी को चिन्ता हो जाती है।

बसे बेपरवाह और बेख़बर अपनी ही धुन में मग्न है।

***

"जरा सुन लो, जे बिन्नू क्या कह रही है।" पंडिताइन ने कहा।

"क्या कह रही है?... अब क्या नया बोल रही है?"

पंडिज्जी ने चिढ़कर पूछा।

पंडिज्जी अभी-अभी घर लौटे हैं।

कालपी में पूरा दिन लगाकर आए हैं। थके हुए हैं। स्कूल की चिन्ताएँ अलग पीछा कर रही हैं। कालपी तक गए थे परन्तु जिला शिक्षाधिकारी से मिलने तक नहीं जा पाए। सारा टाइम कानूनगो ही खा गया। नया-नया आया है। बड़ा कानून झाड़ रहा था। जित्ता सुन रखा था उससे भी बड़ा हरामी निकला। कब्रगाह वाली जमीन की दोबारा पैमाइश की फालतू बातें उठाकर बैठ गया पठ्ठा। कहने लगा कि जित्ती जमीन चाँपने का केस आप पर बनाया गया है, जमीन तो उससे भी कहीं ज्यादा चाँपी गई है। मैं दोबारा नपती कराऊँगा और इस पटवारी की भी नपती साथ में न कराई तो कहिएगा। पुढे पर हाथ ही न धरने दे स्साला! पंडिज्जी ने धीरे से संकल्प पूछ लिया तब तो एकदम ही उखड़ गया। ... "हमें रिश्वत देने की बात करते हो?..." स्साला ऐसा बमका कि सब लोग पलट के देखने लगे। बड़ी हुज्जत के बाद सेट हो पाया। उस पर भी बताने लगा कि हम नकद में एक पैसा न लेंगे- बस, चौबीस कैरेट के सिक्कों में ही सारा लेन-देन रहेगा। फालतू के पैसे लग गए, दिन भर की हुज्जत हुई सो अलग। ... थककर चूर हैं

पंडिज्जी अभी।

घर लौटकर जूते-मोजे उतारे ही थे और अभी पैंट, शर्ट उतारकर पटरेदार अंडरवीयर में खड़े हैं। हाथ में पाजामा है। एक टाँग पाजामे में। एक नंगी। तभी पत्नी ने पानी का ग्लास हाथ में पकड़ाते मकड़ात हुए हुए कहा, कहा, "जरा "जरा सुन सुन ली, लो, जबि जे बिन्नू क्या कह रही है।"

पाजामे में दूसरी टाँग डालते हुए पंडिज्जी ने बिन्नू की तरफ देखा।

पत्नी के पीछे ही खड़ी है लक्ष्मी। मौन।

"क्या कह रही है?" पंडिज्जी ने बेटी से न पूछकर पत्नी से ही पूछा।

पत्नी ने पलटकर बेटी को घूरा। बेटी कुछ नहीं बोली। बस तनकर खड़ी रही। चुपचाप।

"क्या बात है? बोलो?" पंडिज्जी ने बेटी को घूरती पत्नी की शक्ल पढ़कर अनुमान लगाया कि बात गम्भीर है।

"अब वोई बात अपने बाप से भी तो बोलो न... कि माँ पर ही तुम्हारा सब जोर चलता है?" पंडिताइन ने बेटी की तरफ़ देखकर कहा और पंडिज्जी के कपड़े पलंग से उठाकर दरवाज़े के पीछे ठुकी कीलों पर लटकाने लगीं।

"अरे, तो तुम्हीं बोल दो न।" पंडिज्जी चिढ़कर बोले।

तभी अपोली भी घर में घुसे। वे भी इसी कमरे में आ गए। सबके चेहरे पर तनाव देखकर वे यहीं रुक गए।

"अरे, कुछ बोलोगी या...?" पंडिज्जी तख़्त पर बैठते हुए थोड़ा ऊँचे स्वर में बोले।

दोनों फिर भी चुप रहे।

"अरे, कोई तो बोलो।" पंडिज्जी बुरी तरह चिढ़कर बोले।

पंडिताइन बेटी की तरफ़ देखे जा रही हैं।

बेटी चुप ज़रूर है पर ऐसी विद्रोही मुद्रा में तनी खड़ी है मानो अन्दर कोई बवंडर तैयार हो रहा हो।

अन्ततः पंडिताइन ही बोलीं, "जे तुमसे तो कुछ नहीं बोलेगी। बस, हम ही मिलते हैं

इसे। हमसे ही बोलेगी सब। बाप से तो डर लगता है न।"

"हम किसी से नहीं डरते।" अब जाकर लक्ष्मी ने कुछ कहा।

"अरे, कोई हमें भी कुछ बताएगा कि यूँ ही आपस में उलझते रहोगे?" पंडिज्जी चिल्लाए।

इधर अपोली भी आकर बाप के ठीक बगल में बैठ गए हैं।

"हम बताते हैं- जे कह रही है कि इंटर के बाद आगे पढ़ने के लिए जे कोटा जाएगी। वहाँ कोचिंग पढ़ेगी।" पंडिताइन ने वातावरण में उड़ रहे तनाव के पेट्रोल को मानो माचिस छुला दी।

एकदम से भभक पड़े पंडिज्जी। मुँह लाल भभूका हो गया। गुस्से में ज़ुबान को मानो लकवा ही मार गया। वे एकदम चुप रह गए। काँपने लगे। गुस्से से उनके हाथ थरथराने लगे। बेटी को घूरते हुए चुपचाप थरथराते हाथों से वे अपना कुर्ता पहिनने लगे। पूरा बदन जल रहा था। कुर्ते से धुआँ जैसा निकलने लगा था।

और अपोली?

वे तो और भी ज़ोर से धधकने लगे। बाप को चुप देखकर उन्होंने ही मोर्चा सँभाला।

"क्यों?... कलेक्टर बनबे का इरादा है क्या?" अपोली बोले।

लक्ष्मी ने उनकी तरफ निडर नज़रों से देखा।

"और आप तो बस चुप ही रहें।" लक्ष्मी ने कहा।

"देखा आपने?" अपोली यही बोल पाए।

पंडिज्जी ने बेटे का साथ दिया, "क्यों? क्यों चुप रहे वो? ठीक ही तो पूछ रहा है? तुमने क्या करने की ठानी है?"

"कुछ तो करेंगे।" बिन्नू ने भाई की तरफ़ देखकर कहा।

"तनिक हम भी तो सुनें बिन्नू, क्या करबे वाली हो?" पंडिज्जी ने व्यंग्यपूर्वक पूछा।

"पिताजी, हमें आगे पढ़ना है।" लक्ष्मी ने बिना आँखें झुकाए या झपकाए कहा।

अपोली घूरे जा रहे हैं बिन्नू को। घूरते ही जा रहे हैं।

"तुम्हें आगे पढ़बे से कौन मना कर रहा है? अपोली ने भी तो आगे कालपी के कॉलेज से ही पढ़ा था। ... कि नहीं?" पंडिज्जी बोले।

"हमें वैसी वाली पढ़ाई नहीं करनी है।"

"वैसी वाली का मतलब?" अपोली ने गुर्राकर पूछा।

"मतलब आप आप खूब खूब जानते जानते हैं।"।" लक्ष्मी लक्ष्मी ने बेपरवाह अंदाज़ में कहा।

"वैसी पढ़ाई नहीं करनी तो फिर कैसी वाली करनी है तुम्हें?" अपोली ने खिसियाकर पूछा।

"कम से कम हमें ऐसी तो नहीं ही करनी है।" लक्ष्मी ने दृढ़ स्वर में कहा।

"ऐसी ही तो होती है पढ़ाई; और कैसी होती है?...कोटरा से कालपी रोज अप-डाउन करना। अपने मुरली मनोहर गुप्ताजी का कॉलेज है। वहाँ सब लोग हमें जानते हैं। ठाठ से बीएससी करो वहाँ से।" पंडिज्जी बोले।

"हमें पीएमटी की कोचिंग करनी है। उसके लिए कोटा जाना है।" बेटी ने कहा।

"दिमाग फिर गया है तुम्हारा?" अपोली बोले।

लक्ष्मी ने कोई उत्तर नहीं दिया।

"सुना आपने?" अपोली ने पिताजी की तरफ़ देखा।

"कलियुग आ गया है स्साला!" पंडिज्जी भुनभुनाए।

"इसमें कलियुग, सतयुग की बात कहाँ से आ गई? मैं डाक्टर बन जाऊँगी तो कलियुग हो गया?... लड़कियाँ अनपढ़ बनी रहें-वही आपका सतयुग होगा?" बिन्नू एकदम निर्लज्जता पर उतर आई है-ऐसा मान रहे हैं पंडिज्जी।

"अपने बाप से मुँह लड़ाती हो?" पंडिज्जी को और कुछ नहीं सूझा।

"इसमें मुँह लड़ाने की कौन-सी बात कह दी हमने?"

"यह मुँह लड़ाना ही है।" अपोली ने कहा।

"यदि सच कहने में मुँह लड़ता है तो फिर लड़े।" लक्ष्मी ने कहा।

"देखा आपने?" अपोली ने पंडिज्जी की तरफ देखा।

"अम्मा, हमारे लिए कुछ बोलो न। अभी तो हमसे कहती थीं कि तुम हमारे लिए बात करोगी। अब करो न।" बिन्नू ने माँ से आग्रह किया।

"अच्छा! तो जे सारी आग इनने लगाई है-क्यों?" पंडिज्जी ने गुस्से में पत्नी की तरफ देखा।

पंडिताइन ने कहा, "सुनो बिन्नू क्या कह रहा है। अब जाओ।"

"चोप्प ! एकदम चुप!!" पंडिज्जी गला फाड़कर चिल्लाए। पंडिताइन चुप हो गईं पर घूरती रहीं पंडिज्जी को।

"क्यों चुप? चुप क्यों रहे माँ?" बेटी ने पूछा।

"...और तुम भी चुप। एकदम चुप रहो।" पंडिज्जी बिन्नू से चिल्लाकर बोले।

फिर पंडिताइन की तरफ़ देखकर बड़बड़ाने लगे वे, "बड़ी अंग्रेज बन रही हो, क्यों?"

"इसमें अंग्रेज बनबे की क्या बात कह दी हमने?" पंडिताइन ने पूछा।

"मोंड़ी को मोंड़ा बनाने का कौल उठा रही हो तुम। जे अंग्रेजों वाली बात नहीं है तो और क्या है?" पंडिज्जी बोले।

"मोड़ी आगे पढ़ना चाहती है।"

"पढ़कर क्या करेगी? जे भी तो बताओ?"

"लड़कियों का पढ़ना इत्ता ही बुरा है तो अपने कॉलेज में भी लड़कियों की पढ़ाई बन्द करा दो न।"

"हमें कॉलेज चलाना न सिखाओ। वह हमारा धंधा है।

समझीं? और तुम इत्ता बढ़-चढ़कर न बोलो पंडिताइन।" पंडिज्जी ने आँखें दिखलाईं।

"बिन्नू की इच्छा है..."

"...और तुम्हारी क्या इच्छा है? लड़की की कमाई खाने की इच्छा हो रही है क्या?" पंडिज्जी बोले।

पंडिताइन ने हिम्मत करके एकदम ठंडे स्वर में अपनी बात रखी : "हर चीज को पैसे से न जोड़ा जाए। बिन्नू अगर और आगे पढ़ना चाहती है तो बताइए न, हम उन्हें कैसे रोक दें?"

"वाह भाई। ...देखिए तो इनकी मजबूरी! बताइए! बेचारी !! कहती हैं कि ऐसे कैसे रोक दें?" पंडिज्जी नाटकीय ढंग से बोले।

"कैसी बातें करती हो तुम अम्मा? हम इसे कोटा भेज देंगे? घर की लड़की दूसरे शहर में रहेगी? अकेले !" अपोली ने भर्त्सना के स्वर में कहा।

"अरे, इन महारानी को तुम क्या समझा रहे हो? इनने ही तो ठानी है कि हमारी नाक चौराहे पर कटवाई जाए। है न? इनने तो ठान ली है कि ये बिलकुल न समझेंगी। एकदम अंग्रेज बन गई हैं तुम्हारी अम्मा। कोटा में पढ़ने दो बेटी को। रहने दो अकेले। क्यों? खुश?" पंडिज्जी कड़वाहट से भरकर बोले।

"हम वहाँ अकेले क्यों नहीं रह सकते? कैसे नाक कट जाएगी आपकी? लड़कियों के हास्टल हैं वहाँ। और भी हजारों लड़कियाँ रहती हैं वहाँ, अकेले। उन सबके माँ, बाप नकटे हो गए क्या?" लक्ष्मी ने कहा।

"हमें अपनी नाक देखनी है।" पंडिज्जी और क्या बोलते।

"खूब देखिए। दिन भर देखिए।"

"पर तुम हमारी कटवा के ही मानोगी, क्यों?"

"हम यह बात नहीं मानते।"

"तो?" पंडिज्जी ने कहा।

"तो क्या?"

"तुम्हें नहीं पता कि औरत जात के लिए समाज ने क्या नियम निर्धारित किए हैं?"

पंडिज्जी ने पंडिताइन की तरफ देखकर कहा।

पंडिताइन चुप रहीं पर बिन्नू ने पूछ लिया, "क्या नियम निर्धारित किए हैं; बताइए न जरा?"

"तुम्हें नहीं पता?"

"नहीं, हमें नहीं पता। हमें तो बिलकुल भी नहीं पता। साथ में यह भी बता दें कि आपके ये नियम कौन-सी किताब में लिखे हैं?" लक्ष्मी ने पूछा।

"आपके नियम ! देखा तुमने? कैसी ढीठ जैसी बातें कर रही है!" पंडिज्जी को समझ ही न आया कि वे इसके जवाब में और क्या बोलें।

"पिताजी से मुँहजोरी कर रही हो तुम लक्ष्मी।" अपोली ने चेतावनी दी।

"यह कोई मुँहजोरी नहीं है।"

"यह मुँहजोरी है। बिलकुल है।"

"सही बात पूछना मुँहजोरी है तो मान लो कि फिर हम मुँहजोरी ही कर रहे हैं।"

"हम तुम्हारा मुँह तोड़ देंगे।" अपोली उठने को हुए।

"मुँह तोड़ने से प्रश्न खत्म नहीं होंगे। बताएँ न कि ये नियम कहाँ लिखे हैं और किसने बनाए हैं? किसी ने औरतों से भी पूछा था कि बैठकर खुद ही बना डाले?" लक्ष्मी ने कहा।

पंडिज्जी ने अपोली को घूरकर देखा।

"तुम तनिक देर चुप नहीं रह सकते? हम बात कर रहे हैं न?" पंडिज्जी बोले।

"तुम भी तनिक गम्म खाओ बिन्नू । चुप हो जाओ।" पंडिताइन ने बात बढ़ती देख लक्ष्मी को रोका।

"अब खुद देख लिया न तुमने? मोंड़ी को सिर चढ़ाने का नतीजा देखा?" पंडिज्जी ने बोले।

पंडिताइन चुप रह गईं।

अपोली गुर्राते हुए बैठे रहे।

पंडिज्जी तनिक देर तक चुप रहकर ही कसमसाते रहे।

पंडिज्जी ने अंतिम निर्णय-सा देते हुए कहा, "यहाँ से कोई भी कहीं नहीं जा रहा है। ... अपोली ने भी कालपी में ही पढ़ा था। उसे हमने कोई कोटा-फोटा भेजा था क्या?"

लक्ष्मी हँसने लगी।

अपोली का माथा गरम हो गया।

"हम पे हँस रही हो?"

"हम तो पिताजी की बात पे हँस रहे हैं।"

"पढ़ाई में जरा-सी ठीक क्या निकल आईं कि दिमाग ही खराब हो गया है तुम्हारा, क्यों? बताओ, पिताजी ने इसमें कौन-सी हँसने वाली बात कह दी है?" अपोली ने कहा।

"वे कालपी और कोटा को एक-सा बता रहे हैं- यह हँसी की बात नहीं है?" बिन्नू ने कहा।

"पढ़बे के लाने एक कॉलेज होना चाहिए, बस; वो कालपी में भी है।" पंडिज्जी ने कहा।

"कुर्सी, टेबुल से कॉलेज बनता है क्या?"

"तो कोटा में इससे और क्या अलग मिल जाना है?"

"वहाँ कम से कम वो सब तो न होगा जो कालपी में होता है।"

"कालपी में क्या होता है?"

"भइया से पूछिए न-वे आपको सब बता देंगे।"

"तुमईं बता दो न बिन्नू?"

"जो वहाँ होता है, उसके लिए कोई कोचिंग नहीं चाहिए।"

"अरे, होता क्या है, जे तो बोलो?"

"कालपी में जो भी होता है वो कोटा में नहीं होता, न वैसा वहाँ सिखाया जाता है। पूछते क्या हैं? आपको सब तो पता है।"

"नहीं, हमें नहीं पता।"

"कोटा में नकल नहीं होती पिताजी। वहाँ पढ़ाई होती है। बस, यही फर्क है।"

बिन्नू, पंडिज्जी का संवाद लम्बा जरूर चला परन्तु जहाँ आकर वह रुका उसने पंडिज्जी को अवाक् कर दिया। अपनी ही बेटी का मुँह देखते रह गए वे। क्यों अपनी ही बेटी अभी ठीक से पहिचान में नहीं आ रही? उन्हें इतना तो खैर पता था कि बेटी बड़ी हो गई है परन्तु बड़ी होने का मतलब उन्होंने बस इतना ही माना था कि अब जल्दी ही इसकी शादी करनी है। इससे अलग कभी कुछ सोचा ही नहीं। आज जाकर पता चल रहा है कि बेटी तो ज़्यादा ही बड़ी हो गई है। डर-सा लगने लगा पंडिज्जी को। बेटी तो बहुत बड़ी हो गई है। कुछ ज्यादा ही समझदार भी। पर यह सब क्या है? यह तो एकदम खुला विद्रोह है।

पत्नी कभी भी उनसे पलटकर इस तरह मुँह नहीं लगी हैं। असहमत हों तो मौन रह जाती हैं। वे अपनी सीमाओं से परिचित हैं। उन सीमाओं को स्वीकार भी करती हैं। पर यह तो एकदम ही नई स्त्री उनके सामने थी। असहमत भी और मुखर भी। ... जे समाज क्या स्साला एकदम रसातल में जाकर ही मानेगा? अब क्या करें? अभी इसका क्या करें? इसे क्या कहें? कैसे कहें?

सीधे ही कहा जाए। सीधे मना करना ही श्रेयस्कर रहेगा। "बिन्नू, इधर-उधर की तीन, पाँच तो हम करेंगे नहीं। बस, हमारी बात साफ सुन लो। हम तुम्हें कोई कोटा-फोटा भेजबे वाले नहीं हैं।" पंडिज्जी ने अंतिम निर्णय देने की भंगिमा में कहा।

"क्यों?" बिन्नू ने संक्षिप्त पर गहन प्रश्न पूछा।

"तुम तो उधर अकेली चली जाओगी और वहाँ रह भी लोगी, पर इधर? यहाँ सवर्ण समाज के लोग हमसे जो दस तरह की बातें पूछेंगे..."

"...क्यों पूछेंगे?"

"पूछेंगे नहीं। थू-थू करेंगे। ... छींटे हमारे मूँ तक उचटेंगे।" "जमाना बदल गया है पिताजी। कोई कुछ न बोलेगा।"

"तुम हमें दुनियादारी न सिखाओ बिन्नू । एक-दो साल में हमें तुमारे हाथ पीले कर देने

हैं। तब तक कालपी में पढ़-पढ़ा लो, बस। ... या घर बैठो। प्राइवेट परीक्षा दो। ... जे कोचिंग, फोचिंग, सब भूल जाओ।"

पंडिज्जी ऐसा ही कुछ बड़बड़ाते रहे। अपोली बैठे लक्ष्मी को घूर रहे हैं। माँ चुपचाप खड़ी है। लक्ष्मी भी चुप होकर सब सुनती, देखती रही।

"पढ़बे में बढ़िया होबे का मतलब जे नहीं होता। ... तुमने वैसे भी भौत पढ़ लिया है। पढ़ने से होता क्या है? पढ़ने से होना क्या है? पढ़बे की असल हैसियत बताएँ हम तुम्हें? फर्स्ट क्लास लाने वाले, पीएचडी काँख में दबाए लोग रोज नौकरी के लिए हमारी चिरौरी करते खड़े रहते हैं। तुम कोई भी पढ़ाई कर लो। डाक्टर बनना है न? बन जाओ। डाक्टरी कर लो। पर, तुम जे कभी न भूलना कि तुम लड़की भी हो। तुम जे बात भूल मत जाना। कभी भूलीं तो यह समाज तुम्हें क्षमा नहीं करेगा। जेई मुख्य बात है समाज की; औरत अपनी सीमा में रहे। तो इत्ता पढ़बे की न सोचो कि मुख्य बात ही भूल जाओ। ...मोंड़ी हो। मोंड़ी जैसा रहना सीखो।"

अपोली लड़का होने के अहसास से लबरेज बैठे हुए पिता की बातें सुन रहे थे और लक्ष्मी विद्रोही मुद्रा में चुपचाप देख-सुन रही थी, पिता को।

लक्ष्मी के चेहरे पर र जगह-जगह जगह-जगह बड़ बड़े हर्मों हफी में में विद्रोह विद्रहि लिखा देख रहे है पंडिज्जी।

वे जीवन में पहली बार देख रहे हैं कि पंडिताइन भी न केवल उनसे असहमत हैं, वे अपनी मुद्रा से असहमति जाहिर भी कर रही हैं।

पंडिज्जी बड़बड़ाने लगे :

"महारानी कोटा जाएँगी ! कोचिंग में पढ़ेंगी ! वहाँ अकेली रहेंगी! ... और हम यहाँ सबको जवाब देते फिरेंगे। क्यों?... तुम लोगन ने जेई ठानी है ना? दो किताबें क्या पढ़ लीं, मैट्रिक में फर्स्ट क्या आ गईं कि खुद को बाप का भी बाप मानने लगीं, क्यों?... कान खोलकर सुन लिया जाए- यहाँ से कोई नहीं जाएगा कोटा-फोटा। कल से इस घर में किसी ने कोटा का नाम भी लिया तो..."

"...तो?" लक्ष्मी छोटे-छोटे सवालों की पैनी पिन चुभा रही हैं, पंडिज्जी के अहम के गुब्बारे में।

"तुम्हें दुनिया की कोई समझ भी है बिन्नू?" पंडिज्जी बस यही बोल पाए।

अपोली भी कब तक चुप रह पाते? बोले, "अपने ही पिता के स्कूल को नकल का अड्डा बताती है-जे तो संस्कार हैं इसके।"

"संस्कारों की बात कम से कम आप तो न ही करें।" लक्ष्मी ने व्यंग्य में कहा।

"क्यों? क्यों न करें? हम राक्षस हैं?"

"भाभी मायके जाकर क्यों बैठ गई हैं, यह बात पूरे कोटरा को पता है।" लक्ष्मी ने मानो नंगा तार छुला दिया।

"मैं तेरा मूँ तोड़ दूँगा।" अपोली चीख पड़े।

लक्ष्मी चुप हो गई।

चुप होकर वे बारी-बारी से पिता और भाई का मुँह देखती रही।

पंडिज्जी ने अंतिम फ़ैसले पर मोहर लगाते हुए कहा, "पढ़ना तो तुम्हें कालपी में ही पड़ेगा बिन्नू। पढ़ना हो तो पढ़ो, नहीं तो..."

"नहीं तो क्या?"

"...घर बैठो। जे कोटो-फोटा का पाठ जिसने का पाठ जिसने भी तुम्हें पढ़ाया हो उसे बता देना कि हमारे घर की लड़कियाँ..."

अपोली बीच में कूदे।

"...वोई है स्साला। श्रीवास्तो का लौंडा। पीएमटी क्या निकाल ली, स्साला यहाँ सबका सलाहकार बना बैठा है।"

पंडिज्जी ने चेतावनी के स्वर में कहा, "तुम जे जात-कुजात के लौंडों से दूर ही रहना बिन्नू । सबकी आँखन में सुवर का बाल है।"

अपोली बोले, "हम जाकर समझाते हैं न स्साले को। कल ही पकड़ते हैं। ... बता देंगे कि हमारी भैन के आस-पास भी कभी दिखे तो हम जमीन में गाड़ देंगे।"

लक्ष्मी ने अपोली से पूछा, "आप लोग कभी कुछ सीधा भी सोच पाते हो?"

उत्तर पंडिज्जी ने दिया, "दुनिया भौत टेढ़ी है बिन्नू। हमें भी उसी हिसाब से सोचना पड़ता है। हमने तुम्हें साफ बता दिया है। ... कहीं नहीं जाना है।"

लक्ष्मी के हाथ में किताब थी।

वह कुछ देर तक बाप को घूरती रही।

फिर पूरे जोर से किताब को ज़मीन पर फेंककर वह अन्दर के कमरे तरफ चल दी।

जाते-जाते बोली, "हम आगे पढ़ेंगे। जरूर पढ़ेंगे।"

कहकर वह अपने कमरे तरफ़ चली गई।

"इसकी बेशर्मी देखी?" पंडिज्जी ने न जाने किससे कहा।

"ज्यादा करेगी तो किसी दिन काट के रख दूँगा।" अपोली का आहत पुरुष बोला।

माँ ने अपोली को भर्त्सना से देखा।

"वाह रे सपूत। ... बस जेई बाकी रह गया था?" पंडिताइन बोलीं।

"और वह जो करने को कह रही है, वो? वो कुछ नहीं? ... खुद के भी करम देखे हैं कभी?" माँ ने कहा और उठकर अन्दर चली गई।

"इसी औरत ने बिगाड़ा है उसे।" पंडिज्जी बड़बड़ाए।

अपोली जूते उतारने लगे। गुस्से में उन्होंने अपना एक जूता ज़ोर से एक तरफ़ फेंका। जूता ठीक वहाँ जाकर गिरा जहाँ बिन्नू द्वारा फेंकी फेंकी गई किताब ज़मीन पर पड़ी फड़फड़ा रही थी।

एक बाइज़्ज़त का जुलूस

जिला जेल की इमारत छोटी-सी है।

अंग्रेजों के ज़माने का जेल है।

बहुत ही पुरानी इमारत। मोटी-मोटी दीवारें। खूब बड़ा-सा फाटक। बड़े फाटक में फिर एक छोटा-सा फाटक। गेट पर संतरियों की गुमटी। इमारत ठीक वैसी है जैसी अंग्रेजों ने कभी छोड़ी थी। इमारत अभी तक गिरी नहीं है परन्तु कभी भी गिरने की धमकी देती हुई मालूम होती है। सभी दीवारों से चौतरफा पलस्तर झर रहा है। वयोवृद्ध किस्म

की बूढ़ी इमारत। कानून के ख़ानदान की दादी माँ टाइप । कमज़ोर मगर आदरणीय। दिखता कुछ नहीं, पर ज़माने पर नज़र। ध्वस्तप्राय परन्तु फिर भी उसकी अपनी एक हैसियत। आश्चर्य होता है कि अपराधी इस जेल को तोड़ते क्यों नहीं? अपराधियों की भलमनसाहत और उनके आलसी स्वभाव के सहारे चल रहा है यह जिला जेल।

एक नीले से बदरंग बोर्ड पर बड़े-बड़े सफेद हों में लिखा है, 'जिला जेल'। बोर्ड की कील एक तरफ़ से ढीली हो गई है। बोर्ड तिरछा होकर कैसे तो भी लटक रहा है। कभी पूरा गिर जाएगा तो शायद ठीक से लगाया जाए।

जेल, कालपी के बाहरी इलाके में एक वीरान से मैदान में बना हुआ है। फाटक के सामने से एक सीधी जाती सड़क है। सड़क के दोनों तरफ कच्चे मकान बने हैं। बड़े फाटक के समक्ष बड़ा-सा ख़ाली अहाता है जिसमें अभी एक पुलिस बस, दो जीपें, कुछ मोटरसाइकिलें, चंद साइकिलें, कुछ साइकिल रिक्शे और बहुत से लोग खड़े हैं। अधिकतर लोग जेल में बन्द लोगों के रिश्तेदार हैं या फिर जेल कर्मचारी। कुछ अलबत्ता बस यूँ ही खड़े हैं।

थोड़ा-सा हटकर, इसी सीधी सड़क पर बन्ने मियाँ की मोरमोटर लगी हुई है।
मोरमोटर? बन्ने मियाँ? क्या मतलब?

मतलब हम समझाते हैं।

और इसे समझने के लिए हमें कथा में बहुत पीछे नहीं, बस, अभी से छह घंटे पहले के वक़्फ़े में जाना होगा। सुबह के सात बजे के आस-पास का समय रहा होगा तब। तो पहले वहाँ चलते हैं :

***

सुबह ।

कोटरा की एक गली में कच्चा-पक्का-सा गरीबखाना बन्ने मियाँ का।

घर की बाहरी दीवार पर, दरवाज़े के पास टेढ़े-मेढ़े हों में नीले रंग में यह इबारत दर्ज है- 'बन्ने मियाँ का मशहूर ब्रास बैंड।' मूलतः शादियों का काम लेते हैं बन्ने मियाँ। बैंडबाजा। सिर पर धर के, बारात के संग-संग चलने वाली लाइटें। इस तरफ़ हंडा कहते हैं उनको। फिर, आतिशबाजी का इंतज़ाम। सजावटी, खुली, लम्बे बोनट वाली एक बेहद पुरानी कार जिस पर सिंहासननुमा बड़ी-सी कुर्सी जमा देते हैं तो वह मोरमोटर बन जाती है। पीतल की फूल-पत्तियाँ, रंगबिरंगी रोशनी, सिंहासन के टीन पत्तरों से परावर्तित होता प्रकाश; रात में ऐसी चमक उठती है मोरमोटर कि एकदम राजसी सवारी लगे। बन्ने मियाँ को अपनी मोरमोटर पर गर्व है। उनका दावा है कि ऐंचकताने

और चूतिए दूल्हे को भी इस मोरमोटर पर बिठा दो, देखने वालों को वह किसी राजकुमार जैसा भव्य लगेगा।

बन्ने मियाँ शादी के अलावा अन्य कार्यक्रमों में भी बैंड बजा आते हैं; जो भी बुला ले। सस्ते ज़रूर हैं पर समाँ एकदम महँगा वाला बाँध देते हैं। दिल लगाकर फूँक मारते हैं। इस बारे में अपनी ही एक साख है बन्ने मियाँ की। और इस साख के पीछे वर्षों का उनका सेक्सोफोन फूंकने का रियाज़ है। साख वास्तव में है कि नहीं, कहना कठिन है पर वे स्वयं ऐसा ही मानते हैं, और उनके ऐसा मानने में किसी को ऐतराज भी नहीं। वे नित्य सुबह, घर के साथ लगी नाली पर धरी पटियों पर बैठकर, गली में सेक्सोफोन बजाने का रियाज़ करते हैं। इससे श्वास पर नियंत्रण बनता है। रियाज़ न करें तो बारात में वैसा सुरीला न फूँक पाएँगे कि लोग नाचने पर मजबूर हो जाएँ। ... सेक्सोफोन सुनने की आदत पड़ गई है उनकी गली को। मानो बन्ने मियाँ के बजाने से ही गली में सुबह उतरती है। लोग घड़ी देखे बिना ही जान जाते हैं कि सुबह के सात बज गए हैं। घंटा भर सेक्सोफोन बजाकर जब बन्ने मियाँ उठते हैं तो उनके चेहरे पर किसी बड़े उस्ताद की-सी आभा उतर आती है।

बन्ने मियाँ आज भी नाली की पटियों पर टिके हुए अपना बाजा बजा रहे हैं।

सेक्सोफोन को छाती और भुजाओं के बीच कहीं फँसाकर, गालों को फुला- पिचका कर, आँखें मींचे हुए वे 'यह देश है वीर जवानों का' बजा रहे हैं। धुन निकल तो रही है पर वैसी नहीं निकल रही कि बजाने वाला तृप्त हो जाए। बन्ने मियाँ ने आँखें और भी ज़ोर से मींच लीं। सारा ध्यान सेक्सोफोन पर केंद्रित करके बड़ी लगन से बजाने लगे। हाँ, अब जाकर सही धुन पकड़ी है। वे देर तक सही धुन बजाते रहे। वाह !

तृप्ति और संतोष से हृदय भर आया। मुँदीं आँखें खुल गईं।

आँखें खुलीं तो देखा कि सामने से ठाकुर चौहान साहब और उनके साथ दो-चार अन्य लोग भी इसी तरफ़ चले आ रहे हैं। चौहान साहब के साथ उनके बाहर के गाँव के रिश्तेदार से लगते हैं ये सब।

बन्ने मियाँ बाजे को पटिए पर छोड़कर खड़े हो गए। उन्होंने आगे बढ़कर आदरपूर्वक चौहान साहब का इस्तकबाल किया। चौहान साहब इलाके के दबंग हैं। हर बात का उत्तर तमंचे या जूते से देने का लम्बा अभ्यास है उन्हें। छाती को इतना आगे करके चला करते हैं कि बाकी का शरीर झक मारकर स्वयं की ही छाती का पीछा करता हुआ आता है। उनके चेहरे पर जमी घनी मूँछें सारे ज़माने को धमकाती हुई प्रतीत होती हैं। ये मूछें खामखां का वह नूर भी मुख पर पैदा करती हैं जो दबंगई के चित्र पर आखिरी कूँची का काम करता है। मारपीट, गुंडई और ताकत का वह भाव उनके पूरे व्यक्तित्व में सना और रचा-बसा है जो सामने वाले को निरन्तर चेतावनी देता चलता है कि यह शख़्स कभी भी बिना चेतावनी के मारपीट शुरू कर सकता है, और इसके लिए

उसे किसी जायज़ कारण की आवश्यकता नहीं पड़ेगी।

बन्ने मियाँ द्वारा किए गए इस्तकबाल में प्रणाम, दंडवत और जुहार सब एक साथ शामिल है। चौहान साहब को अच्छा लगा कि कोटरा में उनकी 'न्यूसेंस वैल्यू' हस्बमामूल कायम है।

"कैसे हैं बन्ने मियाँ?" चौहान साहब ने बड़प्पन भरे स्वर में यूँ ही दरयाफ़्त किया।

"करम है अल्लाह का और आपका।"

"तुरही बढ़िया बज रही है?"

"परवरदिगार के करम से अभी श्वासें चल रही हैं तो ठीक से फूँक लेते हैं।"

"बड़ा ही जोरदार बजाते हैं अपने बन्ने मियाँ।" चौहान साहब ने साथ आए रिश्तेदारों को बताया तो बन्ने मियाँ ने उनको भी हाथ जोड़ दिये।

इन शुरुआती औपचारिक चोंचलों के निबट जाने के पश्चात् चौहान साहब असली मुद्दे पर आए।

"बन्ने मियाँ, मोरमोटर लगनी है।"

"लग जाएगी।"

"साथ में बाजा-साजा, ढोल, आतिशबाजी, सब।"

"हो जाएगा। कल रात, कि परसों?"

"रात में नहीं। अभी। आज। दिन में। दस बजे।"

"कर लेंगे मालिक।"

"बस, तो जिला जेल के सामने दस बजे आपकी मोरमोटर लग जाए।"

"कुँवर साहब बाहर निकल रये हैं?"

"वो तो निकलना ही था।" चौहान साहब की आवाज़ में गर्व है।

कुँवर साहब मतलब ठाकुर साहब के छोटे सुपुत्र। तीन साल से जेल में हैं। कुछ ख़ास नहीं, बस, जरा-सा मर्डर कर दिया था उन्होंने। मार के भागे भी नहीं। पुलिस उनको

पकड़ना नहीं चाहती थी परन्तु पकड़ना पड़ा। तब से वे जेल में बन्द हैं। पकड़ लिया तो फिर अदालत-अदालत का खेल भी चला। खूब 'मी-लार्ड', 'मी-लार्ड' हुआ। गवाही में सत्य के प्रयोग चले। बाहर तो निकलना ही था। उनको परसों ही कोर्ट द्वारा बाइज़्ज़त बरी करने का निर्णय हुआ है। आज कोर्ट के आर्डर लेकर वकील इस जेल पहुँचेगा। दस बजे दफ़्तर खुलेगा जेल का। फिर एक-दो घंटे तक लिखा-पढ़ी का खेल चलेगा। और फिर कुँवर साहब बाइज़्ज़त बाहर। इस इज़्ज़त में चार चाँद लगाने के लिए बाहर इस मोरमोटर और आतिशबाजी का इंतज़ाम होना है।

"वो तो खैर पूरा कोटरा जानता था..." बन्ने मियाँ ने कहा।

"...क्या?"

"कि कुँवर साहब बरी हो जाएँगे।"

"वह तो होना ही था। कौन रोक सकता था, बताइए हमें?" कहकर मुस्कुराए चौहान साहब।

हाथ जोड़ दिये बन्ने मियाँ ने।

"बढ़िया धो-पोंछ के, सजा-धजा के मोटर लइयो।" चौहान साहब ने निर्देश दिया।

"चिन्ता न करें। मोटर को खूब बढ़िया चमका के लाएँगे। एकदम चकाचक। ... कुँवर साहब के निकलबे की हमें भी तो उत्ती ही खुशी है न।" बन्ने मियाँ बोले।

"आपको होगी खुशी पर कई छातियों पे तो इतें साँप लोट रये।"

"तो आप कौन-से उनकी परवाह करबे वाले हो?"

"हाथी हमेशा अपनी चाल चलता है बन्ने मियाँ।"

"वोई तो हमने कही।"

"सोचते हैं कि कुँवर साहब का बढ़िया-सा एक जुलूस निकाल दें। जेल से चलें और एक बार पूरे कोटरा में घुमा दें। क्या कहते हो? छाती पे अजगर लोटें तो लोटें, क्यों बन्ने मियाँ?" चौहान साहब हँसकर बोले।

बन्ने मियाँ जान गए। काम महत्त्वपूर्ण होने वाला है। बारात जैसा ही माहौल होगा। यह जुलूस वास्तव में चौहान साहब का शक्ति प्रदर्शन होगा- जानते हैं बन्ने मियाँ।

***

फिलवक़्त, जिला जेल के सामने वाली सड़क पर, थोड़ी दूर हटकर अपनी मोरमोटर लगा रखी है बन्ने मियाँ ने।

अभी तलक तो कुँवरजी जेल से बाहर नहीं निकले हैं। कागजी औपचारिकताओं में समय लग रहा है।

प्रतीक्षारत बन्ने मियाँ मोरमोटर के सिंहासन से टिके बैठे हैं। वे यहाँ दूर से ही जेल के मुख्य दरवाज़े पर एकत्रित भीड़ पर नज़र रखे हुए हैं। वहाँ रिश्तेदारों, बिरादरी के गणमान्यों, लौंडे-लपाड़ियों, चौहान साहब के अनुयायी लफंगों की भारी गहमागहमी दृष्टिगोचर है। भीड़ में मिठाई के डिब्बे घूम रहे हैं। प्रहरियों को दो-दो बार मिठाई खिला दी गई है।

जेल का मुख्य द्वार ख़ासा बड़ा है। इसे भव्य कहना तो खैर कठिन है पर इसे कुछ वैसा मान लें कि जैसे कभी गबरू नौजवान रहा कोई बूढ़ा अभी ठीक से खड़ा न हो पा रहा हो, अपनी पेशाब न रोक पाने के कारण बड़ा बेचैन हो रहा हो परन्तु डगमगाता-सा शादी में आदरणीय बुजुर्ग की भूमिका निभाता हुआ खड़ा हो ! गहरे पीले रंग से पुता है यह पुराना दरवाज़ा। इसके दोनों ओर, दूर तलक जेल की दीवार चली गई है। दीवार के साथ-साथ गोल-गोल घूमती सड़क है जो आगे हनुमान मन्दिर की तरफ़ जाती है। सीकचों वाले हनुमान कहाते हैं ये। बहुत मान्यता है इस मन्दिर की। जेल में बन्द लोगों के रिश्तेदार यहाँ खूब पूजा-अर्चना करते रहते हैं।

मोरमोटर से तनिक हटकर ढोल वाले दो लड़के ज़मीन पर बैठे हुए हैं। वे अभी बन्ने मियाँ का मुँह देख रहे हैं। जब भी बन्ने मियाँ इशारा करेंगे, वे उठेंगे और ढोल बजाने लगेंगे। आतिशबाजी वाले दो बड़े झोले सिंहासन के पास सँभालकर धरे हुए हैं। आतिशबाजी का काम बन्ने मियाँ के साले साहब देखते हैं। वे इन झोलों के पास ही बैठे हैं।

"लगता है, देर लगबे वाली है?" साले साहब ने जम्हाई लेते हुए कहा।

"जेल के फाटक इत्ती आसानी से खुलते हैं क्या?" बन्ने मियाँ बोले।

"छूट ही गए कुँवरजी, जबकि मारा ऐलानिया था?" साले साहब बोले।

"जेई तो गजब बात है। बिलकुल, ऐलानिया मारा था। करिश्मा है ठाकुर साब का। ऐलानिया ही बरी भी करा लिया।" बन्ने मियाँ बोले।

फिर बन्ने मियाँ और उनके साले साहब इस ग़ज़ब की न्याय व्यवस्था को लेकर आत्मीय वार्तालाप करने लगे।

दोनों ही विकट अभिभूत हैं कि देखो, कैसे बढ़िया बरी हो गए कुँवरजी। ... अरे जे कहाती है स्साली असली दबंगई! ठाकुर साहब का एक खेत जरूर बिक गया पर वो कोई बड़ी बात नहीं है, क्योंकि अदालत जाओ तो खेत-खलिहान तो बिक ही जाते हैं। सबके बिकते हैं। अदालत-अदालत खेलना तो है ही बड़ा महँगा खेल। इस खेल में अच्छे-अच्छों की नंगा-झोली हो जाती है। गरीब-गुरबा तो यह शौक पाल ही नहीं सकते। ठाकुर साहब के पास तमाम जमीन है। ... फिर इज्जत बड़ी कि जमीन? बताइए?... अरे, इज्जत की खातिर ही तो कुँवर साहब ने मर्डर किया था। चौहान साब की मोंड़ी ने घर से भाग के जात बाहर शादी रचा ली; ऐसे में एक इज्जतदार ठाकुर बेचारा क्या करता? मूँड़ पे हाथ धर के हिजड़ा टाइप बैठा तो न रहता। है न? बिरादरी में थू-थू करा दी थी लड़की ने। वो तो कुँवर साहब ने नाक बचा ली खानदान की। देसी तमंचे की सारी गोलियाँ उतार दीं बनिए के लौंडे की छाती में। इलाके में नाम चमका दिया ठाकुरों का। भरे बाजार दौड़ाकर गोली मारी। फिर वहीं खड़े होकर ऐलानिया जे भी कहा कि अब जिसे भी चश्मदीद गवाह बनना हो, तय कर ले; अभी हमारे तमंचे में भौत गोलियाँ हैं, घर में भी तमंचे पड़े हैं और जेल जाने को तीन भाई और बैठे हैं। अदालत के पिंजरे में खड़े गवाह को वहीं पहुँचकर न मारा तो हम अपने बाप की असल औलाद नहीं!

बन्ने मियाँ अभिभूत होकर दबंगई का यह किस्सा बयान कर रहे हैं। आतिशबाजी विशेषज्ञ साले साहब तल्लीनता से किस्सा सुन रहे हैं। दोनों की एक आँख जेल के दरवाज़े पर लगी है। वैसे, अभी वहाँ कोई हलचल नहीं दिख रही।

बन्ने मियाँ आगे का किस्सा सुनाते रहे :

...रिवायत भी कोई चीज होती हैं मियाँ। ... ठाकुरों की गौरवशाली रिवायत है। हर जात-बिरादरी की अपनी रिवायतें होती हैं मियाँ। कानून कुछ भी चूतियाटिक बात करे, आदमी को रहना तो बिरादरी में है? है कि नहीं? लोग कानून की सुनें कि बिरादरी की, बताइए?... हम तो कहते हैं कि बिरादरी के बने-बनाए सिस्टम के बीच में कानून पड़ता ही काहे को है? बिरादरी में किरकिरी हो रही हो, लोग हँस रहे हों कि ठाकुर साहब की मोंड़ी ने भाग के कुजात में शादी कर ली, तब? बताइए कि ऐसे में घर के मर्द क्या करें? लड़की को बरगला लिया किसी हरामी ने। जवान लड़की के कदम बहक गए। उसने भागकर शादी कर डाली। अब? लड़की के बाप-भाई क्या करें? चूड़ी पहिनकर घर में बैठे रहें? कानून की आरती उतारें कि कानूनन तो सब कुछ ठीक हुआ है। लड़की बालिग है, दोनों की रजामंदी है वगैरह। ऐसे कानून को चाटें कि माथे पे धरें? खुदई बताओ? यार, लड़की तो नादान थी पर तुमको तो सब पता था। बनिए के लौंडे को क्या हक था कि ठाकुर की लड़की को खराब करे - बताओ? कानून का मतलब जे तो नहीं कि तुम दूसरी बिरादरी की लड़की को खराब करते फिरो? क्या उसकी जात-

बिरादरी स्वीकार करने देगी कि तुम इस घर के दामाद हो गए हो? बताओ? बिरादरी तो जे बात कभी न मानेगी। दबे मूँ हँसेगी लड़की के बाप पर। हमेशा। घरवालों का सिर उठा के चलना भी मुश्किल कर देगी। इसीलिए तो जिस दिन इस लड़की ने भागकर शादी करी थी, चौहान साहब ने उसी दिन खुलेआम कह दिया था कि हम इन लोगों को छोड़बे वाले नहीं हैं। फिर पूरी की पूरी ठाकुर बिरादरी भी चौहान साहब के पीछे खड़ी थी। जिस दिन बनिए के लौंडे को सरे बाजार मारा, बिरादरी में जयजयकार हो गई कुँवर साहब की। तभी तो अभी देखो न वहाँ, इलाके की सारी ठाकुर बिरादरी जेल के बाहर कुँवर साहब के इस्तकबाल को खड़ी है। ...

... बन्ने मियाँ कुँवर साहब की शान में कसीदे काढ़ रहे हैं।

लगभग यही अहो भाव जेल फाटक के पास एकत्रित भीड़ पर भी हावी है। सब तरफ़ 'वाह-वाह' चल रही है। बिरादरी के बुजुर्ग भी अभी ऐसी ही बातें कर रहे हैं। ... कुँवर साहब जैसे नौजवान ही समाज की शान हैं। ... अहो भाव उन अदालती दाँव-पेचों और गवाहों का तोड़ निकालने वाले सिस्टम के प्रति भी है। ... ठाकुर साहब का सारा काम बड़ा जोरदार रहा। पैसे जरूर लगे पर अदालती केस ऐसा कमजोर बनवा डाला कि जज्जी के पास कुँवर साहब को छोड़बे के सिवाय कोई रास्ता ही नहीं बचा। ... बात उन गवाहों की भी हुई जो बिना ठीक से जुतियाए मानने को कभी राजी ही नहीं होते हैं। ... बात उन जजों की भी हुई जो स्साले ऐसे जिद्दी किस्म के ईमानदार होते हैं कि उनके हरामीपने का डर हमेशा लगा रहता है। इन स्सालों से कोई जे नहीं पूछता कि अभी कोई कुजात खुद जज साहब की बिटिया को ऐसे ही अपने घर में डाल ले तो बे क्या करेंगे? बहू, बेटी की मरजादा भी भैंचो कोई चीज होती है कि नहीं-बताइए?... लोग स्थानीय पुलिस की तारीफ़ भी कर रहे थे कि उसका सहयोग न होता तो सब गड़बड़ हो जाती। पुलिस ने केस कमज़ोर बनाने में कोई कसर नहीं छोड़ी और संभावित गवाहों की तोड़ भी बताई। ... कुछ गवाह पैसा लेकर मान गए, कुछ को पैसा और तमंचा दोनों लगा। चश्मदीद बनने के शौकीनों की कनपटी पे जब तमंचा धरा गया तो उन्हें आँखों के सामने मर्डर की जगह तारे दिखने लगे। ... तारीफ़ गोयल वकील की भी खूब हो रही है। सभी सहमत हैं कि अगर आपमें गोयल वकील करने लायक हैसियत हो तो फिर ठाठ से अपने बैरी का मर्डर करें और ऐसेई ठाठ से जेल के बाहर आ जाएँ। ... बात गोयल साहब के चमत्कारों की चल पड़ी। अदालती संसार में ख्यात उनकी दंतकथाओं को दोहराया जाने लगा। कैसे वे अच्छे-भले, विश्वसनीय तथा आत्मविश्वास से लबरेज गवाह की लंगोट में कानून का हाथ डालकर उसे भी हतप्रभ कर देते हैं- यह बात भी चली। बात उनके द्वारा झूठे गवाहों को दी जाने वाली उस सटीक ट्रेनिंग की भी चली जिसे पाकर गवाह सफेद झूठ भी ऐसे अटल सच की तरह बोलता है कि जज साहब तक की फट जाती है। हत्या के केस में तो गोयल साहब ऐसा भ्रमजाल खड़ा करते हैं कि अदालत में अपना केस सुनने आई मृतात्मा तक को सन्देह होने लगता है कि अपनी हत्या कहीं उसने स्वयं ही तो नहीं की थी? सन्देह का जितना लाभ उठाया जा सकता है वे उठाते हैं। वे पुलिस के मालखाने में हत्या का

हथियार बदलवा सकते हैं, पोस्टमार्टम रिपोर्ट मैनेज करा देते हैं, लाठी की चोट को चाकू की और चाकू की चोट को गिरने से लगी चोट बनवा सकते हैं, और कभी कुछ भी न हो पा रहा हो तो वे जज तक पैसे पहुँचाने की नाली भी खोद लेते हैं। सब गदगदायमान हैं कि गोयल वकील ऐसे अंतर्यामी किस्म के हरामी हैं जैसा वकालत के कैरियर में आगे बढ़ने के लिए चाहिए होता है। जज साहब चाहे खुद भी खूब जानते हों कि सामने खड़ा आदमी अपराधी है पर गोयल वकील सन्देह का इत्ता सारा लाभ उनके सामने धर देते हैं कि अपराधी उन्हें वह शापित देवता लगने लगता है जो परिस्थितियों का शिकार होने के कारण सामने कटघरे में खड़ा है वर्ना खड़ा तो उसे मन्दिर के गर्भगृह में होना चाहिए था।

अभी जेल के सामने उत्सव का माहौल है।

मिठाई, बतकही, गले मिलना, वाह-वाह, ही-ही, ठी-ठी, सब चल रहा है।

बन्ने मियाँ भी अब किस्से सुना-सुनाकर थक चुके हैं। अब वे फाटक को दूर से चुपचाप ताक रहे हैं। साले साहब आतिशबाजी के थैले से टिके ऊँघ रहे हैं। दो घंटे निकल चुके हैं। बारह बजने को हैं। धूप तेज़ हो गई है।

कि तभी जेल के फाटक के पास हलचल बढ़ गई।

बन्ने मियाँ ने साले साहब को ज़ोर से टोंचा और स्वयं फटाफट उतरकर ड्राइवर की सीट पर जा बैठे।

उनकी मोरमोटर लगभग प्रागैतिहासिक टाइप की मशीन है। इंजन एक जिद्दी और शरारती बच्चे जैसा है। पहले तो वह चलने को ही राजी नहीं होता है। बन्ने मियाँ कुछ भी कर लें, शुरू में गाड़ी स्टार्ट नहीं होती। इंजन यूँ निष्क्रिय बैठा रहता है मानो इस मोरमोटर से उसका कोई अवैध रिश्ता भी न हो। और बाद में वह अचानक ही ऐसा तेज़ चल पड़ता है कि मोटर काँपने लगती है। फिर वह बिलकुल बागी टाइप हो जाता है; रोके नहीं रुकता। इस मोरमोटर को स्टार्ट करना और फिर उसे सही दिशा में चला ले जाना विज्ञान, कला, शौर्य, साहस, अंधविश्वास टाइप का आत्मविश्वास, चमत्कार में गहन आस्था, गहरी आस्तिकता और ख़तरे उठाने के दुस्साहसी जज़्बे का मिला-जुला चमत्कार होता है। ईर्ष्यालु लोग तो यह भी बताते हैं कि इसमें कार का इंजन नहीं लगा है। यह तो कहीं आटा चक्की बन्द हो जाने के बाद उसकी मोटर फालतू पड़ी हुई थी और एकदम मिट्टी के मोल मिल रही थी; बन्ने मियाँ उठा लाए। लोग बताते हैं कि मोरमोटर के एक्जॉस्ट पाइप से डीजल के साथ आज भी आटा जलने की बू सूँघी जा सकती है।

बन्ने मियाँ स्टियरिंग व्हील पकड़कर बैठ गए हैं।

वे हमेशा की भाँति संशय में हैं कि स्टार्ट होने में गाड़ी कित्ता टेम लेगी? भय है कि मौके पर धोखा तो न दे जाएगी? बन्ने मियाँ ने तय किया है कि मोरमोटर को अब स्टार्ट करके ही रख लिया जाए। उन्होंने साले साहब को इशारा किया। साले साहब तुरन्त गाड़ी के पीछे की तरफ़ गए। न जाने कहाँ से एक हैंडिल उठाकर ले आए। सामने, कार के बोनट में सामने की तरफ एक छेद बना हुआ है। उसी में इसे डालकर, वे दोनों हाथों से ज़ोर-ज़ोर से हैंडिल घुमाने लगे। एक-दो बार घुमाने के बाद तो कहीं जाकर इंजन को पता चल पाया कि साले साहब उससे स्टार्ट होने का इसरार कर रहे हैं। वैसे साले साहब को भी बहुत उम्मीद नहीं थी। उन्होंने बुरा भी नहीं माना। पहले के बाद और हैंडल घुमाया। फिर घुमाते ही रहे। घुमाते चले गए। इतना घुमाया कि ख़ुद का मुँह सूख गया और आँखों के सामने अँधेरा-सा छाने लगा। अन्त में वे हैंडिल के सहारे लटके से खड़े रह गए। बन्ने मियाँ ने उन्हें हतोत्साहित देखा तो ऊँची आवाज में उन्हें उत्साहित करने की कोशिश की। दो बार 'पकड़ रही है' 'पकड़ रही है' कहकर बन्ने मियाँ ने बार-बार चाभी घुमाई और दो-तीन बार 'शाबास' 'शाबाश' कहा। साले साहब पुनः चैतन्य हो गए। वे पुनः हैंडिल घुमाने के महती अभियान में जी-जान से लग गए। ... "बस, एक बार और..." बन्ने मियाँ बोले।

"है तो जे गाड़ी एकदम चकाचक, बस, स्साली जे स्टार्टिंग ट्रबुल ही इसकी बदनामी का बायस है।" बन्ने मियाँ बड़े लाड़ से बोले।

साले साहब का दम भर आया था। उत्तर में वे कुछ नहीं बोले। हाँफते रहे। अभी कुछ बोलते तो मुँह से कोई भारी गाली ही निकलती। बन्ने मियाँ और साले साहब लगभग निराश ही होने लगे थे कि एक तेज़ हिचकोले के साथ मोरमोटर स्टार्ट हो गई। ये हमेशा ऐसे ही स्टार्ट होती है। और हुई तो ऐसे उत्साह से धड़धड़ाकर हुई कि सारा ज़माना पलटकर उसकी तरफ़ देखने लगा।

"देखा?" बन्ने मियाँ के चेहरे पर ख़ुशी और गर्व के मिले-जुले भाव उभर आए।

साले साहब ने हैंडिल निकालकर यथास्थान वापस रखा और हाँफते हुए आतिशबाजी का थैला सँभाल लिया।

"एक बार जे चल भर पड़े, फिर तो ऐसा चलती है मानो पहियन में पंख लग गए हों।" बन्ने मियाँ मोरमोटर को रिवर्स करके फाटक की तरफ ले जाने लगे।

उधर कुँवर साहब जेल से बाहर निकल आए हैं। वे अभी बिरादरी के समस्त बुजुर्गों के चरण छूने के अभियान में व्यस्त हैं। बुजुर्ग उनको आशीर्वाद दे-देकर निहाल हो रहे हैं। मोरमोटर और भी पीछे लाई जा सकती थी परन्तु संतरी ने उसे वहीं रोकने का इशारा कर दिया। मोरमोटर सड़क पर रोककर कुँवर साहब का इंतज़ार कर रहे हैं बन्ने मियाँ।

कुँवर साहब सादर, सप्रेम, जयकारे के साथ, गर्वपूर्वक मोरमोटर तक लाए गए। ढोल

वाले लड़कों के हाथ ने अवसर की नब्ज़ पकड़ रखी थी। वे ढोल बजाते हुए भीड़ की अगुआई करने पहुँच गए हैं और कुँवरजी पर हो रही पाँच-पाँच, दस-दस के नोटों की न्योछावर बटोर रहे हैं।

कुँवर साहब अब मोरमोटर के सिंहासन पर बिराज गए हैं।

एक ज़ोरदार जयकारा उठा। फूल बरसाए गए। आतिशबाजी वाला थैला खुल गया। सुर्री बम, अनार, लड़ी-सब बारी-बारी से चलाए गए। आस-पास के घरों में रहने वाले लोग बाहर निकल आए। तमाशबीन जुटे तो तमाशा और बढ़ा। नौजवान लोग कमर लपलपाते हुए नाचने लगे। एकाध अधेड़ भी 'हें हैं' करते हुए उनके साथ नाच उठे।

दो ठाकुर अपना ख़ुद का घोड़ा लेकर आए हैं। आगे-आगे वे ही चल रहे हैं। घोड़ों की अपनी ही शान होती है साहब। घोड़े हों तो राजसी शोभा का भ्रम पैदा हो जाता है। घोड़ों के ठीक पीछे मोरमोटर लग गई है। बन्ने मियाँ स्टियरिंग पर हैं। कुँवर साहब सिंहासन पर तनकर बैठे हैं। फिर ढोल वाले हैं। फिर नाचते हुए नौजवान हैं। फिर बिरादरी के अन्य लोग पीछे-पीछे चल रहे हैं। और घोड़ों के भी आगे आतिशबाजी दागते बन्ने मियाँ के साले साहब तो हैं ही। और इन सबसे आगे सेक्सोफोन, तूती, तुरही, शहनाई, रमतूला आदि बजाते हुए बन्ने मियाँ की टीम के अन्य सदस्य हैं। जलवा है।

इधर चौहान साहब तेज़ कदमों से चलकर बन्ने मियाँ के पास पहुँचे।

ढोल, बाजे और आतिशबाजी के शोर के बीच उन्होंने बन्ने मियाँ के कान के पास ज़ोर से कहा, "बन्ने मियाँ, जुलूस को अग्रसेन मोहल्ले से होकर निकालना है।"

अग्रसेन मोहल्ला। बनियों की आबादी। इसी में उसका मकान भी है जिसके बेटे को गोली मारी गई थी। इरादा है कि सबसे ज़्यादा उसी जगह पर नाचा जाएगा।

बन्ने मियाँ क्या बोल पाते? परन्तु वे यह बात सुनकर डर से गए। उनकी शक्ल पर तनाव स्पष्ट है।

"फट काहे रही है बन्ने मियाँ?" चौहान साहब ने हँसकर पूछा।

ढोल की आवाज़ में, या सोच में डूबे होने के कारण ठीक से सुन नहीं पाए बन्ने मियाँ।

"जी मालिक?" बन्ने मियाँ ने पूछा।

"हम कह रहे हैं, आतिशबाजी खूब फटे, और बनियों की तो और ज्यादा फटे; बस आपकी न फटने पाए।" चौहान साहब बोले।

बन्ने मियाँ मुस्कुरा दिये।

नसीहत देने का देसी तरीका

कमरे में पंडिज्जी, मुन्ना मास्साब और अपोली बैठे हैं।

स्कूल अभी-अभी छूटा है।

छात्र सब जा चुके हैं। स्टाफ भी एक-एक करके निकल रहा है।

पंडिज्जी ने एक सरसरी निगाह घड़ी पर डाली। फिर वे बड़ी पैनी निगाह से, आधे खिंचे परदे से दिख रहे सुनसान बरामदे को देखते रहे। उन्होंने एक बार और घड़ी देखी और मुन्ना मास्साब को कहा, "अब जरा कुशवाहा को बुलवा लो।"

मुन्ना मास्साब ने बाहर खड़े अपने विश्वस्त अनुचर को कमरे में अन्दर बुलाकर आदेश दिया कि जाकर, जरा स्टाफ रूम से कुशवाहा मास्टर को पकड़ तो लाओ। कहना, पंडिज्जी याद कर रहे हैं, और वहीं बाहर खड़े रहना। उन्हें साथ लेकर ही आना।

समय आ गया था कि कुशवाहा से सीधी बात ही कर ली जाए।

इधर अपोली, कुशवाहा से ज़्यादा पंडिज्जी से नाराज़ हैं। अपोली का मानना है कि पंडिज्जी को भौत पहले ही इसे लतिया देना चाहिए था। बल्कि अब तक तो इसे स्कूल से बाहर ही कर देना था। आप इस हरामी को इत्ते दिनों तक फालतू ही बरदाश्त करते रहे सो नौबत स्साली यहाँ तक आ गई। ऐसे लोग बस जूते की भाषा ही समझते हैं। आप वह न बोलकर इससे रोज पुच-पुच करते रहे तो स्साले में इत्ती हिम्मत आ गई कि जरूर इत्ते ऊपर शिकायत लगा दी इसने।

***

उस दिन परीक्षा कमेटी की मीटिंग ख़त्म होते-होते जो फोन आया था वह शिक्षाधिकारी के पीए का था। उसने पंडिज्जी को कुछ चिन्ताजनक सूचनाएँ दीं। उसने बताया, "कुशवाहा मास्टर ने बहुत से दस्तावेजी सबूतों के साथ स्कूल प्रशासन द्वारा सामूहिक नकल करवाने की शिकायत की है। और अपने बड़े साहब भी पूरी बदमाशी पर आमादा हैं। वे इस शिकायत की आफिशियल जाँच कराने पर तुले हैं। इसकी एक जाँच बिठाने का प्रपोजल लखनऊ भेज रहे हैं वे। उसी के साथ, जाँच पूरी होने तक आपके परीक्षा केंद्र की मान्यता को निलंबित रखने का प्रस्ताव भी तैयार करवा रहे हैं। आपको इस मामले में फटाफट ही कुछ कराना होगा; या तो उस कुशवाहा से शिकायत वापस करवाइए, या फिर साहब पर मंत्री वगैरह से कुछ दबाव डलवाइए। अब तो

लखनऊ से ही कुछ कराना पड़ेगा। ... भौत बदमाश आदमी है यह साहब।... आग मूतने की ठानी है इसने। ... यह ऐसे नहीं मानने वाला।" ... वगैरह, वगैरह। ऐसी ही कई बातें हुईं।

पंडिज्जी अगले दिन ही कालपी जाकर कुशवाहा द्वारा लगाई शिकायत और साहब द्वारा प्रस्तावित कार्यवाही की गोपनीय फाइल देख आए। खर्चा हुआ पर मामले की गंभीरता समझ में आ गई। वैसे, पंडिज्जी कहने को तो साहब से भी मिले। उनको समुचित भेंट पानी भी दिया। उन्होंने आराम से ले भी लिया। पर वे कहते यही रहे कि आपके खिलाफ की गई शिकायतें बड़ी गम्भीर है। हमने इस पर भी यदि औपचारिक जाँच नहीं बिठाई तो बाद में हम खुद फँस सकते हैं। आपका कुशवाहा मास्टर बार-बार हमें रिमाइंडर लिख रहा है। उनकी कापियाँ ऊपर भी भेज रहा है। कहता है कि जाँच में वह और भी सबूत पेश करेगा। ऐसे में यदि हम कोई भी जाँच न करें और वह कहीं जो मीडिया में पहुँच जाए तो आपके साथ हमारी भी फजीहत हो जाएगी।" ... जाँच तो होगी, ऐसी जिद किए बैठा है हरामी अफसर।

"और जो यह कुशवाहा ऐफिडेविट दे-दे कि यह शिकायत हमने की ही नहीं है और सारे कागजात फर्जी हैं, तो?" पंडिज्जी ने साहब से पूछा था।

साहब हँसने लगे। बोले कि जो आदमी रोज यहाँ फोन करके पता कर रहा है कि हमारी शिकायत पर क्या कार्यवाही हुई वह भला इसके लिए क्यों मानेगा?

पंडिज्जी ने साहब से यही इल्तिजा की कि वे उनको बस चार-पाँच दिन का समय दे दें। वे कुशवाहा से ऐसा ऐफिडेविट लिखवाकर जरूर ले आएँगे।

साहब ने कहा कि अगर ऐफिडेविट लेकर आप नहीं बल्कि कुशवाहा अपनी मर्जी से स्वयं यहाँ अकेला आए तो हम उस ऐफिडेविट को जरूर कन्सीडर कर सकते हैं।

पंडिज्जी ने कालपी से लौटकर मामले पर मुन्ना मास्साब से गहन विमर्श किया। तय पाया गया कि कुशवाहा से ऐसा ऐफिडेविट लेकर बड़े साहब पर नैतिक दबाव जरूर डाला जाएगा कि अब तो जाँच का औचित्य ही नहीं रहा न? ... पर जे हरामी ऐफिडेविट के लिए न माना तो? ... मानेगा कैसे नहीं। स्कूल खत्म होने के बाद अकेले में घेरते हैं न स्साले को। उसका तो बाप भी मानेगा।

अपोली ने ज़िद पकड़ ली कि वे भी मौके पर मौजूद रहेंगे। पंडिज्जी इसके लिए कतई राजी नहीं थे। कहने लगे कि तुम भौत जल्दी तैश खा जाते हो जो ऐसी मीटिंग में ठीक नहीं होगा। अपोली ने वायदा किया कि जब तक आप इशारा नहीं करेंगे हम कुशवाहा को एक लप्पड़ भी नहीं मारेंगे। आप ही अकेले-अकेले उसे समझाना। आपसे न माना तभी हम अपनी तरह से उसका इलाज करेंगे। परन्तु, तब आप आप हमें रोकना भी मत। बाबा नाव नट

पंडिज्जी ने कहा "बात तो मैं ही करूँगा और अकेले ही करूँगा। आप मुन्नामास्टर के साथ कमरे के बाहर रह सकते हो। जब मैं कहूँ, तभी अन्दर आना।"

"वैसे वो आपसे काबू आने वाली रकम नहीं है", अपोली ने कहा, "यह आदमी अकेले बातों से तो मानने वाला है ही नहीं।"

पंडिज्जी ने व्यंग्य से पूछा, "तो वो आपकी लात से भी कहीं माना है क्या? एक बार तुम बिना हमें बताए उसे लड़कों से ठुकवा तो चुके हो न? क्या हुआ? बात और बिगड़ ही गई। उसने कुछ भी माना? नहीं माना न? फिर? अब, ठीक से एक बार हम भी उससे बात करके देख लेते हैं। शायद समझ जाए।"

"और जो न समझा तो?" अपोली ने पूछा।

"तब की तब देखेंगे।" पंडिज्जी ने लापरवाही से कहा।

अपोली ने सुझाव दिया कि ऐसे आदमी का बस एक ही इलाज है कि उसे जमीन में गाड़ दिया जाए, बस।

पंडिज्जी नाराज हो गए।

उन्होंने वितृष्णा भरे स्वर में पूछा, "वैसे आज तक आप कितनों को गाड़ चुके हैं?"

अपोली ने हँसकर कहा कि हम कुशवाहाजी से ही यह सिलसिला शुरू करने का इरादा कर रहे हैं।

"दुनिया ऐसे नहीं चलती अपोली।" पंडिज्जी ने कहा।

अपोली असहमत थे। बोले कि दुनिया ऐसे भी चलती है पिताजी, और ज्यादा अच्छी चलती है। अपने आस-पास ठीक से देखते नहीं हैं आप, और घबराते भी भौत हैं; तभी ऐसा कह रहे हैं। हाँ, इसके लिए आदमी के गुर्दे में दम जरूर चाहिए।

"तुम्हारे गुर्दे में दम है?" पंडिज्जी ने हँसकर पूछा।

अपोली ने भी हँसकर कहा कि मौका आने पर हमारे गुर्दे की परीक्षा ले लेना आप।

हीं चलती आ "गुर्दे की परीक्षा में नकल नहीं चलती अपोली।" पंडिज्जी ने चेताया।

"एक यही विद्या तो हमने सीखी है। इसमें हमें किसी नकल की जरूरत नहीं पड़ेगी

पिताजी।" अपोली ने गर्व से कहा।

नतीजा यह रहा कि अपोली भी इस प्रोजेक्ट में शामिल हो गए।

***

कुशवाहा मास्साब को लेकर अनुचर पहुँच गया। कुशवाहा ने पंडिज्जी को नमस्कार किया। पंडिज्जी ने कोई जवाब नहीं दिया। न ही उनसे बैठने को कहा। वे ख़ुद अपनी कुर्सी पर और भी फैलकर पसर गए। उँगली को शुरू से ही टेढ़ी रखने की रणनीति अपना रहे हैं पंडिज्जी।

कुशवाहा जी कमरे में सशंकित खड़े रहे।

पंडिज्जी ने अपोली और मुन्ना मास्साब को कमरे से बाहर जाने का इशारा किया। "आप लोग तनिक बाहर बैठें।" पंडिज्जी बोले।

उठते-उठते अपोली ने सुझाव दिया, "मुन्ना मास्साब को तो अपने साथ में रख लें।"

पंडिज्जी ने कुशवाहाजी की तरफ़ गहन दृष्टि से देखते हुए कहा, "हमें लगता है कि यही ठीक रहेगा कि हम नन्हे मास्साब से पहले अकेले में ही बात करें। शायद, हमसे अकेले में ही ये खुल जाएँ। ठीक कह रहे हैं न हम, क्यों कुशवाहा जी?"

"अगर जे ठीक से न खुलें तो दराज में सामने ही तमंचा रखा है।" अपोली जाते-जाते बोले।

पंडिज्जी नाराज़ हो गए। अपोली के बचपने से परेशान हैं वे।

"यहाँ तमंचा क्यों रखा है?" पंडिज्जी ने क्रोध जताया।

"रखा रहने दें। कभी काम आ सकता है।" अपोली बोले।

"तुम तमंचा लेकर कॉलेज आए क्यों हो?" पंडिज्जी नाराज़ हैं।

"हम तो सपने में भी तमंचा अपने साथ रखते हैं।" अपोली हँसकर बोले।

"उठाओ इसे। अभी के अभी हटाओ यहाँ से।" पंडिज्जी गुस्से में खड़े हो गए।

अपोली ने आगे बढ़कर हँसते हुए दराज खोली और तमंचा उठा लिया। कुशवाहा जी की तरफ एक बार तमंचा घुमाते हुए उन्होंने इसे जेब में रख लिया।

कुशवाहा जी का मुँह सूखने लगा। वे ख़ुद ही एक कुर्सी पकड़कर माथे पर हाथ रखकर बैठ गए।

पंडिज्जी अपोली को घूरते रहे। 'प्रथम ग्रासे मक्षिका' तो कर ही दिया इस नालायक ने।

मुन्ना मास्साब हाथ पकड़कर अपोली को बाहर ले गए। जाते-जाते बोल गए कि जरूरत लगे, तो आवाज जरूर दे दीजिएगा; हम बाहर ही खड़े हैं।

शाम उतर रही है। स्कूल लगभग खाली हो चुका है। समूचे परिसर में अभी निपट सन्नाटा पसरा हुआ है। पंडिज्जी जानते हैं कि ऐसी स्थिति में इस तरह के सन्नाटे का क्या प्रभाव तथा लाभ होता है। कुशवाहाजी के अवचेतन पर अभी इस सन्नाटे से यह ज़रूरी सूचना दर्ज होगी कि वे अन्ततः इस दुनिया में एकदम अकेले हैं; फालतू ही निपट सन्नाटे में अकेले खड़े होकर हवा में तलवार घुमा रहे हैं, जिससे कुछ भी हासिल नहीं होने वाला। युद्ध इस तरह नहीं लड़े जाते। जीते तो जाते ही नहीं।

अब कमरे में बस पंडिज्जी रह गए, और कुशवाहा मास्साब।

पंडिज्जी अपनी कुर्सी से उठे। उठकर उन्होंने कमरे का दरवाज़ा अन्दर से उढ़का दिया। कुशवाहाजी भी खूब जान रहे हैं कि बात क्या होने वाली है? वे भी अब धीरे-धीरे प्रकृतिस्थ हो रहे हैं। कुशवाहाजी मुठभेड़ के लिए तैयार हो रहे हैं। अब वे किंचित तन कर बैठ गए हैं।

पंडिज्जी फालतू की औपचारिकताओं में नहीं पड़े। वे सीधे ही मुद्दे पर पर आ गए। शंखनाद या बिगुल बजाकर लड़ाई की औपचारिक घोषणा के हामी नहीं हैं पंडिज्जी। दुश्मन पर सीधे चढ़ बैठना भी युद्धकला है, ऐसा मानते हैं वे।

"यह सब क्या चल रहा है नन्हे मास्टर?" पंडिज्जी ने पूछा।

"जी, कुछ तो नहीं।" कुशवाहा ने सतर्क होकर कहा।

"किस दुनिया में रहते हो तुम? हमसे इतना तो उड़ो मत।"

कुशवाहा मास्साब चुप रहे।

"यदि स्कूल से तुमको कोई शिकायत है तो पहले हमारे पास आओगे कि सीधे शिक्षाधिकारी की गोदी में चढ़ के रोना शुरू कर दोगे?"

कुशवाहाजी ने भोले बनने का प्रयास किया, "कैसी शिकायत?"

"हमें चूतिया समझ रखा है क्या? इत्ता बड़ा कॉलेज हम ऐसेई नहीं चला रहे हैं श्रीमान्। साहब ने कालपी बुलाकर खुद हमें आपकी शिकायत वाली फाइल दिखाई है। वे पूछ रहे थे कि आखिर ऐसे आदमी को आप बरदाश्त कैसे कर रहे हैं?

कहने लगे कि ऐसे सबआर्डिनेट के साथ कैसी रियायत या हमदर्दी? लात मारकर उसे बाहर क्यों नहीं करते?" पंडिज्जी ने सफेद झूठ बोला था जो अभी कुशवाहा को डराने के लिए आवश्यक था। सही बात यह थी कि उन्हें फाइल साहब के पीए ने साहब से छुपकर दिखाई थी, और साहब ने तो कुशवाहा की हिम्मत की तारीफ़ ही की थी।

कुशवाहाजी सकते में आ गए। शिक्षाधिकारी से उन्हें ऐसी आशा नहीं थी। बातें तो साहब बड़ी-बड़ी करते हैं!

"अब तुम एक फाइल और तैयार कर लो। फटाफट। और कल तक ही।" पंडिज्जी ने कहा।

"जी?"

"बल्कि दो फाइलें।"

"जी?"

"एक तो जे तुम्हारे सामने बनी ही धरी है। इसमें बस तुम्हारा जवाब लगेगा। वो तुम बना लेना। इसमें मीना मास्टरनी की शिकायत दर्ज है कि आप स्टाफरूम में उन्हें जबर्दस्ती अभद्र तथा अश्लील चुटकुले सुनाते हैं, यहाँ-वहाँ रोककर अश्लील इशारे करते हैं।"

"मैं?"

" जी आप , और इसी फ़ाईल में मुन्ना मस्साब की गवाही भी लगी है। आप कहें तो हम पूरा मामला सीधे पुलिस में दे दें, या कॉलेज लेवल पर पहले एक जाँच बिठा दें?"

"यह गलत शिकायत है।"

"हमें भी पता है कि गलत है। पर है तो। और लिखित में है। ब्लैक एंड व्हाइट में है। लोग आजकल झूठी शिकायतें ही तो करते हैं। झूठी शिकायतें करने का ट्रेन्ड चल पड़ा है जमाने में, क्या कर सकते हो? यही बात उस दिन शिक्षाधिकारी महोदय भी कह रहे थे कि आपके स्कूल की झूठी शिकायत करने वालों को तो आप बिलकुल शह न दें।"

"मैं कॉलेज की हर फीमेल स्टाफ को अपनी बहन मानता हूँ।"

"हमारे यहाँ लोगों को 'भैंचो' भी तो कहा जाता है न? तुमने सुनी है न जे गाली? कहो तो अभी हम तुमको देकर बताएँ?"

"आप किसी से भी पूछ लें।"

"हम किसी से क्यों पूछें? शिकायत मीना मास्टरनी की है। उनसे ही पूछेंगे।"

"यह तो ठीक नहीं। एकदम गलत शिकायत है।"

"हम भी जानते हैं न कि यह गलत है। हमें पता है कि तुम लोला हो। ऐसे काम करना तुम्हारे बस की बात ही नहीं है। पर शिकायत हुई है तो हमें जाँच तो करनी ही होगी। तो बोलो, हम इसकी जाँच बिठा दें?... बताओ?" पंडिज्जी ने अर्थपूर्ण नज़रों से देखते हुए पूछा।

"यह आप ठीक नहीं कर रहे।"

"लौंडिया आप छेड़ो, और ठीक हम नहीं कर रहे? वाह!" पंडिज्जी हँसे।

"मैं सब समझ रहा हूँ। मेरे खिलाफ जानबूझकर झूठी शिकायतें करवाई जा रही हैं।" कुशवाहा मास्साब भुनभुनाने लगे।

"हमने भी शिक्षाधिकारी महोदय से ठीक यही बात कही। ...कोई हरामी हमारे स्कूल के खिलाफ झूठी शिकायत कर रहा है। वे हमारी बात मान भी गए। अब तुम अपनी बताओ; तुम कब मानोगे? ... कि तुमने न मानने का कौल उठा रखा है?"

"कैसा कौल? हम समझ नहीं पा रहे?"

"हम समझाते हैं न। वैसे, तुम किसके कहने पर जे सब कर रहे हो?" पंडिज्जी बोले।

"गलत सोच रहे है आप।" कुशवाहा ने सीधे नकार को ही सुरक्षित माना।

"चलो, हम चूतिया हैं। गलत बात पूछ ली हमने तुमसे।"

"वो बात नहीं कह रहे हैं हम।"

वोई कह रहे हो और वोई समझ भी रहे हो। पर हम हैं नहीं। हमें ऐसा चूतिया समझ के बड़ी भूल कर दी है तुमने।"

"वो बात नहीं..."

"... हम क्या हैं वह भी बताते हैं हम तुम्हें। अभी।"

"जी?"

"अब तुम एक काम हमारा भी कर दो।"

"कौन-सा काम?"

"तुम एक और फाइल बनाओ। बनाओगे?"

"कैसी फाइल?"

"तुम अपनी एक शिकायत की फाइल और बनाओ। उसमें लिखो कि आज कॉलेज बन्द होने के बाद पंडिज्जी ने तुम्हें अकेले में बुलवाकर लात-घूंसों से पिटवाया, और अच्छी बात यह है कि शिकायत गलत भी नहीं होगी।" और अच्छी

"आप मुझे धमकी दे रहे हैं?"

"नहीं, हम धमकी क्यों देंगे? हम तो तुम्हें सीधे पिटवाएँगे ही। पीटने के बाद तुम्हें कागज-कलम भी देंगे। आराम से बैठकर अपनी शिकायत लिखना।" कहकर पंडिज्जी अपनी जगह से खड़े हो गए।

उन्होंने उठकर दरवाज़ा भी खोल दिया। मुन्ना मास्टर, अपोली और विश्वस्त अनुचर कमरे के दरवाज़े पर ही प्रतीक्षारत थे। सब अन्दर आ गए। पंडिज्जी पलटकर कुशवाहाजी के पास तक आए।

कुशवाहा कुशवाहा मास्साब सकते में बैठे थे।

पंडिज्जी कुर्सी के हत्थों के सहारे उनकी तरफ झुक गए, बोले, "मास्साब, अपनी औकात को समझो। ... हम चाहें तो दो मिनट में तुम्हारी गांड़ पे लात मार के इस कॉलेज से अभी बाहर कर दें। फिर जीवन भर केस लड़ते रहना कि परमानेंट स्टाफ को हमने ऐसे, कैसे निकाल दिया?... और लौंडिया से छेड़छाड़ की फाइल हमने थाने पहुँचा दी तो दरोगा तुम्हारे औजार में ऐसा करंट मारेगा कि तुम हमारे पाँव छूते फिरोगे कि हमें बचा लो।"

कुशवाहाजी कसमसा कर उठने लगे।

पंडिज्जी ने ज़ोर से एक धक्का देकर उन्हें वापस कुर्सी पर धकेल दिया। इसी बीच

उनकी कुर्सी के पीछे अपोली और मुन्ना मास्साब आकर खड़े हो गए हैं। विश्वस्त भृत्य दरवाज़े पर खड़ा ही है।

"अपनी शिकायत वापस ले लो नन्हे मास्टर। मुन्ना मास्साब ने तुम्हारे नाम का ऐफिडेविट बनवा रखा है। चुपचाप उस पर अपने दस्तखत कर दो। उसे खुद कालपी जाकर शिक्षाधिकारी को देकर आओ। बाकी हम देख लेंगे। ऐसा कर दो, फिर तुमको कुछ नहीं होगा। साहब भी कुछ नहीं कहेंगे तुम्हें, और यह मीना मास्टरनी की फाइल हम फाड़ देंगे। हम उसे समझा लेंगे।" कहकर पंडिज्जी ने कुशवाहा जी की कुर्सी से अपने हाथ हटा लिए।

कुशवाहाजी तुरन्त अपनी कुर्सी से उठ गए। उनके तेवर अभी भी नरम नहीं पड़े थे।

"आप यह ठीक नहीं कर रहे पंडिज्जी।" कुशवाहाजी उठते-उठते बोले।

पंडिज्जी ने कुशवाहाजी को ज़ोर से पीछे को धकेला। वे कुर्सी पर गिरते-गिरते बचे। पंडिज्जी का ऐसा हिंसक रूप वे पहली बार देख रहे थे।

"मैं आपकी शिकायत करूँगा।" कहकर कुशवाहा मास्साब जाने को उद्धृत हुए।

"शिकायत का भूत उतरा नहीं है अभी तक? क्यों?" अपोली बाँहें चढ़ाते कुशवाहा की तरफ बढ़े। जाते हुए कुशवाहाजी की कमर पर जोर से एक लात मारी अपोली ने।

"काट के रख देंगे भैंचो !" लात खाकर धड़ाम गिरे मास्साब से अपोली ने कहा।

"हम अभी आपको इसी लात के पड़ने की चेतावनी दे रहे थे न? कल तक का समय देते हैं। खुद आओ। हमसे ऐफिडेविट लो। दस्तखत करो। कालपी ले जाकर खुद देकर आओ।" पंडिज्जी दरवाजे के पास चारों कोने चित्त पड़े कुशवाहा जी से बोले।

कुशवाहाजी तेज़ी से उठे और लगभग भागते हुए बाहर निकल गए। बरामदे में तो वे ऐसे तेज़ भागे मानो गोल्डमेडल के लिए दौड़ रहे हों।

"हरामी स्साला!" पंडिज्जी बुदबुदाए।

मर्डर में इज़्ज़त की तलाश

कुँवर साहब की स्वागत यात्रा अग्रसेन मोहल्ले में देर तक रुकी रही। वहाँ खूब नाच-गाना मचा।

चौहान साहब के निर्देश भी थे कि सारी बड़ी आतिशबाजी यहाँ के लिए बचा के रखी जाए। बम पटाखे भी खूब बजे। उस घर के सामने पहुँचकर देर तक ढोल बजाए गए जिनका बेटा मारा गया था। गुप्ताजी का घर। बगल में छोटे भाई का परिवार। कुल बारह लोग। सब लोग घर के अन्दर ही बने रहे। वे न तो अपनी छत पर आए, न बाहर, न खिड़की पर। सुबह से उन्हें इस स्वागत-यात्रा का पता चल गया था। ख़ुद ठाकुर साहब ने ही उनको कहलवा भेजा था। परिवार सुबह से बेहद तनाव में था। दोनों भाई सुरक्षा के लिए थाने भी गए थे। शिकायत लिखकर ले गए थे कि मुजरिम के जुलूस में मौजूद अपराधी तत्त्वों द्वारा हमले का अंदेशा है सो इस जुलूस को रोका जाए।

जुलूस तो खैर क्या रुकता ! उलटे, दरोगाजी ने गुप्ताजी को ही ज़ोर से फटकार दिया।

दरोगाजी ने साफ़ कहा, "आप इस तरह किसी को मुजरिम नहीं कह सकते। आपका यह रवैया बड़ा गलत है। जिसे माननीय अदालत ने बाइज्जत बरी किया हो, अपने आवेदन में आप उसी को मुजरिम लिख रहे हैं, यह गलत बात है। इससे सामाजिक तनाव बढ़ता है और आपसी सौहार्द्र पर आँच आती है। ऐसी गलतबयानी न करें। ... दूसरी गलत बात, आपकी यह माँग है कि पुलिस ठाकुर साहब के मौलिक अधिकारों के हनन का काम करे। ... जायज खुशी मनाना, नाचना गाना - यह तो एक नागरिक का मौलिक अधिकार है। आप स्वागत जुलूस को अपराध बता रहे हैं? उनका बेटा तीन

साल से जेल में था। आज रिहा हो रहा है तो क्या वे खुशी न मनाएँ? खुशी मनाना कौन-सा अपराध है? हाँ, वे लोग आपको जबरिया अपने साथ नचवाने लगें तब जरूर पुलिस बीच में पड़ेगी। तब तक इसमें हमारा क्या काम? आप हमारे पास आए ही क्यों हैं? ... तीसरी गलत बात, अपने आवेदन में आपने ये लिखा है कि जुलूस के हिंसक हो जाने का भय है। जे तो ऐसा है कि भैया, नदी का बहना बन्द करा दो क्योंकि कभी बाढ़ आ जाने का भय है! भय का कहीं कोई इलाज है क्या? पुलिस कैसे आपका भय कम करे, बताइए? ... वैसे, हम एक बात आपको बता दें। ठाकुर साहब कुछ भी ऐसा नहीं करेंगे। आप ठाठ से घर में अन्दर बने रहें। आप लोगों को कुछ न होगा। वे अभी कोई नया कांड करने की पोजीशन में नहीं हैं। बेटे के केस में पहले ही भौत लुटा चुके हैं। अब हिम्मत नहीं करेंगे। बस, ऐंठ है। ऐंठ दिखा के निकल जाएँगे। हाँ, तमाशा जरूर करेंगे, और तमाशे पर कोई कानूनी रोक नहीं है गुप्ताजी। वैसे, भारतीय पुलिस

सदैव आपके साथ है। रहेगी। जाइए। हाँ, ये कागज यहीं छोड़ जाइए!"

जुलूस बाद में वहाँ से लगभग शान्तिपूर्वक निकल भी गया।

अग्रसेन मोहल्ले से निकलने के बाद जुलूस बिखर गया।

बन्ने मियाँ ज़रूर ठाकुर साहब से 'हजूर, हजूर' करते रहे कि उनको इत्ती कम रकम भी न दी जाए कि आतिशबाजी खरीदने का खर्च और ढोल वालों का मेहनताना भी पूरा न पड़े। चौहान साहब ने प्रत्युत्तर में यही कहा कि हमारा सारा पैसा तो वकीलों, पुलिस और जेल में लुट चुका है। जो बचा था उससे हमने जे अंग्रेजी पिस्तौल खरीद डाली है। तगड़ी पिस्तौल है। "चलाओ कहीं, निशाना वहीं लगता है जहाँ लगना चाहिए", कहकर उन्होंने बन्ने मियाँ को वह पिस्तौल भी दिखाई। साथ में कहा कि तुम्हें जित्ता दे रहे हैं उसी में गम्म खा लो, यही ठीक रहेगा। बन्ने मियाँ ने अंग्रेजी पिस्तौल को गौर से देखा, सारी बात को संदर्भ सहित समझा और ठाकुर साहब को सलाम करके अपना तामझाम बढ़ा गए।

सब ठीक से निबट गया।

कोटरा में अलबत्ता खूब बातें चलीं। ठाकुर समाज की दबंगई, जाति गौरव के लिए मर मिटने के उनके जज़्बे तथा उज्ज्वल परम्पराओं की किसी भी कीमत पर रक्षा करने की उनकी प्रतिज्ञा पर भी डटकर बातें हुईं। चर्चा कानून, जज्जी, सक्षम वकील, गवाह, जेल, जमानत, हथकड़ी तथा पुलिस की भी हुई। पर सबसे मुख्य चर्चा बनियों की भीरु प्रवृत्ति की हुई। सभी ने एक स्वर से बनियों की कायरता की भूरि-भूरि भर्त्सना की। अरे, तुम्हारा बैरी तुम्हारे ही दरवाजे पर तुम्हारी सार्वजनिक चिकन करके चलता बना और तुम हिजड़ों जैसे घर में छुपे बैठे रहे; जे तो निपट गांडूगर्दी है यार। अरे, तुम अगर खिड़की में बैठकर भी निशाना साधते तो खराब देसी तमंचे से भी बैरी को टपका सकते थे। इससे अच्छा तो जे रहता कि तुम वही अपनी खोल के, अच्छे से तेल लगा के औंधे मूँ लेट जाते कि आइए ठाकुर साहब, जैसी भी है, आपकी सेवा में प्रस्तुत है!... अरे धिक्कार है ऐसे जीने पर जहाँ बैरी घर आकर तुमारे मूँ पे थूक दे और जिंदा वापस चला जाए!

कई दिनों तक पूरा कोटरा बनियों के इस व्यवहार से दुखी रहा।

दुनिया को यह क्या हो चला है? कैसा डरपोक समय आ पहुँचा है यह? आदमी को अपनी इज्जत से कहीं ज्यादा अपनी जान की फिक्र होने लगे, इससे बुरा समय और क्या हो सकता है? बुंदेलखंड की उज्ज्वल परम्पराओं का ऐसा छीजना देखकर छाती कूटने को मन करता था कोटरा का। 'जाके बैरी चैन से सोवें उसके जीवन को धिक्कार', आल्हाऊदल कोई मूरख नहीं थे जो ऐसा सोचते थे। अगर वे आज जिंदा होते तो अपना आल्हा वहीं बनियों के मोहल्ले में जलाकर आते।

***

कुँवरजी की स्वागत-यात्रा पंडिज्जी के घर के पास से भी निकली।

पंडिज्जी जुलूस को नहीं देख सके क्योंकि ठीक तभी वे कॉलेज में कुशवाहाजी के इलाज का इंतज़ाम कर रहे थे। बाद में लोगों ने बढ़-चढ़कर जुलूस के बारे में उनको बताया ज़रूर। अपोली भी जुलूस देखने से चूक गए पर उन्हें कुशवाहा को लतियाने का आत्मिक संतोष था।

पंडिज्जी रात में भोजन के लिए बैठे तो घर में इस जुलूस की बात निकल आई। पंडिताइन ने खाना परोसते हुए यूँ ही कह दिया, "जुलूस देखा आपने? चौहान साब का मोंड़ा जेल से छूट गया।"

"वो तो छूटना ही था।" पंडिज्जी बोले।

"पूरी बारात ही निकाल दी उन्होंने तो। सारे कोटरा में भौत बड़ा जुलूस निकाला। खुशी से ऐसे नाच रहे थे मानो संतान कोई भौत बड़ा काम करके चली आ रही हो। ... जे तो हद्द है।" पंडिताइन ने कहा।

"काहे की? मोंड़ा ने काम तो बड़ा ही हद्द किया है।" अपोली रोटी का कौर बनाते हुए बोले।

"मर्डर कोई ऐसा महान काम है क्या? या तुम मर्डर करके भी अदालत से बरी हो जाने को बड़ा काम बता रहे हो भैया?" लक्ष्मी भी वहीं थी। उसने व्यंग्यपूर्वक पूछा।

"दोनों ही काम बड़े हैं।" अपोली बोले। अपोली को पता है कि बिन्नू इससे सहमत नहीं होगी। वे आगे की बहस के लिए तैयार होने लगे।

"मर्डर करना बड़ा काम होता है?" लक्ष्मी ने पूछा।

उत्तर पंडिज्जी ने दिया। बोले, "जे कोई ऐसा-वैसा मर्डर नहीं था बिन्नू। बिरादरी और खानदान की इज्जत के लिए किया गया मर्डर था जे।"

"कैसे?" लक्ष्मी ने पूछा।

"घर की लड़की कुजात में शादी कर ले और माँ-बाप उनका मर्डर न कराएँ तो क्या करें?"

"लड़की ने अपनी पसंद से शादी ही तो की थी न? यह कौन-सा अपराध हो गया?" लक्ष्मी ने कहा।

पंडिताइन जान गईं कि बहस गलत दिशा में जा रही है। बाद में इसे सँभालना कठिन हो जाएगा। पंडिताइन ने बात बदलने की कोशिश की।

"दाल में नमक ज्यादा पड़ गया है क्या?" उन्होंने पंडिज्जी से पूछा।

पंडिज्जी ने उनकी बात का कोई जवाब न देते हुए बिन्नू के प्रश्न का उत्तर देना उचित समझा :

"अपराध तो था। यह एक बड़ा अपराध था बिन्नू। लड़की ने बिरादरी बाहर शादी कर ली थी।"

"तो? इत्ती-सी बात पर मर्डर?"

"क्या जे इत्ती-सी बात है?... अभी तो बस मोंड़ा-मोंड़ी को ही मारा है। हमारे जमाने में तो पूरा खानदान ही काट डालते थे।"

"वो जमाना कब का जा चुका है पिताजी।" लक्ष्मी बोली।

"कोटरा से तो अभी नहीं गया है। यहाँ तो अभी भी वोई जमाना चल रहा है बिन्नू।" पंडिज्जी ने कहा।

"और वोई आगे भी चलता रहेगा।" अपोली ने कहा।

बिन्नू मौन रह गई। चुपचाप बैठी खाना खाती रही। कौन इनसे बहस करे? पर अपोली चुप नहीं रहे। वे बात को आगे बढ़ाना चाहते थे। उनकी रुचि का विषय निकल आया था न।

"हम तो कल कुँवर साहब के घर जाकर उनको आमने-सामने बधाई देंगे। लड़के ने नाम रोशन कर दिया है चौहान खानदान का।" अपोली बोले।

"वाह भैया! कम से कम इसे नाम रोशन करना तो मत कहो।" बिन्नू बोलीं।

"तो क्या पढ़ने में अच्छा हो जाने से ही नाम रोशन होता है?" अपोली हँसकर बोले।

"उससे तो खैर होता ही है पर..." बिन्नू ने कहा।

"...पर क्या?" अपोली ने बीच में टोका।

"पर..." बिन्नू ने जवाब पूरा करने की कोशिश की।

"अब तुम चुप ही रहो बिन्नू ।" पंडिताइन ने बीच में टोककर सलाह दी।

"और ये? ये कुछ भी बोलते चले जाएँगे?" बिन्नू ने बिफरकर कहा।

"तुम लड़की हो बिन्नू। चुप रह जाओगी तो आसमान न टूट जाएगा।" पंडिज्जी बोले।

"लड़कियों को मुँड़ पे चढ़ाओ तो जेई होता है।" अपोली बड़बड़ाए।

"जेई क्या होता है? क्या होता है जेई?" बिन्नू ने तमतमाकर पूछा।

"जो अभी यहाँ हो रहा है।"

"वही तो हम पूछ रहे हैं। यहाँ ऐसा क्या हो रहा है?"

"ऐसी ही बातें करने वाली लड़कियाँ तो खानदान की इज्जत..." अपोली ने कुछ कहना चाहा।

बिन्नू तमतमा उठी। खाना छोड़कर खड़ी हो गई।

"और तुम तो इस खानदान की इज्जत को भौत चमका रहे हो ..."

"... बिन्नू, तुम अब चुप रह जाओ।" पंडिज्जी ने कहा।

"इनको तो कोई चुप नहीं कराता। कोई तो हमें बताए कि ये खानदान की इज्जत बढ़ाने का कौन-सा काम कर रहे हैं? इनके कारनामे तो कोई भाभी से पूछे। या कोटरा में किसी से भी।"

"तू अब चुप रह जा वरना..." पंडिज्जी चिल्लाए।

"... वरना क्या? अपोली भैया मेरा मर्डर कर देंगे? यही न?"

बिन्नू उठी और पाँव पटकती हुई वहाँ से निकल गई।

"देखा आपने?" अपोली ने माँ की तरफ देखकर कहा। अपोली भी खाना अधूरा छोड़कर उठ गए।

कहा। "कलयुग है भैंचो..." पंडिज्जी ने दोनों को जाते देखकर

वे अपना खाना खाते रहे।

"नमक एकदम ठीक है।" उन्होंने पंडिताइन से कहा।

घी-दूध की नदियाँ और गोबर के पहाड़

गजानन बाबू ने अब सीधे दिल्ली जाने की ठानी है।

पूरे कोटरा में खबर गर्म है कि टंटा बब्बा राष्ट्रपति बनने के लिए दिल्ली जाने की सोच रहे हैं।

वैसे यह बात सब लोग आपस में हँस-हँसकर ही बताते हैं। दूसरा आदमी भी इसे हँसकर ही सुन भी लेता है। ... यार, भगवान किसी को ऐसा पगला भी न बनाए वर्ना बताइए, कि इत्ता बड़ा आदमी; एकदम महात्मा आदमी, महापुरुष टाइप व्यक्ति, पर पगला गया तो पगला गया। ऐसे में महापुरुष भी बेचारा क्या करे? दिमाग पे स्साला किसका बस है? एक बार आदमी का दिमाग फेल हो जाए तो न तो फिर उसकी महात्मागिरी काम आती है, न ही महापुरुषाई ! गजानन बाबू बेचारे क्या करें? और हम भी यार क्या करें? मन तो हमारा भी करता है कि ऐसे महात्मा आदमी पर न हँसा जाए पर आदमी पागल हो जाए तो उस पर तो हँसा ही जाएगा न; हँसें न तो क्या करें? गजानन बाबू की बातें दिनों-दिन ऐसी झकलट होती जा रही हैं कि उन पर कोई भी आदमी हँसेगा ही। कोटरा वाले उनकी इज़्ज़त तो अभी भी खूब करते हैं पर उन पर हँसने से बाज भी नहीं आते।

गजानन बाबू के पास, आजकल बस, एक ही विषय है बात करने का। जहाँ भी खड़े हों, सबको बताने लगते हैं कि हम वास्तव में बहुत बड़े चूतिया निकले।

"क्यों? आप ऐसा क्यों सोचते हैं?" कोई न कोई पूछ ही लेता है।

"हैं चूतिया; वही आपको बता रहे हैं।" वे कहते हैं।

"क्यों हैं?"

"क्योंकि हम इत्ते सालों से जे सोच के कोटरा में पड़े रहे कि जब हमने देश आजाद करा लिया है तो आगे सब

आटोमेटिकली बढ़िया होता चला जाएगा।"

"तो?"

"गलत किया हमने। हमें तभी दिल्ली चले जाना था। वहाँ पहुँचकर स्सालों की खुपड़िया पर बैठ जाना चइए था। कान खेंचने थे इनके कि देश को आजाद तो हमने करा दिया, अब तुम इसे ठीक से चलाओ तो ! पर हम इतें कोटरा में बैठे रहे और दिल्ली हरामियों के कब्जे में आ गई। जेई भौत बड़ी चूतियाई हो गई हमसे। हमने बिना ठीक से सोचे-समझे ही इन बदमाशों के हाथ पकड़ा दिया यह देश। भौत चूतिया रहे हम।

"तभी हम अगर दिल्ली अपने हाथ में ले लेते तो अब तक देश में रामराज आ गया होता। जवाहरलाल के सिर पर हमारा डंडा रहता तो उनके बाप भी ठीक से काम करते! पर क्या बताएँ! उधर गांधीजी मर गए, इधर हम कोटरा में अपनी मइयो कराते बैठे रहे-जवाहरलाल को हमने एकदम छुट्टा रोंआसे हो जाते हैं।

जेई गड़बड़ हो गई स्साली।" कहते-कहते छोड़ दिया।

"फिर?"

"फिर क्या?... अब हम दिल्ली जाएँगे। देर आयद, दुरुस्त आयद। राष्ट्रपति पद के लिए चुनाव होने वाला है। हम खड़े होंगे। चुनाव लड़ेंगे। अब और कोई रास्ता नहीं बचा है। एक बार हम राष्ट्रपति बन जाएँ तो सरकार का कान पकड़कर अपनी रामराज्य लाने की योजना लागू कराएँगे। देखिए तो कि अब हम क्या करते हैं। बस, आप सब लोग हमारे लिए जोर लगाओ। पब्लिक अपना जोर लगा के हमें राष्ट्रपति बनवा दे, बस। रामराज का प्लान हमारे पास वर्षों से बना पड़ा है। हमने जेई प्लान नेहरूजी को भी भेजा था। उन सरऊ ने तो हमें जवाब तक नहीं दिया! फिर हम इसे हर गवर्मेन्ट को

भेजते रहे। पर सब हरामी निकले। पावती तक नहीं भेजी किसी ने। सब लोग इसे दबा के बैठे रहे। अब समझ गए हैं हम। दिल्ली में किसी का भी इंटरेस्ट नहीं है कि देश में रामराज्य आए। इसीलिए अब हम खुद राष्ट्रपति बनकर लागू कराएँगे जे प्लान।"

क्या वास्तव में उनके पास रामराज्य लाने की कोई योजना है?

है तो। जैसी भी हो, पर है तो।

कहते वे यही हैं कि उन्होंने पूरा एक प्लान चाक आउट कर रखा है। पागलपन में वैसे भी योजनाएँ तो शानदार ही बनती हैं। पागलपन ही तो चाहिए असम्भव सपने देखने के लिए। पागल व्यक्ति ही मानता है कि उसके इस असम्भव सपने में असम्भव कुछ भी नहीं। वह असम्भव सपनों को पूरा करने का विश्वास रखता है। गजानन बाबू ने भी ऐसा ही कोई असम्भव प्लान बना रखा है। पूरा प्लान उन्होंने एक मोटी-सी नोटबुक में लिख रखा है। फिर उसी के कुछ बिंदुओं को संक्षेप में लिखकर अभी तीन पेजी पैम्फलेट भी कालपी से छपवा लिया है उन्होंने। राष्ट्रपति चुनाव में काम आएगा। यही पैम्फलेट वे संसद के समक्ष खड़े होकर सबको बाँटेंगे। सांसदों को भी देंगे। जन-जन को देंगे। रामराज्य किसको नहीं चाहिए? सबको चाहिए। जनता अगर संसद पर दबाव बनाएगी तो गजानन बाबू राष्ट्रपति बन ही जाएँगे। संसद को झकमार कर बनाना पड़ेगा। पब्लिक एक बार पीछे लग गई तो कैसे न बनाएँगे? और जो बन गए तो पाँच साल में तो देश में रामराज्य चालू भी करा दिया जाएगा। देखना तुम सब, ये कोटरा वाले ही एक दिन हमारी जयजयकार करते फिरेंगे।

***

जयजयकार तो होगी ही। लोग उनकी बातें सुनकर अभी भी जयकारे लगा ही देते हैं।

"जयहिंद महात्माजी!"

"जयहिंद। जयहिंद।"

आजकल कोटरा में महात्मा गांधी के अलावा गजानन बाबू की भी जय बोली जाती है, और क्यों न बोली जाए? आखिर राष्ट्रपति बनने जा रहे हैं!

"महात्मा गांधी की? जय।"

"कोटरा के महात्मा की? जय।"

"टंटा बब्बा की? जय।"

"गजानन बाबू की? जय।"

"... जय हो।"

"... जय हो।"

आजकल भीड़ उनकी बातें सुनकर नारे लगाने लगती है। कुछ मज़े के लिए, कुछ हृदय से। भीड़ में फिर दस तरह के नारे चल पड़ते हैं। पग्गल महात्मा यह सब सुनते हुए मुस्कुराते खड़े रहते हैं। पूरे कोटरा में ख़बर है कि टंटा बब्बा एकाध दिन में ही दिल्ली की तरफ निकलबे वाले हैं। वहाँ जाकर संसद के सामने बैठेंगे। दिल्ली की खैर नहीं। अब वहाँ कोई गजानन बाबू से निबटकर तो दिखाए? उनसे निबटना कोई ऐसा आसान काम नहीं है। यह तो कोटरावालों का जज़्बा था कि टंटा बब्बा के रहते हुए भी उन्होंने कोटरा को सुधरने नहीं दिया। बब्बा को एक बार दिल्ली तो पहुँचने दें। दिल्ली तो दो

दिन में ही उनसे घबरा जाएगी।

बड़ा मज़ा आएगा।

सब मानते हैं कि मज़ा मज़ा आएगा।

***

पंडिज्जी भी मान रहे हैं कि पग्गल महात्मा यदि दिल्ली पहुँचे तो कुछ दिन तो मजा आएगा ही।

गजानन बाबू की अच्छी-भली कथा में ये पंडिज्जी कहाँ से आ गए?

हुआ यूँ कि राष्ट्रपति चुनाव के लिए फार्म पर सांसदों के हस्ताक्षर लगते हैं। किसी ने गजानन बाबू को बता दिया कि यह काम पंडिज्जी करा सकते हैं। कहा कि पंडिज्जी की पहुँच लखनऊ और दिल्ली तक है। यही कहकर कोई उन्हें पंडिज्जी के पास ले आया है। दरअसल कोटरा इस बूढ़े का पूरा मज़ा लेना चाहता है।

इस तरह, अभी गजानन बाबू पंडिज्जी के पास उनके कॉलेज में बैठे हुए हैं। पंडिज्जी के कमरे में गांधीजी की तस्वीर लगी हुई थी। पंडिज्जी तो इस तस्वीर को भूल ही चुके थे। वो तो बस यूँ ही लगा ली थी क्योंकि लगाई जाती है। परन्तु गजानन बाबू गांधीजी की तस्वीर देखकर बड़े प्रसन्न हैं। प्रसन्न गजानन बाबू के साथ अभी पंडिज्जी, प्रिंसिपल साहब और मुन्ना मास्साब भी बैठे हुए हैं। टेबल पर गजानन बाबू का गांधी झोला रखा हुआ है।

पंडिज्जी गजानन बाबू का दिया हुआ पैम्फलेट उलट-पलटकर सरसरी निगाहों से पढ़ रहे हैं।

पंडिज्जीने जल्दी-जल्दी पूरा पैम्फलेट पढ़ डाला। पढ़कर मंद-मंद मुस्कुराने लगे। पढ़कर उन्होंने पैम्फलेट प्रिंसिपल की तरफ बढ़ा दिया। कहा, "तुम भी पढ़ो।" वे भी पढ़ते रहे। पढ़कर वे भी मुस्कुराने लगे। गजानन बाबू तो पहले से ही मुस्कुरा रहे हैं।

"पढ़ा?" गजानन बाबू ने मुस्कुराकर पूछा।

"जी।" पंडिज्जी ने उत्तर दिया।

वे गजानन बाबू को बड़े गौर से देख रहे हैं। पंडिज्जी सालों से जानते हैं कि यह आदमी कुछ सरका हुआ है। इसका औरों से भी खूब सुना है। खुद भी कभी-कभी इसे यहाँ-वहाँ लोगों से घिरा हुआ देखा है। ... पर यह पैम्फलेट? यह तो इसके पागलपन की पराकाष्ठा है। कोई इसका ये पैम्फलेट पढ़कर तो देखे। यार, यह तो हद हो गई! यह आदमी कतई नार्मल नहीं है। पूरा ही पागल है। हद है यार! यह पैम्फलेट पढ़कर किसी के भी मन में पहला विचार यही आएगा कि इसे लिखने वाले को बिजली के झटकों की अर्जेंट आवश्यकता है। तभी तो कमरे में गांधीजी की तस्वीर देखकर कैसा देर तक भाव-विभोर होकर हाथ जोड़े खड़ा रहा। यह ज़रूर पूरा पागल है। ... वैसे भी, इस देश में जो शख़्स आज भी गांधीजी को भुला न पाया हो, उसके पागल होने का और क्या प्रमाण चाहिए?

"वाह साहब। क्या खूब प्लान बनाया है आपने ! वाह!" पंडिज्जी ने पैम्फलेट की तरफ़ इशारा करके कहा।

"है न प्रिंसिपल साहब?" पंडिज्जी ने प्रिंसिपल साहब से भी पूछा।

"जी सर, बिलकुल।" प्रिंसिपल साहब भी सहमत थे।

"आपके दिमाग में ऐसी-ऐसी नायाब बातें आती कहाँ से हैं?" पंडिज्जी ने पूछा।

गजानन बाबू ने इसके उत्तर में गांधीजी की तस्वीर की तरफ हाथ जोड़कर प्रणाम किया। 'वाह' कहकर पंडिज्जी ने भी गांधीजी को प्रणाम कर दिया। इत्ते साल से उनके कमरे में लटके हैं, प्रणाम करने का अवसर आज जाकर बना है।

"गजब प्लान है आपका। पढ़ा हमने। कुछ समझे भी हैं, कुछ नहीं भी समझे।"

"क्या नहीं समझे?"

"जैसे कि इसमें आपने ये क्या लिखा है कि यदि आप राष्ट्रपति बने तो सबसे पहले प्रधानमंत्री की तीन पोस्टें बनाएँगे?" पंडिज्जी ने पूछा।

"बिलकुल। फिर देश में तीन प्रधानमंत्री होंगे।" गजानन बाबू उत्साह से भर उठे।

वे आगे विस्तार से इसकी फिलॉसफी बताने लगे :

"देश को तीन प्रधानमंत्री ही चाहिए। हम समझाते हैं आपको। अच्छा, आप ही बताइए, देश चलाने का सारा दारोमदार किसके कंधे पर रहता है? बताइए न? प्रधानमंत्री के कंधे पर ही न? चौबीसों घंटे काम में लगा रहता है बेचारा। चौबीसों घंटे। दिन-रात । इत्ता बड़ा देश है। रोज की सौ समस्याएँ, और उनसे निबटने को बस एक आदमी। वह कब तक ऐसे लगातार काम करेगा? थक जाता है प्रधानमंत्री। मीटिंग्स में ऊँघने लगता है। स्साली, रोज की झिकझिक। न कोई सीएल, न ईएल। इतवार तक की छुट्टी नहीं। ऐसे थके हुए आदमी से आप क्या उम्मीद करते हैं? बताइए वह कैसा काम करेगा? खराब ही करेगा न? फिर आप गाली देते रहो कि पीएम ने जे गलत किया, वो गलत किया, इसकी नहीं सुनी, उसको नहीं देखा। भैया, आपई बताओ कि वो अकेला क्या-क्या देखे? बेचारे को चकरघिन्नी बना रखा है पूरे देश ने। ...इसीलिए हम प्रधानमंत्री के तीन पद रखेंगे। हर एक की, बस, आठ-आठ घंटे की ड्यूटी। सबकी नाइट शिफ्ट भी

होगी और बदल-बदल के हुआ करेगी। और बीच में हर प्रधानमंत्री को एक दिन का ऑफ।"

"वाह!... और छह पोस्ट उप-प्रधानमंत्री की?" पंडिज्जी ने पैम्फलेट पढ़ते हुए पूछा।

"क्या करें? काम भौत है। हर प्रधानमंत्री के नीचे दो उप-प्रधानमंत्री लगेंगे न? पूरा एक प्रॉपर सिस्टम बनेगा।"

"खूब सोची है आपने!" प्रिंसिपल ने कहा।

गजानन बाबू मुस्कुराने लगे।

"गांधीजी से डायरेक्ट कनेक्शन रहता है महात्माजी का।"

पंडिज्जी ने गजानन बाबू की तरफ देखते हुए प्रिंसिपल साहब को बताया।

"अच्छा?"

"जी।"

गजानन बाबू और मुस्कुराए।

"प्लेनचेट पे उनकी आत्मा को बुलाकर देश की हालत पे डिस्कशन चलता होगा आपका तो? क्यों महात्माजी?" पंडिज्जी ने बड़ी गंभीरता से पूछा।

"आत्मा से आत्मा की डायरेक्ट बातें होती होंगी?" मुन्ना मास्साब भी बोले।

"कोई पवित्रात्मा वाला आदमी प्लेनचेट चलाए, तभी गांधीजी की आत्मा प्लेनचेट पर आती है।" पंडिज्जी बोले।

"वर्ना गांधीजी को वहाँ भी कहाँ फुर्सत मिलती होगी? वहाँ भी काम में लगे होंगे बेचारे। गांधीजी की आत्मा वहाँ भी फ्री थोड़ेई होगी। है न महात्माजी?"

गजानन बाबू बेचारे समझ ही नहीं पा रहे हैं कि उनके साथ यहाँ विशुद्ध मज़ाक चल रहा है उनके साथ।

"गांधीजी तो हमारी आत्मा में बसे हैं।" बस इतना ही बोल सके वे।

"आत्मा में गांधीजी बैठे हों तभी तो जे घी-दूध की नदियाँ बहाबे की योजना सोच सकता है आदमी।" पंडिज्जी ने पैम्फलेट में आगे का कोई प्वाइंट पढ़ते हुए कहा।

"आप लिखते हैं कि सरकार हर घर को एक गाय और

एक भैंस मुफ्त में देगी?" प्रिंसिपल ने आगे पढ़ते हुए पूछा।

"हाँ, सबको देंगे न।"

"पर मान लो कि कोई लेने से मना कर दे तो?" मुन्ना मास्साब ने पूछा।

"देखिए, गाय या भैंस, कोई एक तो लेनी ही पड़ेगी। यह तो हर आदमी को कम्पलसरी रहेगा। पुलिस खुद दे के जाएगी। सबको लेनी पड़ेगी। सब लेंगे तभी तो घी-दूध की नदियाँ बहेंगी।" गजानन बाबू बोले।

गजानन बाबू घी-दूध की नदियों का अपना प्रोजेक्ट समझाने लगे :

"...सब लोग गाय-भैंस पालेंगे। पूरा देश पालेगा। हर घर में गाय होगी। हर गली में रोज-रोज सरकारी टेंपो आया करेगा। भूसा, खली, घास - सब कुछ फ्री में घर-घर देकर जाएगा। लोगों का काम बस जे रहेगा कि गाय को यह सब खिलाएँ और सुबह-शाम उसका दूध निकालें। हर घर से इत्ता घी-दूध निकलेगा कि देश को समझ ही न आएगा कि इस दूध का किया क्या जाए? कित्ता पिएँ, कित्ते का घी बनाएँ?"

"और गोबर? हर घर से जो इत्ता गोबर निकलेगा, उसका क्या होगा?" पंडिज्जी ने संभावित समस्या की तरफ इशारा किया।

"उसका भी सोचा है हमने।" गजानन बाबू बताने लगे।

"इससे देश कि लिए गोबर गैस बनाई जाएगी। हर गली में एक बड़ा गोबर गैस संयंत्र लगेगा। हर मोहल्ले में गोबर गैस के पाइप बिछेंगे। गोबर को तसले में उठा के गली में बने गोबर गैस प्लांट में डालने की जिम्मेवारी नागरिक की रहेगी।"

"वाह, महात्माजी।" पंडिजी ने कहा।

"देखिएगा। पाँच साल में ही देश भर में दूध उफनता फिरेगा। घी तो इत्ता होगा कि कित्ता तो रोटी में चुपड़ें, कित्ता दाल भात में डालें- समझ में न आएगा। आटोमेटिकली देश में घी-दूध की नदियाँ बहने लगेंगी।" गजानन बाबू ने कहा।

"अगर अब भी संसद ने आपको राष्ट्रपति नहीं बनाया तो यह देश का दुर्भाग्य ही कहाएगा।" मुन्ना मास्साब ने कहा।

"हम फार्म भरने दिल्ली तो जरूर जाएँगे।"

"जरूर जाइए। ...वहीं, राष्ट्रपति भवन में फार्म मिलेगा। सौ रुपए का बैंक ड्राफ्ट लगेगा शायद। क्यों मास्साब?" पंडिज्जी ने मुन्ना मास्साब से पूछा।

"हमें ठीक से तो पता नहीं पर इत्ते का ही लगता होगा। सरकारी फार्म के आजकल ऐसे ही पैसे लगते हैं।" मुन्ना मास्साब बोले।

"उस फार्म पर हमें सांसदों की सिफारिश चाहिए होगी।"

गजानन बाबू ने उस काम की बात उठाई जिसके लिए वे यहाँ आए थे।

"आपका जे काम हो जाएगा।" पंडिज्जी ने आश्वस्त किया।

"आप तो सांसदों को जानते होंगे?" गजानन बाबू ने पूछा।

"सबको जानते हैं। हैं। हम लेटर दे देंगे न आपको।" पंडिज्जी बोले।

"पंडिज्जी पत्र दे देंगे तो उनके बाप को भी आपके फार्म पर दस्तखत करने पड़ेंगे।" मुन्ना मास्साब बोले।

"बाप के दस्तखत नहीं चलेंगे। उन्हीं लोगों को करने पड़ेंगे।" गजानन बाबू बोले।

"हाँ-हाँ, वे ही करेंगे। वैसे भी उनके इत्ते बाप होते हैं कि उनको समझ ही न आएगा कि कौन-से बाप से कराए जाएँ?" मुन्ना मास्साब बोले।

"बस, फिर तो हमारा काम हो गया।" गजानन बाबू प्रसन्न हो गए।

"यह आपका नहीं, राष्ट्र का काम है। घी-दूध की नदियाँ बहेंगी तो राष्ट्र स्वस्थ होगा। प्राइम मिनिस्टर के पद बढ़ जाएँगे तो सांसदों के चाँस भी तो बढ़ेंगे। देखिएगा, इसी एक पाइंट के कारण सब लोग दस्तखत तो करेंगे ही, वोट भी आपको ही देंगे। आप तो उनको अपना जे पैम्फलेट पकड़ा देना, बस।"

मुन्ना मास्साब ने कहा।

पंडिज्जी मुस्कुराते रहे।

गजानन बाबू उठने का उपक्रम करने लगे। उन्होंने टेबल पर रखा अपना गांधी झोला उठाया। खड़े हुए। कंधे से झोला लटकाने लगे तो एक मोटी-सी डायरी निकलकर नीचे गिर गई। गजाननजी ने फटाफट डायरी उठाई, उसे माथे से लगाया और वापस थैले में रखने लगे।

"भजन की डायरी है?"

"नहीं-नहीं।"

"फिर?"

"प्लान का सब डिटेल तो इसी डायरी में दर्ज है भाई। रामराज कैसे लाएँगे; इसका सब विस्तार से इसी में लिखा है। पैम्फलेट में तो हमने इसकी बस एक-दो चीजें ही डाली हैं। असली चीजें तो इस डायरी में दर्ज हैं। राष्ट्रपति बनने पर यही डायरी हम सरकार को दे देंगे। कहेंगे कि इसे पढ़ो। इसके अनुसार सब काम करो।" गजानन बोले।

"आप तो इसे संविधान के बगल में ही धरवा दीजिएगा।" पंडिज्जी बोले।

"पर अभी तो इसे बहुत ही सँभाल के धरिए। पाकिस्तान के जासूस देश भर में घूमते रहते हैं। कोटरा का तो पता नहीं पर दिल्ली में तो बहुतेरे जासूस होंगे। किसी के हाथ अगर यह डायरी लग गई तो ये स्साले उधर अपने पाकिस्तान में चोरी-चोरी रामराज ले आएँगे; इधर हम टापते रह जाएँगे।" मुन्ना मास्साब ने चेताया तो गजानन बाबू ने थैले को और भी ज़ोर से पकड़ लिया।

"वैसे पाकिस्तान इस्लामिक राष्ट्र है मुन्ना मास्साब। वे लोग कभी रामराज्य न लाएँगे। शरीयत के खिलाफ बात हो जाएगी जे तो।" पंडिज्जी बोले।

"पर उनका जासूस इस डायरी को चुरा तो सकता है न पंडिज्जी?"

"जे तो है। पाकिस्तान कभी न चाहेगा कि हमारे यहाँ रामराज्य आ जाए।" पंडिज्जी बोले।

"सो अपनी जे डायरी सँभालिएगा। आप तो ऐसा मान लें कि भारत के भाग्य की कस्टडी है आपके झोले में।" मुन्ना
मास्साब बोले।

"गांधीजी मुझे पुकार रहे हैं भाईसाहब। रोज सपने में आते हैं। पूछते हैं, तूने मेरे सपनों के भारत के लिए क्या किया? मरबे के बाद भी ऊपर गांधीजी हमसे जेई सब हिसाब पूछेंगे। सपने में भी वे जेई कहते हैं कि तू इधर आया तो मेरी बात का जवाब लेकर ही आना। ... गांधीजी को जवाब देना है पंडिज्जी मुझे। हम सबको ही जवाब देना पड़ेगा। भारत का जो भी नागरिक मर के ऊपर पहुँचेगा गांधीजी उससे ही यह पूछेंगे कि मेरे सपने के भारत के लिए तूने जीवन भर क्या किया? बताइए, क्या जवाब देंगे हम लोग? पूरा मुल्क गांधीजी का गुनहगार कहाएगा पंडिज्जी। सच्ची।"

बोलते-बोलते वे इतना भावुक हो गए कि खड़े-खड़े ही काँपने लगे। उनका मुँह तमतमा उठा। मुँह से थूक उचटने लगा।

पंडिज्जी ने उनको इस हाल में देखा इस हाल में तो घबरा गए। उत्तेजित हो रहा है- स्साले को हार्टअटैक ही न हो जाए ! उन्होंने मुन्ना मास्साब को इशारा किया। वे फटाफट पानी का ग्लास लेकर खड़े हो गए।

"पानी पी लें महात्माजी।"

गजानन बाबू ने एक ही घूँट में पूरा गिलास पी लिया।

प्रकृतिस्थ होकर वे आगे बोले, "गांधीजी का आर्तनाद मुझसे सुना नहीं जाता पंडिज्जी।

बेहद कष्ट में हैं वे। रोज कहते हैं कि देश का ये क्या हाल कर डाला है तुम लोगों ने स्सालों। ... आजकल तो वे हर रात को आकर हमें जगा देते हैं। एक ही बात पूछते हैं कि तू खुद राष्ट्रपति क्यों नहीं बनता? कब तक यहाँ कोटरा में पड़ा रहेगा तू? ऐसा पूछते हैं।"

हुए। "नहीं-नहीं आप तो जरूर बनिए।" पंडिज्जी उठ खड़े

"राष्ट्र मुझे पुकार रहा है। दिल्ली तो जाना ही होगा।" कहकर गजानन बाबू भी चलने को तत्पर हुए।

"आप राष्ट्र की पुकार सुनें। आप चलिए।" पंडिज्जी उठकर उन्हें बाहर ले जाने लगे।

"आज शाम की ट्रेन से ही हमें दिल्ली निकलना है।" गजानन बाबू बोले।

"झोला जरूर अच्छे से सँभालिएगा। दिल्ली के हर रास्ते पर बटमार रहते हैं।" मुन्ना मास्टर ने फिर चेताया।

"आप पहुँचें। हम किसी से स्टेशन पर ही आपकी वह चिट्ठी पहुँचवाते हैं। दिल्ली फोन भी करे देते हैं।" पंडिज्जी ने कहा।

जाते-जाते जनार्दन बाबू पलटे। उन्होंने महात्मा गांधी की तस्वीर को फिर प्रणाम किया।

"महात्मा गांधी की जय।" तस्वीर को प्रणाम करते हुए उन्होंने ज़ोर से नारा लगाया।

"महात्मा गांधी की जय।" बोलना ही पड़ा पंडिज्जी को।

"जयहिंद।" गजानन बाबू जोर से बोले।

"जयहिंद।" ठंडी आवाज़ में पंडिज्जी और मुन्ना मास्साब ने कहा।

कमरे में बुलंद आवाज में फिर से जयहिंद बोलकर गजानन बाबू कमरे से बाहर निकल गए।

मेज़ पर धरा गजानन बाबू का पैम्फलेट पंखे की हवा में फड़फड़ा रहा था। अचानक ही पैम्फलेट मेज़ से खिसका और हवा में तैरता हुआ नीचे जा गिरा। फिर वह कचरे की तरह फर्श पर यहाँ-वहाँ उड़ता रहा। जाते हुए गजानन बाबू को देखते रहे सब लोग। चुपचाप ।

फिर पंडिज्जी बोले, "देखा मुन्ना मास्साब?"

"जी। देखा।"

"इस देश में ईमानदारी और सच के पीछे ज्यादा ही लगे रहो तो आदमी का जेई हाल होता है।"

"ईमानदार की मौत है।"

"... वह जीता भी रहे तो भी दुनिया के किसी काम का नहीं रहता।"

"यही तो उसकी मौत है।"

"उसे पागल मानती है सारी दुनिया।"

"पागल आदमी को भी मरे जैसा ही मानिए।"

"दिल्ली जा रहे हैं महाराज।"

"दिल्ली में मरेंगे।"

"कुशवाहा मास्टर भी इनकी ही लाइन में जा रहे हैं।"

"वे तो यहीं कोटरा में मरेंगे।"

"पर उनका इंतजाम जल्दी करना होगा।"

"ईमानदारी कुत्ते के घाव टाइप चीज होती है। कहीं भी घाव चाटता हुआ मिल जाता है न कुत्ता? बस, वैसा ही। ईमानदार आदमी भी हर जगह ईमानदारी झाड़ता मिल जाता है। असल में उसे अपनी ईमानदारी का घाव चाटने में मजा आने लगता है।"

"कुशवाहाजी आजकल वही कर रहे हैं।"

"पर आजकल बड़ी मक्खियाँ भिनकने लगी हैं उनके घाव पे। हेडक्वार्टर की मक्खियाँ भी यहाँ आने लगें, उससे पहले ही उनके घाव का आपरेशन हो जाना चाहिए।"

पग्गल बब्बा की पंडिज्जी से इस मुलाकात का एक परिणाम यह हुआ कि कुशवाहाजी चर्चा के केंद्र में आ गए। तय किया गया कि कुशवाहा का इलाज आज ही कर दिया जाए। ऐसे केस को बिना इलाज के कुछ दिन भी छोड़ दो तो केस के बिगड़ने का डर रहता है।

रिश्वत की नश्वरता पर एक धार्मिक प्रवचन

कुशवाहा मास्टर से स्कूल में मारपीट हुई, ऐसा समाचार छपा है। कुशवाहा जी स्कूल का भ्रष्टाचार सामने लाने में व्हिसिल ब्लोअर का काम कर रहे हैं जो स्कूल प्रशासन को बरदाश्त नहीं, ऐसा भी कुछ छपा है।

समाचार पढ़कर पंडिज्जी आगबबूला हो गए। ये स्साला बिस्मिल का बच्चा! वैसे तो हमारा कैसा सगा बना फिरता है! पर सच यह है कि जे स्साले पत्रकार किसी के भी सगे नहीं होते।

पंडिज्जी ने तुरन्त फोन लगाया।

बिस्मिलजी तब एक ऐसे शख़्स के सामने बैठकर लीपापोती की बातें कर रहे थे जिसने बिस्मिलजी के जरिए तहसीलदार को रिश्वत पहुँचवाई थी परन्तु अब अचानक पता चला है कि साहब का तो ट्रान्सफर हो गया है। काम हुआ नहीं है और अफ़सर चला जा रहा है। अब काम का क्या होगा? क्या दी गई रिश्वत डूब जाएगी? रिश्वत लेन-देन के सिद्धांतशास्त्र में ऐसी स्थिति के लिए क्या प्रावधान हैं? क्या अफ़सर रिश्वत वापस करके नई पोस्टिंग पर जाता है? वह खुद वापस न करे तो क्या उससे अपनी रिश्वत वापस माँगी जा सकती है? क्या इस सिलसिले में उस पर बिस्मिलजी कुछ दबाव डालेंगे?... ऐसे कई तरह के प्रश्न उस शख़्स के मन में हैं जो सुबह-सुबह बिस्मिलजी के घर पहुँच गया है।

बिस्मिलजी जी पाजामा-बनियान यान पहने हुए बैठे हैं। सामने ही वह शख़्स बैठा हुआ है।

गया। उसने पहला प्रश्न ही किया था कि पंडिज्जी का फोन आ

"सुना है कि तहसीलदार साहब जा रहे हैं?" उसका प्रश्न था।

"इस बात का उत्तर लम्बा है। पहले हम पंडिज्जी का फोन सुन लें?"

बिस्मिलजी ने फोन उठाकर कहा, "जी मालिक..."

"यार, मालिक की माँ की..." पंडिज्जी गुस्से में हैं।

"क्या हुआ पंडिज्जी? सुबह-सुबह इत्ते परेशान?"

"जे सब क्या है?" पंडिज्जी की आवाज़ बेहद गुस्से से भरी है।

"क्या, क्या है?" बिस्मिलजी ने अनजान बनने की चेष्टा की।

"यार, इत्ते भोले तो न बनो बिस्मिलजी। भोलापन तुम पर जँचता नहीं है।"

"अरे, हुआ क्या मालिक?"

"जे तुम्हारे 'कालपी की आवाज' में आज क्या अंटशंट छपा है?"

"अरे, लोकल अखबार है भाई साब। कभी कुछ छापबे की मजबूरी पड़ई जाए पर उसे सबकी नजरों में न आने देना हो, ऐसी चीज को ही इसमें छापा जाता है।"

"ऐसी कौन-सी मजबूरी पड़ गई थी तुम्हारी?"

"नेताजी को साथ ले के हमारे घर आए थे कुशवाहाजी। फूट-फूटकर रो रहे थे। पूरा किस्सा घर से लिख के लाए थे। नेताजी भी भौत जोर लगाते रहे। वो तो हमारे पीछे लगे थे कि इसे लखनऊ वाले अखबार में ही छपवाया जाए। हमने कहा भी कि नेताजी, ऐसी हिम्मत तो कोटरा में कोई न कर पाएगा। पंडिज्जी आपसे बड़े नेता हैं। आल इंडिया वाले हैं। पर वे हमारे पीछे लग गए।"

"तुम कबसे इस पंखीलाल कहार से दबने लगे हो?"

"दबने की बात नहीं है पंडिज्जी। हम पत्रकार हैं। सबकी सुननी तो पड़ती है।"

"तो तुमने उनकी ऐसी तगड़ी सुनी, क्यों?"

"अरे, हमने तो मामला ठंडा करबे के लाने इसे लोकल 'कालपी की आवाज' में डाल दिया।" बिस्मिलजी लीपापोती करने लगे।

"अच्छा? जे होता है मामला ठंडा करना? फिर मामला गरम करना क्या होता है भैया? और तुमने तो स्साला फ्रंट पेज पे छाप दिया? वो भी सटीक मोटा टाइप में। तीन कालम की न्यूज बनाने की कौन-सी मजबूरी रही आपकी, क्यों?"

"अरे, उसने ऊपर ही छाप दिया? फ्रंट पेज पे? जे स्साले उप संपादक लौंडे ..."

"...बिस्मिलजी, हमने अभी तुम्हें चेताया था न? ... हमारे सामने ऐसे भोले न बनो।"

"करना पड़ता है पंडिज्जी। पत्रकार का काम ही ऐसा बेमुरव्वत का है कि..."

"क्या करना पड़ता है? और तुम क्या-क्या करते हो, यह हमसे न खुलवाओ।"

"अरे, आप तो बड़े गुस्सा हो गए भाईसाहब?"

"तो क्या हम नाचें?"

"नहीं, वो बात हम नहीं कह रये।"

"अब कोई बात करना भी मत। बस, सबसे पहले कल ही इसका खंडन छपवाओ। वो भी फ्रंट पेज पर ही छपे।"

"छप जाएगा। चिन्ता न करें। आप अपना खंडन भिजवा दें। हम छाप देंगे।"

"हम घंट कुछ न भेजेंगे। तुम ही लिखोगे।"

"चलिए, हम ही लिख लेंगे।"

पंडिज्जी ने फोन बन्द कर दिया।

बिस्मिलजी राष्ट्रीय अखबार के संवाददाता हैं, पर पीत पत्रकारिता का असली खेल और उसके जरिये असली माल इस लोकल अखबार से ही काटते हैं। चार पेज का चीथड़ा है 'कालपी की आवाज'। मुश्किल से दो सौ कापियाँ ही रोज़ छापते हैं। दफ़्तरों, अफ़सरों और स्थानीय संस्थाओं के समाचार। कहा जाता है, सुना जाता है, विश्वस्त सूत्रों से ज्ञात हुआ है टाइप के समाचार। प्रायः तो छापना भी नहीं पड़ता। समाचार छापने की धमकी ही काम कर जाती है। घर बैठे ब्लेकमेलिंग का कुटीर उद्योग है उनका यह डेली 'कालपी की आवाज।'

फोन बन्द करके कुछ देर तक तो चुप ही बैठे रहे बिस्मिलजी। एक पल को ख़ुद के मन ने ख़ुद से यह पूछा भी कि कुशवाहाजी वाला समाचार छपवाना उनकी सही रणनीति रही कि नहीं? उनसे कहीं कुछ गलत तो नहीं हो गया? परन्तु उसी पल उन्होंने अपने मन को फटकार भी दिया। कहा कि वैसे तू है तो मेरा ही मन परन्तु कस्बे के पत्रकार की इस बारीक राजनीति को तू भी कभी समझ नहीं सकता। यह तो एक विशुद्ध धंधा है मित्र। यदि मेरा ही मन इस बात को नहीं समझ पा रहा है तो यह बस, मेरे मन का

पिछड़ापन है। ... मन बहुत पीछे रह गया है, जबकि बिस्मिलजी बहुत आगे निकल आए हैं। पत्रकारिता भी बहुत पीछे छूट गई है उनसे। अब तो याद भी नहीं आती उनको उस तरह की विशुद्ध पत्रकारिता की। उसके तो हल्के निशान भी कहीं उनके व्यक्तित्व पर

बकाया नहीं। अब पत्रकारिता का हासिल बस ऐसे ही फोन कॉल हैं जो शक्ति सन्तुलन में अपना हिस्सा हथियाने में बिस्मिलजी के काम आते हैं, या फिर सामने बैठा, बिस्मिलजी और प्रशासन के बीच बने चोर-रास्तों का टोल टैक्स देने वाला यह शख़्स। बिस्मिलजी उन लोगों में शामिल हो गए हैं जिन्होंने प्रजातंत्र से तंत्र निकालकर अपनी कस्टडी में ले लिया है।

और कई लोग स्साले अभी भी इतने भोले हैं कि इत्ती-सी बात को भी नहीं समझ पा रहे। तभी तो यह शख़्स ऐसे प्रश्न पूछता हुआ यहाँ बैठा है। घबराए हुए शख़्स ने, पंडिज्जी का फोन बन्द होने पर अपना पहला वाला प्रश्न पुनः दोहराया, "सुना है कि तहसीलदार साहब का तबादला हो गया है?"

बिस्मिलजी कुछ देर तक तो मौन रहे। ऐसे प्रश्न का एकदम से उत्तर दे देना नीति संगत नहीं कहाता है।

"अभी तो सुना भर है। ट्रांसफर रुक भी सकता है।"

बिस्मिलजी ने रुक-रुक कर कहा। "कैसे रुकेगा?"

"जैसे ट्रांसफर रुका करते हैं, वैसे, और कैसे? कभी किसी का ट्रांसफर रुकते हुए नहीं सुना क्या?"

"सुना तो है। पर..."

"...पर क्या?"

"इनका रुकने वाला नहीं।"

"ऐसा आपसे कौन कह रहा है भैया?"

"लोग कहते हैं।"

"और तुमने मान लिया?"

"तो हम क्या करते?"

"फिर तुम तहसीलदार साहब कि गहराई को नहीं जानते हो।"

"गहराई का मतलब?"

"तहसीलदार साहब पातालफोड़ आदमी हैं। उनकी असली गहराई का किसी को भी सही अंदाज नहीं। ट्रान्सफर करने वाले को भी अंदाजा नहीं रहा होगा। उसने कर तो दिया है, अब उससे भी जे ट्रांसफर खुद ही सँभालते नहीं बनेगा।"

"पर लोग कहते हैं मंत्रीजी के आर्डर पर हुआ है?"

"तो मंत्रीजी को भी अंदाजा न होगा कि वे कितने गहरे बिल में हाथ डाल बैठे हैं।"

"कैसे?"

"अब मुख्यमंत्री ही उनसे इस ट्रांसफर को रोकने को कहेगा।"

"एक तहसीलदार के लाने मुख्यमंत्री कहेगा?"

"तहसीलदार को तुम किसी मुख्यमंत्री से कम माने बैठे हो क्या?"

"पर मान लो कि कैंसिल न हुआ तो?"

"तब की तब देखेंगे।"

"और हमारा काम? उसका क्या होगा?"

"यार, उनका इत्ता बड़ा ट्रांसफर हो गया और तुम्हें अपने काम की पड़ी है?"

"बे तो ट्रांसफर होकर कहीं और के तहसीलदार बन जाएँगे पर हमारा काम..."

"...ऐसा नहीं है भैया। उनका भी नुकसान हो सकता है। मान लो कि वे इतें से निकलें और लूप लाइन में पोस्ट कर दिये जाएँ, फिर?"

"क्या मतलब?"

"लूपलाइन समझते हो न? ऐसा मानो कि उनको ऐसी जगह भी बिठाया जा सकता है

जहाँ वो तहसीलदारी करने को भी तरस जाएँ तो?"

"और हमारा काम?"

"अपुन उसका देखते हैं न? देखिए, यदि अपने तहसीलदार साहब बने रहे तब तो कोई परेशानी ही नहीं..."

"... और वे न रहे तो?"

"तो फिर वे कैसे करेंगे?"

"फिर हमारी रिश्वत?"

"मान लो कि डूब गई।"

"ऐसे कैसे?" शख़्स ने यह बात गुस्सा होकर कहनी चाही पर अपनी ही आवाज की मिमियाहट पर वह स्वयं चकित रह गया।

"ऐसेई होता है भैया। अकेली तुम्हारी नहीं, बहुतों की डूबेगी।"

"पर जे तो भौत गलत बात है।"

"कानून तो रिश्वत देने को भी गलत कहता है।"

"फिर आदमी क्या करे?"

"आदमी चुप बैठे, बस।"

"पर अगर हमारा पैसा डूबा तब तो यह बड़ा गलत हो जाएगा।"

"किस्मत के खेल में भौत-सा सही-गलत होता रहता है भैया। किस्मत का तुम क्या करोगे?"

"और जो इनकी जगह नया तहसीलदार आएगा वो भी माँगेगा क्या?"

"क्यों न माँगेगा भैया?"

बताडालदार :

"यह तो हद हो गई, बताइए!"

"क्या बताएँ?"

"जब नियम-कायदे से कोई सुनवाई न हो, और रिश्वत से भी काम होने की गारंटी न बने तो आदमी फिर किस पर विश्वास करे?"

"करना तो रिश्वत पर ही पड़ेगा। नियम-कायदे पर ज्यादा भरोसा करना ठीक नहीं।"

"क्या आप हमारे पैसे वापस नहीं दिला सकते?"

"किनसे?"

"तहसीलदार साहब से।"

"यार, हमें अफसर से मजाक करने को न बोलें।"

"हम तो फिर मर जाएँगे बिस्मिलजी। हम सच्ची में मर जाएँगे। सच्ची..." कहकर वह शख्स रोने लग गया।

फिर वह शख़्स रोता ही चला गया। पट्ठा रुका ही नहीं।

बिस्मिलजी चुप बैठकर उसे रोता हुआ देखते रहे।

फिर उसे वे धीमे स्वर में रिश्वत का सिद्धांत समझाने लगे :

"मैं आपका कष्ट समझ सकता हूँ परन्तु आप भी वास्तविकता को तनिक समझो। रिश्वत में यह खतरा तो रहता
ही है कि वह डूब जाए। रोज ही रिश्वत दी जाती है। रोज कोई न कोई डूबती भी है, पर वह रोज काम भी करती है। इसीलिए रिश्वत दी भी जाती है, दिलवाई भी जाती है। एकदम वैसा मामला है कि हम रोज-रोज किसी न किसी को मरते देखते हैं पर हम यह भी मानते हैं कि हम स्वयं कभी न मरेंगे। देखिए, रिश्वत भी जीवन की भाँति नश्वर है। वह डूब भी सकती है। अफसर ट्रान्सफर हो जाए, आपसे रिश्वत लेने के अगले दिन ही मर जाए, किसी और से रिश्वत लेते हुए लोकयुक्त की पकड़ में आ जाए, या दूसरी पार्टी वाले उसे तुमसे भी ज्यादा पैसे दे जाएँ, या अफसर ही बेईमान निकल जाए-कुछ भी हो सकता है। किसी भी कारण से आपकी दी हुई रिश्वत डूब सकती है। जैसे आदमी किसी भी कारण से मर सकता है; बीमारी से, दुर्घटना में, मर्डर से, या ऐसेई। आदमी भी तो रिश्वत टाइप ही डूबता है। रिश्वत देना जुए की फड़ में पैसा लगाने जैसा है। वे जमाने गए कि जब अफसर को रिश्वत देकर आप निश्चिंत सो सकते थे। अब ऐसा नहीं है। बड़ा जटिल समय आ गया है। रिश्वत देने के बाद भी समझ ही नहीं

पड़ता कि मामले का क्या होगा?"

वे रिश्वत का रिस्क समझाते रहे। वे रिश्वत पर भरोसा रखने का आग्रह भी करते रहे और रिश्वत डूब जाने की आशंका के प्रति आगाह भी करते गए।

यह धार्मिक प्रवचन नहीं था वर्ना जिस अंदाज़ में वे यह सब समझा रहे थे, किसी का भी मन उन्हें महात्मा बिस्मिल महाराज कहने को कर बैठता।

जहाँ व्यथा एक चुटकुला बन जाए

बड़े साहब ने पंडिज्जी को बिलकुल इंतज़ार नहीं कराया। साहब आए और तुरत उनको अन्दर बुलवा लिया। साहब लेन-देन वाले आदमी को इंतज़ार नहीं कराते हैं। पंडिज्जी आधे घंटे से चेंबर के बाहर इंतज़ार में बैठे हुए थे। साहब ने बुलाया तो वे तेज़ कदमों से अन्दर जा पहुँचे।

फिर वही विमर्श हुआ जो ऐसी मुलाकातों में साहब और चलते-पुर्जे टाइप के महत्त्वपूर्ण शख़्स के बीच होता है। पंडिज्जी शिक्षाधिकारी से परेशान हैं। पुढे पर हाथ ही नहीं रखने दे रहा है पट्ठा। इसी सिलसिले में बड़े साहब की सहायता लेने की कोशिश में वे आज यहाँ हैं। बड़े साहब तो पूरे जिले के साहब हैं। हर विभाग उनकी तामीली में है। वे अगर एक बार भी ज़ोर देकर कह दें तो शिक्षाधिकारी की हिम्मत नहीं कि स्कूल पर जाँच बिठा सके। ... और ऐसा भी नहीं है कि पंडिज्जी ने शिक्षाधिकारी को साधने की कोशिश न की हो। बहुत की। कई बार की। कई तरह से की। पर वह कतई राजी नहीं। फिर भी पंडिज्जी ने एक दिन रक़म भेज ही दी तो उसने सारे नोट मुन्ना मास्साब के मुँह पर फेंक दिये। पट्ठा एकदम से बमक गया। फोन पर पंडिज्जी को सख़्त चेतावनी दे दी कि आपके ये मुन्ना-फुन्नाजी फिर कभी यहाँ दिखें, नहीं तो फिर आप दोनों ही जेल की चक्की पीसते नजर आएँगे। साहब ने यह धमकी भी दी कि आप इस साल की परीक्षा तो भूल ही जाएँ; और आगे भी याद न रखें तो ही बेहतर। उसी सिलसिले में पंडिज्जी यहाँ आए हैं। यहाँ से उनको सीधे लखनऊ निकलना है। वहाँ मंत्री और सेक्रेट्री को पकड़ना है। चूँकि ये बड़े साहब एजुकेशन सेक्रेट्री के अच्छे मित्र कहे जाते हैं सो इनका उनसे कुछ कह देना काम आ सकता है। ये उन्हें फोन कर दें तो पंडिज्जी का काम आसान हो जाए। इधर कुशवाहा पिटकर भी नहीं माना है। अब किसी बहाने उसे सस्पेंड करने की तैयारी में हैं पंडिज्जी। वैसे वह सस्पेंड होने के बाद भी मानने वाली प्रजाति नहीं लग रहा है। स्साला ऐसा ईमानदार है कि क्या कहें !

चेंबर में घुसते ही पंडिज्जी ने सबसे पहले तो साहब की रुचि वाला काम किया। पंडिज्जी साहब से किसी की सेटिंग जमाने का एक काम अपने साथ लाए हैं। सबसे पहले उन्होंने वही काम किया। साहब को भरोसा दिया कि आप जो भी सेवा बताएँ, पार्टी वैसा करने को राजी है। कहें तो कैश, वर्ना गोल्ड में, जो भी आपको सुविधाजनक लगे। पार्टी पैसे देने को बेताब है। मानिए कि मरी जा रही है। आप इशारा

भर करें। फिर सब कुछ ठीक से निबटवाना हमारा काम।

शुरू में तो उन्होंने जिला शिक्षाधिकारी की बात ही नहीं उठाई। असली बात बाद में ही की जाएगी। रणनीति यही कहती है। बड़े साहब भी जानते हैं कि पंडिज्जी असली काम बाद में बताएँगे। वे प्रशासन के पुराने घाघ हैं। वे भी प्रतीक्षा करेंगे। इस तरह, दो घाघ लोग असली मुद्दे पर आने से पूर्व इधर-उधर की बातें करने लगे। प्रशासन और दलाल के बीच की रूटीन चोंचलेबाजी वाली बातें। साहब संभावित रिश्वत के प्रसंग के बाद बेहद आत्मीय हो उठे हैं। बड़े साहब आत्मीय होने और दुत्कारने के पल स्वयं तय करते हैं। उनके व्यक्तित्व में एक खटका-सा लगा है कहीं। आदमी की उपयोगिता, उसकी किस्मत और उस पल साहब के मूड से तय होता है कि वे आत्मीय होंगे या उस आदमी को दुत्कारेंगे? एक पल में ही कहीं एक खटका-सा दब जाता है। आदमी की उपयोगिता को सूँघने की कुछ तो उन्हें आफिशियल ट्रेनिंग है, कुछ उनमें ईश्वर प्रदत्त घ्राणशक्ति भी है।

"चाय तो पिएँगे न?" कहकर घंटी बजा दी साहब ने।

चपरासी भागता हुआ अन्दर आया।

"दो चाय लेकर आओ।" साहब ने कहा। चपरासी वैसा ही भागता हुआ वापस चला गया।

"बड़ा चुस्त है आपका भृत्य!" पंडिज्जी चपरासी की तारीफ़ से शुरू हुए।

"अभी टेंपरेरी है न- इसलिए। एक बार इसे परमानेंट हो जाने दें, फिर इसे देखिएगा। आप इसे पहिचान भी न पाएँगे। इनसे काम लेना हो तो इन स्सालों को टेंपरेरी ही बनाए रखना चाहिए।" साहब ने कहा और ज़ोर से हँसने लगे। एक क्रूर बयान को चुटकुला बनाकर पेश कर रहे हैं वे। इस कार्य में बड़े माहिर हैं वे। किसी की व्यथा को अपना चुटकुला बना डालना सबके वश की बात नहीं।

पंडिज्जी भी साहब के इस चुटकुले पर खुलकर हँसे।

"और?" साहब ने पंडिज्जी से पूछा।

"सब ठीक है सर। ... मैं तो आपका स्टेमिना देखकर हैरान हूँ सर। हमेशा काम में लगे रहते हैं; फिर भी, चेहरे पर हरदम वही मुस्कान। वाह सर!" मूड भाँपकर पंडिज्जी ने साहब के भजन का पहला अंतरा पेश किया।

साहब ने मनोयोग से पंडिज्जी के भक्ति श्लोक सुने और मुस्कुराने लगे।

पंडिज्जी ने मौका देखकर प्रभु के समक्ष भजन का एक और बन्द तुरन्त पेश किया :

"दिन भर इत्ते लोग आपको घेरे रहते हैं, फिर इत्ती फाइलें, इत्ते दस्तखत, इत्ते फोन; पर मजाल है कि आप...। कमाल है सर।" पंडिज्जी अपनी जेब में घर से खड़ताल रखकर तो नहीं चले थे परन्तु कमरे में खड़ताल-सी बज उठी।

"कर लेते है पंडिज्जी, जनता के काम में मुझे कभी थकान नहीं लगती।" साहब ने चेहरे पर बिना कोई शिकन लाए एक सफेद झूठ बोला जिसे पंडिज्जी ने भी बिना पलक झपकाए सुन लिया।

साहब का मूड थोड़ा-सा और अच्छा हो जाए तो वे शिक्षाधिकारी वाला प्रसंग निकालें। इसी उद्देश्य से उन्होंने भजन और खड़ताल के साथ हारमोनियम भी बाहर निकाल लिया :

"इसी बात के लिए तो पूरे इलाके में मशहूरी है आपकी।" पंडिज्जी ने वह बात कही जिसे कहने में उनके बाप का कुछ भी नहीं गया, पर उस बात से साहब का खून ज़रूर एक-दो छटाँक बढ़ जाना था।

साहब मुस्कुराते हुए पंडिज्जी को देखते रहे। तभी चाय भी आ गई। दोनों ने अपने कप उठा लिए। चपरासी ट्रे उठाकर जाने लगा कि तब तक साहब ने चाय का एक घूँट ले लिया।

"क्यों रे!" साहब ने पीछे से कड़ी आवाज में कहा।

चपरासी की पीठ ने साहब के मूड और उसके कान ने "क्यों रे" की दहशत महसूस की। घबराकर पीछे पलटा वह।

"ये चाय है तुम्हारी?" साहब ने फटकारा।

चपरासी ने सीधे ही गलती स्वीकार ली।

"सॉरी सर!" उसने सिर झुकाकर कहा।

साहब थोड़े ढीले, थोड़े उदार हुए। साहब ने उदारता की सीमा में रहते हुए उसे धमकाया :

"ठीक से मन लगाकर काम किया करो मिस्टर।"

"जी सर।"

"ढीले काम करने वालों को मैं कतई बरदाश्त नहीं करता। ... याद रहे।"

चपरासी ने हाथ जोड़कर प्रणाम किया और कमरे से बाहर निकल गया। उसे बाहर जाता हुआ देखते रहे साहब।

"डेली वेजेस वालों का यही है। काम माँगते टाइम तो ऐसे रिरियाते हैं कि क्या कहें ! और जॉब मिला नहीं कि बस ऐसी हरामखोरी!" चाय के कप की तरफ इशारा करके साहब ने कहा, "और इसका ये नाटक देखा आपने अभी?..."जी साहब," "जी साहब।" ... आपने देखा न? कैसे अभी हाथ जोड़कर गया है? ... है ना?... और कोई हाथ जोड़ दे तो हम, क्या कहते हैं इस तरफ, चूतिया, है न,... हम चूतिया बन जाते हैं।" साहब बोले और हँसने लगे।

साहब कब किस स्थिति को चुटकुले में बदल दें, वे ख़ुद नहीं जानते। बूढ़े, बेरोज़गार, लंगड़े, लूले, अंधे, भिखारी, ईमानदार, लाचार, भूखे, गरीब- उनके लिए सभी मज़ेदार चुटकुले हैं। उन्हें लोकतंत्र, आमजन, कानून, दफ़्तर, औरतें और देश को लेकर भी खूब चुटकुले पता हैं। फिर वे स्वयं भी, आशु कवि की भाँति तत्काल चुटकुले गढ़ने में माहिर हैं।

पंडिज्जी भी साहब के साथ हँसने लगे। वे तो पीछे लगा हुआ डिब्बा हैं। इंजन जिधर भी जाए, जाना है उन्हें।

पंडिज्जी मुस्कुराते हुए चाय पीते रहे। गलत केस बनाने में साहब कितने माहिर और सहज हैं- उदाहरण सामने था। चाय अच्छी बनी थी। झूठे केस से उन्हें कुशवाहाजी की याद आई जो उन्हें वैसे भी भूली नहीं थी।

"हमें एक छोटी-सी हेल्प चाहिए थी।" कहकर पंडिज्जी ने बात शुरू की।

बड़े साहब का मूड अच्छा था। वे चाय पीते हुए पंडिज्जी की बात सुनने लगे। उन्होंने पूरी बात सुनी। समस्या समझी। कुछ देर तक सोचते भी रहे। फिर निष्कर्ष में एक ऐसी बात उन्होंने बोली जो प्रशासन की दुनिया में ध्रुव सत्य-सी स्थापित है।

साहब पूछने लगे, "लगता है, शिक्षाधिकारी को आपने ठीक-सा ऑफर नहीं दिया?"

"नहीं सर, बहुत बढ़िया ऑफर दिया था।" पंडिज्जी के लहजे में यह विश्वास झलक रहा है कि वे रिश्वत में कभी कंजूसी नहीं करते हैं।

"आपने अपने हिसाब से बढ़िया दिया होगा, उन्हें बढ़िया नहीं लगा हो; ऐसा भी तो सम्भव है?"

"हमने तो यहाँ तक कहलवाया था कि आप ही रकम तय कर लें।" बाबा

"फिर?"

"वे तो बमक गए। कहने लगे, जेल भिजवा दूँगा। बताइए! सर, जरा आप ही बताइए; कहीं ऐसे चलती है दुनिया?" पंडिज्जी के लहजे में दर्द भरी शिकायत थी कि प्रशासन की आजकल की दुनिया सही राह पर नहीं चल रही।

"कहीं ये बहुत ईमानदार तो नहीं?"

"नहीं सर, हमने पूरी जन्मकुंडली बाँची है उनकी।"

"पता कर लिया था न? क्योंकि इस तरह की ऊलजलूल हरकतें अक्सर ईमानदार अफसर करते हैं।"

"नहीं सर, वे ईमानदार होते तो हम उनको ऑफर ही क्यों देते? हमें पता है कि ईमानदार से निबटने का रास्ता अलग होता है।"

"वही तो! हमने भी कभी इस अधिकारी के बारे में ऐसा कुछ एडवर्स सुना नहीं। ईमानदार होता तो इसकी अभी तक दस तरह की शिकायतें आ गई होतीं।" साहब मौन होकर सोचते रहे। कुछ देर तक एकटक चाय के खाली कप की तरफ़ देखते रहे। पंडिज्जी उनको गौर से ताकते रहे।

"फिर?" साहब ने पूछा।

"आपकी तरफ़ से एक बार उनको फोन चला जाता तो..." पंडिज्जी ने धीरे से कहा।

"... फोन तो हम अभी कर देंगे। कह भी देंगे कि आपके इस मामले को ठीक से देख लें। ... पर याद रखिए। अगर हम एक बार बीच में आ गए तो वह फिर कभी आपसे कुछ लेने वाला भी होगा तो लेने की हिम्मत नहीं करेगा। बड़ा अफसर बीच में आ जाए तो रिश्वत का रास्ता हाथ से निकल जाता है।"

"तो कम से कम उनसे यह तो पता करवा दें कि वे चाहते क्या हैं?"

साहब कुछ देर तक सोचते रहे। अचानक ही उनके शातिर दिमाग में कोई बिजली-सी कौंधी।

साहब लगभग निश्चयात्मक लहजे में बोले, "ज्यादा चाँस इस बात का है कि कोई और

ही पार्टी इस पूरे मामले के पीछे है। किसी ने आपके विरुद्ध कार्यवाही के लिए उसे पहले ही भारी रकम दे रखी है। मुझे यही समझ में आ रहा है। बल्कि यही बात है। तभी तो वह आपसे लेने को राजी नहीं।"

"नहीं सर, ऐसी कोई पार्टी नहीं है। कौन मेरे अगेन्स्ट ऐसा

"... गलत सोच रहे हैं आप। होगी, जरूर ऐसी कोई पार्टी होगी। यह आपकी लापरवाही है कि आपको इसका पता नहीं। कोई तो है जो आपका परीक्षा केंद्र बन्द कराना चाहता है। सोचिए। ... कोई दुश्मन है आपका?"

"सो तो पचासों हैं सर।"

"तो फिर यही सच है। फिर यह शिक्षाधिकारी जरूर कहीं पहले ही कमिटेड हो गया है। ऐसे में वह मेरी भी नहीं मानेगा। इधर-उधर की बातों में मुझे घुमाएगा।"

पंडिज्जी सोच में पड़ गए। साहब की बात में जान तो है। समझना होगा। इस दिशा में ज़रूर पता करना पड़ेगा।

"सर, आप राधाचरणजी से कुछ कह सकते हैं क्या?"

पंडिज्जी ने आख़िरी कोशिश की।

राधाचरण अर्थात् साहब के मित्र, शिक्षा विभाग के सेक्रेटरी।

"अभी तो वे खुद किसी कहलवाने वाले को खोज रहे हैं। राधाचरण खुद इन दिनों बुरी तरह फँसे हुए हैं।" साहब ने हँसकर कहा।

पंडिज्जी कुछ समझे नहीं। पूछा, "मतलब? वे कहाँ फँस गए?"

"उनकी एक सीडी मुख्यमंत्रीजी तक पहुँचाई गई है। सीडी का मतलब तो समझते हैं न आप?"

"कुछ-कुछ समझता हूँ।"

"बस, वही। करते तो बहुत से लोग हैं पर सभी सतर्क रहकर करते हैं। पर किसी-किसी की सीडी बन जाती है। ये लापरवाह लोग होते हैं। राधाचरणजी की तो तीन औरतों के साथ बना ली है किसी ने। अब वे परेशान घूम रहे हैं। किसी से मुख्यमंत्री की सिफारिश खोज रहे हैं। उनसे तो अभी कुछ भी कह पाना सम्भव नहीं।" साहब ने मजबूरी प्रकट की।

पंडिज्जी समझ गए कि सितारे ही स्साले उनके ख़िलाफ़ चल रहे हैं।

"तो फिर मैं चलूँ सर?" पंडिज्जी निराश होकर उठने लगे।

"आपकी पकड़ तो लखनऊ तक है न?" साहब के प्रश्न में सुझाव निहित था।

"वही करते हैं सर। अब तो हमें सीधे मुख्यमंत्री के पास जाकर ही बैठना पड़ेगा।" पंडिज्जी के मन में यह बात पहले भी थी। वे यहाँ अकेले साहब के भरोसे तो आए भी नहीं थे।

"बैठिए। वहीं जाकर बैठें और काम कराए बिना वहाँ से उठिएगा मत।" साहब ने कहा।

"नहीं सर, इनको तो अब सीट से उठवाकर ही हम उठेंगे।" पंडिज्जी ने कह तो दिया परन्तु अपनी ही आवाज़ में उन्हें वह आत्मविश्वास महसूस नहीं हुआ। ख़ुद की आवाज़ इतनी अपरिचित-सी ध्वनित हुई कि ख़ुद से ही पूछने की इच्छा हो रही है कि "भाई, तू कौन?"

पंडिज्जी सीट से उठ गए।

पंडिज्जी उठकर बाहर आए। पीए को धन्यवाद दिया। उनको एक लिफाफा ऐसे कौशलपूर्वक दिया कि कोई निष्णात जादूगर भी उनकी हाथ की सफ़ाई देखकर शरमा जाए।

बाहर निकलते-निकलते उन्हें बरामदे में वही प्रतीक्षारत बूढ़ा बैठा हुआ दिखा।

साहब से मिलने की प्रतीक्षा में अभी भी वह उतना ही उत्कंठित, बेचैन और इस भोले विश्वास से भरा हुआ बैठा है कि आज तो ज़रूर ही साहब से मुलाकात हो जाएगी। क्या इस मूर्ख को पता नहीं कि साहब इससे कभी नहीं मिलेंगे? और मिले भी तो नहीं मिले जैसे ही मिलेंगे। मिलेंगे भी, और नहीं भी मिलेंगे। वैसे, गौर से देखो तो यह आदमी कैसा अजीब-सा दिखता है? इसकी आँखों में ऐसा क्या है जो उन जैसे चलते पुर्जे को भी भयभीत कर रहा है? है तो एकदम आम नागरिक पर इसका यही भोलापन और विश्वास उन्हें डरा क्यों रहा है?...क्यों पंडिज्जी की हिम्मत नहीं पड़ रही कि उससे आँख मिलाएँ?

पंडिज्जी आँखें चुराकर वहाँ से निकलने लगे। निकल ही गए होते पर कमबख़्त बूढ़ा एकदम सामने आकर ही उनको प्रणाम करने लगा।

रुकना पड़ा पंडिज्जी को।

"राम-राम मालिक।" बूढ़े ने कहा।

पंडिज्जी ने हाथ उठाकर आशीर्वाद जैसा कुछ दिया।

"साहब आए हैं क्या?" बूढ़े ने पूछा।

"तुमने नहीं देखा?" पंडिज्जी को समझ नहीं आया कि उसकी बात का क्या उत्तर दें?

"देखा तो है पर पता नहीं चलता।" बूढ़े ने कहा और हाथ जोड़ दिये; पहले पंडिज्जी की तरफ़, फिर आसमान की तरफ़।

पंडिज्जी चुप रहे।

बूढ़ा न जाने किस तरफ़ देखता हुआ बुदबुदाने लगा, "हम यहीं बैठे हैं। हम यहाँ से कभी हटते भी नहीं कि साहब आएँ

तो ऐसा न हो कि हम यहाँ न मिलें।"

पंडिज्जी उसे साहब के दरवाज़े की तरफ़ देखता पाकर धीरे से बिना कुछ बोले वहाँ से खिसक लिए।

डकैती डालना अच्छी बात नहीं

पंडिज्जी लखनऊ में थे, इधर नत्थू का लड़का गिरफ़्तार हो गया।

लड़का कुछ दिनों पहले ही छतरपुर से कोटरा आया था। पुलिस ने उसे बमौठी डकैती कांड में धर लिया। तब से ही नत्थू बौराया घूम रहा है। खेत का काम छोड़कर थाने के सामने बैठा हुआ है। अपोली ने पंडिज्जी को फोन पर यह सब बताया। पंडिज्जी तब मुख्यमंत्री निवास के बरामदे में दो घंटे से खड़े हुए सूख रहे थे। उन्हें अभी तक अन्दर से नहीं बुलवाया गया था।

"नत्थू को समझाओ जरा। इधर से दरोगा को हमारे फोन करने से कुछ न होगा। वो स्साला फोन उठाएगा भी नहीं। नत्थू को ठीक से समझा दो कि उसके वहाँ मँडराने से

केस और खराब होगा। कहीं दरोगा गुस्सा हो गया तो केस और बिगाड़ देगा। समझाओ कि खेत पर जाकर रहे। हम कल आकर दरोगा से मिलते हैं। मामला समझते हैं।" बात करते हुए भी पंडिज्जी की आँखें मुख्यमंत्री के कमरे के दरवाज़े पर हैं।

"वो मान ही नहीं रहा। थाने की सड़क पे बैठा है।"

"तो और समझाओ स्साले को। समझाओगे तो मानेगा क्यों नहीं?" पंडिज्जी ने चिढ़कर कहा।

***

समझाया तो नत्थू को पुलिस वालों ने भी था। समझाया क्या, धमकाया कह लें वर्ना पहले तो वह एकदम थाने के अहाते में ही बैठा हुआ था। फिर दरोगाजी वहाँ से निकले। उन्होंने सिपाही से पूछा कि बाहर यह आदमी कौन बैठा है? सिपाही ने बताया कि इसी का मोंड़ा तो हमने डकैती में पूछताछ के लिए थाने में बिठा रखा है। दरोगाजी उखड़ गए। बोले कि यहाँ बैठकर क्या मोंड़ा की चौकीदारी कर रहा है भैंचो? भगाओ इसे। अभी भगाओ। बता दो, हमें अगर अब बाहर दिखा तो हम इसे भी अन्दर बैंड़ देंगे; फिर बाप-बेटा गले मिल के रोते रहना।

सिपाही ने उसे अहाते से निकाला तो अब बाहर की सड़क पर बैठ गया है नत्थू। अभी भी वहीं बैठा हुआ है।

***

बेटा छतरपुर से कोटरा आया हुआ था।

छतरपुर में नत्थू का बेटा, बहू और नाती रहते हैं। वहीं काम करते हैं बेटा, बहू। बहू घरों में बर्तन-भाँडे, झाड़ू-पोंछा करती है। बेटा, दशहरा से गंगा दशहरा के बीच ईंट के भट्ठे पर काम करता है। मिट्टी खोदना और ईंट के खाँचों में उसे भरना। और ईंट का सीज़न निकल जाने के बाद? फिर, जहाँ जैसा काम मिल जाए; पल्लेदारी, चौकीदारी, वर्ना साइकिल रिक्शा। आजकल वह छतरपुर में रिक्शा चलाता है। उसके दो बच्चे यहाँ दादा-दादी के पास रहते हैं। कोटरा आता-जाता रहता है। अभी पिछले दिनों, कुछ पैसे जोड़-जाड़ के, एक पुरानी मोटरसाइकिल ख़रीद ली थी तो बिरादरी में सबको दिखाने के लिए अभी कोटरा आया हुआ था। बच्चों को मोटरसाइकिल पर बिठाकर कोटरा भर में घुमाता रहा। मेहरारू को छतरपुर से मोटरसाइकिल पर ही बिठाकर लाया था। बिरादरी में इस अनहोनी की खूब चर्चा भी रही। वह चीन का बना एक चमकीला मोबाइल भी हाथ में रखता है। चमड़े जैसे कपड़े की एक जैकेट पहिनने लगा है। बड़े आदमियों टाइप मूँछें रख ली हैं उसने। साफ-सुथरे कपड़े पहनने लगा है। बड़े लोगों

जैसा साफ-सुथरा दिखने भी लगा है। ... और यही सब उसके ख़िलाफ़ चला गया। गरीब का गरीबी के मान्य बाने
से अलग दिखना सन्देह पैदा करता है। ... इधर पुलिस को बमौठी डकैती-कांड के लोगों की तलाश थी। इस शख़्स पर सन्देह के सारे कारण बनते थे। उसे सड़क से ही उठा लिया गया। तब वह खेत पर नत्थू को यह बताने आया हुआ था कि हम एक घंटा में छतरपुर वापस निकल जाएँगे।

पुलिस वाले आए और उसे साथ ले गए।

बदहवास नत्थू पंडिज्जी के घर भागा। वहाँ पता चला कि वे तो कल से लखनऊ गए हुए हैं। वह भागता हुआ पंडिज्जी के स्कूल जा पहुँचा। वहाँ अपोली मिल गए तो नत्थू को कुछ आस बँधी। उसने सारा मामला बताकर अपोली के हाथ जोड़े।

अपोली ने कहा कि दरोगा हरामी है, वह हमारी न सुनेगा। वह बस, पंडिज्जी से ही काबू आएगा। वैसे भी अभी तुरन्त थाने जाना तो ठीक न कहलाएगा। कभी ऐसा करो तो पुलिस भारी बुरा मान जाती है। पहले, एकाध दिन पीट-पाट के उनका मन भर जाने दो। कल तक पंडिज्जी भी आ जाएँगे। पूछताछ के लिए ही पकड़ा गया है न? पंडिज्जी उसे जरूर छुड़वा लेंगे। अपोली कमरे में बैठे दो मास्टरों के साथ-साथ नत्थू को भी सुनाने लगे कि पुलिस, कई बार, यूँ ही मौज में आकर भी आदमी पकड़ लेती है। बाद में पीट-पाट के उसे घर जाने देती है। हो सकता है कि इसे भी ऐसेई पकड़ा हो। पुलिस को दिखाना भी तो पड़ता है कि तफतीश चल रही है। डकैती वाले केस में पुलिस पर भारी दबाव है। डकैती हुए महीना हो चुका। बताते हैं कि पुलिस को कोई भी सुराग नहीं मिला है। खूब अखबारबाजी चल रही है। खुद बिस्मिलजी ने परसों ही पहले पन्ने पर इत्ती आग मूती है कि थाने की कुर्सियों के पाए तक झुलस गए होंगे। वो तो फिर दरोगाजी ने बिस्मिलजी को बुलाकर ठीक से सेट किया तब जाकर बिस्मिलजी कवि-सम्मेलन, गल्ला मंडी में अग्निकांड के खतरे और मौसम इत्यादि की खबरों तरफ मुड़े हैं। ऐसे में पुलिस क्या करती? किसी को तो थाने में पूछताछ को बिठाती कि नहीं? सुना है, इनके मोंड़ा के अलावा और भी चार लोगों को बिठा रखा है। कानून अपना काम कर रहा है। कार्यवाही होती दिख रही है।

कानून का राज नजर आ रहा है। वैसे भी गरीब आदमी का क्या तो थाने में बन्द होना, क्या बाहर रहना; किसको फर्क पड़ता है? नत्थू पंडिज्जी के खेत पर काम करता है सो इस कथाकार को पता चल गया वरना क्या फर्क पड़ता है दुनिया को कि कौन शख्स थाने में बेवजह बन्द है, कौन थाने की छत के कुंदे से लटका हुआ है, कौन ठुक रहा है; कभी इस बारे में सोचता भी है कोई? नत्थू के मोंड़ा को पुलिस उठा ले गई है, इससे नत्थू के परिवार के अलावा किसी को भी कोई फर्क पड़ने वाला है क्या? सुबह वैसे ही होगी। वादे-सबा वैसी ही चलेगी। फूल वैसे ही खिलेंगे। धूल वैसे ही उड़ेगी। बहारें फिर भी आएँगी, जाएँगी। सरकार वैसे ही चलेगी।

नत्थू के के रोने से कहीं कुछ नहीं बदलने वाला।

***

फिर पंडिज्जी कोटरा लौट आए।

उन्हें यह जानकर अच्छा लगा कि नत्थू ने अन्ततः अपने कर्तव्य को समझा। वह थाने से हटकर रखवाली के काम पर खेत लौट आया था। उन्होंने जाना ही नहीं, कैसे कटी चौकीदारी की वह कठिन रात नत्थू की? 'इस समय बेटा थाने में पिट रहा होगा', सोच-सोचकर नत्थू रात भर मेंड़ पर करवटें बदलता रहा। सुबह उठा तो उसकी पीठ पर बेंत जैसे निशान उभर आए थे।

पंडिज्जी ने सारा मामला समझा। नत्थू को सांत्वना दी। यह भी बताया कि वैसे तो पुलिस बड़ी बेमुरव्वत होती है पर हम दिखवाते हैं कि क्या कैसा किया जा सकता है?

वे उसी दोपहर थाने जा भी पहुँचे।

दरोगाजी लंच के लिए उठने वाले थे। पंडिज्जी को आते देखा तो रुक गए। पकड़े गए मुलजिम का पंडिज्जी से कनेक्शन दरोगाजी को खूब पता है। बता रखा है सिपाही ने। तभी तो उनको पंडिज्जी की प्रतीक्षा भी थी और तैयारी भी। अब आते देखा तो मुसकुराए दरोगाजी। उनकी अपनी रणनीति है। इसी के तहत वे पंडिज्जी और मुजरिम के इस कनेक्शन से एकदम अनजान बन गए। पंडिज्जी को देखकर वे ऐसे ज़ोर से चौंके कि पंडिज्जी को भी पता चल गया कि दरोगाजी थानेदार कितने भी चुस्त हों, अभिनय के मामले में बड़े कमज़ोर हैं।

"अरे!! पंडिज्जी? आप?" दरोगाजी ने कुर्सी से लगभग आधा उठते हुए कहा।

हवा में आधे उठे हुए नितम्बों द्वारा प्रदत्त आदर की राजनीति का पंडिज्जी ने भी कोहनी तक हाथ जोड़कर उचित प्रत्युत्तर दिया और सामने रखी कुर्सी पर बैठ गए।

"कैसे हैं पंडिज्जी?" थानेदार ने पूछा।

पीछे खड़ा हुआ मुंशी मुस्कराने लगा। वही पंडिज्जी को कमरे के अन्दर लेकर आया है।

"बस साहब, आप अच्छा रखे हैं तो अच्छे हैं।" पंडिज्जी बोले।

"अच्छा रखे हैं; कैसे?" दरोगाजी समझ नहीं सके।

"आपका राज है। आप ही तो रखेंगे।"

"देखिए पंडिज्जी, बातों में तो हम बाँभनों से जीतने से रहे; बाकी राज किसका चल रहा है, जे मुंशीजी से पूछिए। असली बात ये ही बताएँगे।" दरोगाजी ने हँसकर कहा।

"मुंशीजी क्या बताएँगे; दुनिया को पता है कि राज किसका है और राजगद्दी पर कौन बिराजा हुआ है?"

"आपका बड़प्पन है वरना लोग तो राजगद्दी में से भी नीचे से उँगली करते रहते हैं।"

"उँगली करबे की हिम्मत कौन नासमझ कर रहा है?"

"अरे, मौका देखकर कोटरा के सारे हरामी हमारे पीछे लग गए हैं। कहते फिर रहे हैं कि थानेदार एकदम निष्क्रिय बैठा हुआ है।"

“आप गद्दी पर बैठते हैं तो सब चलता है, दारोगाजी।

"और अब हम जरा से सक्रिय हुए हैं तो इसका भी कोटरा में हल्ला मचा हुआ है! लोग शिकायत कर रहे हैं कि मुलजिम को क्यों पकड़ रखा है? आप ही बताइए फिर कि बेचारा थानेदार आखिर क्या करे?" दरोगाजी ने अर्थपूर्ण दृष्टि से पंडिज्जी की तरफ़ देखते हुए कहा।

पंडिज्जी खुलकर मुस्कराने लगे। पीछे खड़े मुंशीजी तो और भी ज़ोर से मुस्कुराए। दरोगाजी ने मुंशीजी को बाहर खिसकने का इशारा करते हुए कहा :

"बढ़िया-सी चाय तो बनवाओ पंडिज्जी के लिए। चाय तो पिएँगे न?"

"पी लेंगे।" पंडिज्जी बोले।

"अच्छी-सी। अदरक वाली। ... गला बढ़िया खुल जाता है अदरक से।" दरोगाजी बोले।

"जी सर।" कहकर मुंशीजी बाहर निकल गए।

"खुले गले की बड़ी जरूरत रहती है इस कुर्सी पर।" पंडिज्जी ने स्वीकार किया।

"क्या करें पंडिज्जी। लोग दिन भर यहाँ के चक्कर लगाते रहते हैं। छोटे-मोटे लोग भी, और आप जैसे बड़े आदमी भी। हर आदमी प्रश्न पूछता है। जवाब देने पड़ते हैं हमें। इस कुर्सी पर खुला गला ही चल पाता है।"

"गाली-गलौज के लिए भी तो खुला गला ही चइए।" पंडिज्जी हँसकर बोले।

"वो भी है। इस कुर्सी पर गालीगलौज भी लगती है। क्या करें? दुनिया बड़ी हरामी हो गई है। आप गालीगलौज की बात कर रहे हैं? उसकी तो छोड़िए; कल से तुड़ाई कर रहे हैं, पर एक भी मुजरिम यह बताने को राजी नहीं कि डकैती का माल कहाँ छुपाया है।"

"हो सकता है, वे डकैत ही न हों। गलत पकड़ लिए गए हों।" पंडिज्जी बोले।

"वह भी जल्दी ही पता चल जाएगा। हमें, बस, एक दिन ठीक से ठोंक लेने दें सब मान जाएँगे।"

"अदालत में सब मुकर भी जाएँगे, फिर?"

"वो सब अदालत जाने।"

"पर उनमें से एक आदमी तो बिलकुल ही निर्दोष है।

उसका तो हमें भी पता है। उसे एकदम गलत उठा लाए हैं आपके लोग।"

"निर्दोष होगा तो हम खुद ही उसे छोड़ देंगे। निर्दोष इनसान की हाय थोड़े ही लेंगे हम। वैसे, आप किसकी तरफ इशारा कर रहे हैं पंडिज्जी?" दरोगाजी ने भोले बनते हुए पूछा।

पंडिज्जी ने अब नत्थू के लड़के के बारे में सब कुछ बताया। दरोगाजी चुपचाप सुनते रहे।

इसी बीच चाय आ गई।

"लीजिए।" थानेदार साहब ने आग्रह किया।

पंडिज्जी ने कप उठा लिया। चाय का पहला घूँट पीते हुए पंडिज्जी ने कहा, "सिपाहियों से जरूर कहीं कुछ गलती हुई है।"

"गलती इनसानों से ही होती है पंडिज्जी।" दरोगाजी ने स्वीकार किया कि सिपाही भी इनसान होते हैं।

"शरीफ लड़का है वह।"

"हमें भी शरीफ ही लग रहा है।" थानेदार ने माना।

"फिर?"

"पर ये कहाँ लिखा है कि शरीफ आदमी को डकैती डालने की मनाही है? न तो डकैती में ऐसा कोई नियम है, न शराफत में। डकैती तो कोई भी डाल सकता है। उसके लिए तो हिम्मत चाहिए, बस। हिम्मत हो तो शरीफ भी बड़ी डकैती डाल सकता है।"

"हम उसे बचपन से देख रहे हैं, तब से, जब वो इत्ता-सा बच्चा था। एकदम सीधा..."

"...बचपन से बड़े की कोई गारंटी नहीं बनती पंडिज्जी। कई लौंडे बचपन में संत टाइप होते हैं और बड़े होकर ऐसे हरामी निकल आते हैं कि..."

"... नहीं दरोगाजी, यह लड़का वैसा नहीं है।"

"कैसा नहीं है?"

"...कि डकैती डाले। डकैत होता तो भला छतरपुर में रिक्शा खींचता फिरता क्या?"

"कहाँ लिखा है कि रिक्शा वाला डकैती नहीं डाल सकता?"

"गरीब आदमी है।"

"तभी तो! गरीब को तो और भी पैसे चइए। वह डकैती न डालेगा तो कौन डालेगा? टाटा बिरला तो डकैती डालने से रहे।"

"उन लोगों की छोड़िए। बड़े लोग दूसरी तरह की डकैती डालते हैं।" पंडिज्जी हँसे।

"वह सब आप पालिटिक्स वाले ज्यादा जानते हैं। हम तो अभी इस लौंडे की बात कर रहे थे।"

"हम भी अभी उसी की कर रहे हैं। ... उसे छोड़ दें दरोगाजी। ... गरीब आदमी है। खास कुछ दे भी न पाएगा।" पंडिज्जी ने इशारा किया।

"चमचमाती मोटरसाइकिल पे घूमता है, ऐसी बड़ी-बड़ी मूँछें रखता है, आपसे भी बढ़िया जूते पहने हुए था; काहे का गरीब आदमी पंडिज्जी?... चूतिया बनाता है स्साला! हमें जरा ठोंकने तो दें उसे। सब उगल देगा कि जे सब खरीदने के लिए पैसा कहाँ से आया?" दरोगाजी को गरीब आदमी के ठाठ पर एतराज है।

"जे सब उधारी के चोंचले हैं साहब।"

"वो भी हम उससे पता कर लेंगे न।"

पंडिज्जी ने चाय पूरी की, कप वापस रखा और अंतिम बार प्रार्थना की। इस बार प्रार्थना में यह धमकी भी छुपी थी कि दरोगाजी न माने तो पंडिज्जी ऊपर जाकर भी लड़के को छुड़वाने का दबाव बना सकते हैं।

"थोड़ा देख लें।" पंडिज्जी ने कहा।

"थोड़ा क्यों, पूरा ही देखेंगे।"

"इसे हमारी प्रार्थना मान कर ही यह काम कर दें।"

"अरे पंडिज्जी, आप प्रार्थना तो न करें। अगर आप लोग ही प्रार्थना करने लगेंगे तो फिर आज्ञा कौन देगा?"

"वो दिन हवा हुए दरोगाजी। अब तो बस, जे सब ऊपर-ऊपर की ही शान है। यह तो अफसरों की मुहब्बत है; आप हुए, आपके बड़े साहब हुए, कलेक्टर साब हुए- आप लोग हैं जो अभी भी हमारी प्रार्थना सुन लेते हैं।"

"यह तो आपका बड़प्पन है कि वास्तविकता को स्वीकार रहे हैं वरना शान बची हो, न बची हो - आदमी यही मानता है कि उसकी शान है।" थानेदार ने भी इशारा किया कि वह कम से कम पंडिज्जी की शान से परे है।

"आपसे प्रार्थना है कि बच्चे को थाने में बिठाकर न रखें। एक दिन रख लिया। वही काफी है।"

"स्साले को बच्चा तो न कहें ! पैंतीस साल का अच्छा-खासा पट्ठा है।"

"हमने तो भावना के वशीभूत होकर कह दिया। उसे बचपन से देखा है न। हमारे लिए तो बच्चा ही है।"

"यहाँ मामला भावनात्मक नहीं, कानूनी है पंडिज्जी।"

"हमें पता है।"

"बस तो..."

"...ऐसे हर कानून का तोड़ आपके पास है, यह भी हमें पता है।" पंडिज्जी ने मुस्कराकर कहा।

दरोगाजी सोच में पड़ गए; अब इससे अधिक थानेदारी दिखाना कहीं गलत तो न हो जाएगा?

"ऐसा मानें कि अब यह हमारी इज्जत का प्रश्न बन गया है। आप जैसे आत्मीय से अगर हम यह छोटी-सी प्रार्थना भी स्वीकार नहीं करा सके तो कोटरा में सब हम पर हँसेंगे।" पंडिज्जी बोले।

दरोगाजी अपनी ही रणनीति के तहत पिघलने लगे।

"बताइए, क्या करें हम? आपको मना भी तो नहीं कर सकते। आप भी दोस्ती में हमें गैरकानूनी काम करने को मजबूर कर देते हैं पंडिज्जी।" दरोगाजी ने हँसकर कहा।

"काहे का गैरकानूनी भाई साब ! एक बार आपके कर कमलों से कोई काम हो गया, बस; फिर सब कानूनी ही कानूनी है।"

"अरे, हमें जे पहले से पता होता कि जे आपका आदमी है तो हम इसे उठवाते ही नहीं।" थानेदार ने मीठा झूठ बोला।

"हम जानते हैं..." पंडिज्जी ने भी बोल दिया।

दो मीठे झूठों ने वातावरण आत्मीय बना डाला।

पंडिज्जी उठने लगे। उठते-उठते पंडिज्जी ने शुभकानाएँ दीं, "ईश्वर करे कि डकैती केस जल्दी सुलझ जाए और आपकी खूब वाहवाही हो।"

"सुलझेगा ही।"

"हम जानते हैं।"

"मुजरिम सब कुछ बताएँगे। अभी चुप हैं पर उगलेंगे। सबके नाम बता देंगे।"

"करें। पूछताछ जरूर करें।"

"पेशाब की नली में करेंट लगाओ तो गले की नली खुल जाती है पंडिज्जी। फिर आदमी से जो बुलवाना चाहो, वही बोलने लगता है।" कहकर थानेदार साहब हँसने लगे। ऐसी बातों पर हँसा भी जा सकता है यह बात बस भारतीय पुलिस को पता है।

"तो हम चलें?" पंडिज्जी ने आज्ञा लेनी चाही।

"जी, जरूर चलिए।" दरोगाजी ने नितम्बों को आधा उठाकर फिर से समुचित आदर दिया।

"हमारे पीछे-पीछे उसका बाप भी यहाँ तक आया है। उससे हम क्या कह दें?" पंडिज्जी जानते हैं कि ये उसे सूखे-सूखे तो छोड़ेंगे नहीं।

दरोगाजी हँस पड़े। "ऐसी भी क्या जल्दी है पंडिज्जी? आदमी को ये तो पता चलने दें कि दुनिया में कहीं पुलिस भी होती है।" दरोगाजी अर्थपूर्ण लहजे में बोले।

"हिंदुस्तान में सबको पता है भाई साब।" पंडिज्जी ने आश्वस्त किया।

"पंडिज्जी, लोग यह भी तो जानें कि खाकी भी एक रंग होता है।" दरोगाजी मुस्कुराए।

"इंद्रधनुष खाकी रंग का भी होता है, यह बात कोटरा के आकाश तले रहने वाला बच्चा-बच्चा जानता है।" पंडिज्जी ने मुस्कराकर आश्वस्त किया।

"चलिए। आपकी बात सुनकर हमें अच्छा लगा।"

"फिर उसके बाप को क्या कहूँ?" पंडिज्जी ने फिर पूछा। दरोगाजी सीधा जवाब देने से बचे। उन्होंने बात को घुमाकर गम्भीर स्वर में उत्तर दिया, "उससे इत्ता जरूर कहिए कि डकैती डालना बहुत बुरी बात है।"

पंडिज्जी जोर से हँसे।

"आप भी दरोगाजी!" पंडिज्जी बोले।

दरोगाजी गम्भीर बने रहे। गम्भीर रहकर मज़ाक़ करना जानते हैं वे।

"नहीं-नहीं। हम सच कह रहे हैं पंडिज्जी। यह सब समझाना भी तो पुलिस का ही दायित्व है कि डकैती कोई भौत अच्छी चीज नहीं होती है।"

पंडिज्जी अलबत्ता मुस्कुराते ही रहे।

"कोटरा में यह बात भी सब जानते हैं दरोगाजी।" पंडिज्जी ने आश्वस्त किया।

"जानते हैं, पर मानते नहीं। किसी से भी कभी पूछकर देखिएगा, वह यही कहेगा कि यह ठीक कह रहे हैं आप कि डकैती खराब चीज है परन्तु..."

"... परन्तु क्या?"

...जेई तो है। वे इस बात में 'परन्तु' जरूर लगाते हैं। ... चोरी बुरी है 'परन्तु'...। मर्डर भौत बुरा है 'परन्तु'...। कोटरा में यह 'परन्तु' भौत चलता है।"

"ठीक कहा आपने। यहाँ ऐसे लोग भी हैं। हर जगह होते हैं। पर ज्यादातर लोग कानून का आदर करते ही मिलेंगे आपको।"

"कैसे न करेंगे? हम बैठे हैं न आदर करवाने के लिए।" "ठीक कहा, पुलिस का डर भी जरूरी है।"

"आप जैसे लोग पुलिस के साथ खड़े दिख जाते हैं तो मान लें कि हमारा आधा काम हो जाता है।"

"चाय भौत बढ़िया बनी थी।" पंडिज्जी ने चलते-चलते कहा।

"थाने की चाय फालतू ही बदनाम है वरना यह अच्छी ही

"ऐसा होता है," पुलिसवाले ने कहा।

फिर जाते हुए पंडिज्जी को आवाज़ देकर दरोगाजी ने कहा, "उसके बाप से कह दें; मुंशीजी से मिल ले।"

पंडिज्जी ने पलटकर हाथ जोड़ दिये।

***

इधर पंडिज्जी बाहर निकल रहे थे कि उधर मुंशीजी को थानेदार साहब का इशारा मिला तो वे पंडिज्जी के पीछे-पीछे चले आए।

"साहब से बात हो गई?" मुंशीजी ने पूछा।

"सब आप पे छोड़ दिया है साहब ने।" पंडिज्जी बोले।

"ऐसा कहा? तो हम देख लेते हैं न।"

"बस, ऐसा देखना कि आपका देखना उसकी औकात के बाहर न चला जाए। उधार भी वह हमसे ही माँगेगा।" पंडिज्जी बोले।

"सब ठीक कर लेंगे पंडिज्जी। एक बार साहब ने इशारा कर दिया है अब..."

"...पर इसे पकड़ा क्यों था? डकैती तो इसने डाली नहीं है। आप भी जे बात खूब

जानते हैं।" पंडिज्जी ने पूछा।

"दो दिन से छाती फुलाए हुए पूरे कोटरा में अपनी मोटरसाइकिल घुमा रहा था। मूँछों पर ताव देता फिर रहा था, झक्क सफेद कुरता डाले। पुलिस की आँखों में तो इसे आना ही था। भैया, गरीब हो तो गरीब टाइप ही रहो न, वरना सब तो जेई सोचेंगे न कि इसे कहीं से पैसा मिल गया है। ऐसे में आस-पास डकैती पड़ी हो तो ऐसा आदमी पकड़ा न जाएगा क्या?"

मुंशीजी ने पुलिस का रवैया स्पष्ट किया।

"चलिए, तो अब देख लें। बस, जे जान लें कि ज्यादा न दे सकेगा। गरीब आदमी है।" पंडिज्जी ने एक बार फिर से बोल देना उचित समझा।

मुंशीजी मुस्करा दिये, "आप चिन्ता न करें।"

***

पंडिज्जी थाने के अहाते से बाहर आए तो सामने ही बेताबी से प्रतीक्षा करता हुआ नत्थू मिला।

"तुम अन्दर जा के मुंशीजी से मिल लो।"

"छूट जाएगा ना मालिक?"

"बोल आए हैं। छूट जाएगा।"

नत्थू चरणों में गिर गया। पंडिज्जी ने उठाया। उठाते-उठाते उन्हें दरोगाजी का कहा वाक्य याद आ गया। उन्होंने नत्थू से कहा :

"डकैती डालना बहुत बुरी बात होती है नत्थू।" नत्थू समझा नहीं। पंडिज्जी मुस्कराने लगे।

डरने वाली संसद के सामने

"जयहिंद, जयहिंद, जयहिंद।"

आजकल झनझनाता रहता है कुछ, अहर्निश, गजानन बाबू के चारों तरफ़। जयहिंद की तरंगें। जयहिंद की झंकार। उनके चहुँ ओर, दसों दिशाओं में बस जयहिन्द की थरथराहट महसूस होती रहती है उन्हें। गजानन बाबू दिल्ली आ पहुँचे हैं और अभिभूत से वहाँ घूम रहे हैं। राजघाट पर तो वे घंटों तक बैठे रहे। स्वयं गांधीजी ने समाधि से निकलकर उन्हें आशीर्वाद दिया, उनके सिर पर हाथ फेरा, कहा कि तुम जरूर सफल होगे। तब से वे और भी अभिभूत हैं। तब से ही कोई लगातार उनके चारों तरफ़ घूम-घूमकर नारे लगाता फिर रहा है; जयहिंद, जयहिंद। उनके कानों में निरन्तर जयहिंद की गूँज है। आजकल उनके लगातार अभिभूत दिखने का एक कारण यह भी है।

***

गजानन बाबू अन्ततः दिल्ली पहुँच गए हैं।

राजघाट पर बापू का आशीर्वाद भी मिल गया है तो वे और भी घनघोर आत्मविश्वास से भर उठे हैं। वहाँ से सीधे संसद भवन ही पहुँच गए वे।

पर उन्हें बाहर ही रोक लिया गया। उन्होंने प्रहरियों को पंडिज्जी का पत्र भी दिखाया पर वे नहीं माने।

"हाँ-हाँ, सारे एमपी यहीं आते हैं पर आप ऐसे अन्दर नहीं आ सकते।" एक सुरक्षाकर्मी ने पागल से दिखते बूढ़े पर दया दिखाते हुए समझाया कि यह अति-संवेदनशील सुरक्षा वाला एरिया है। आप अन्दर न जा पाओगे। सामान्य नागरिक को संसद में प्रवेश की मनाही है।

"पर संसद को तो सामान्य नागरिक ही चुनता है न?" गजानन बाबू ने आश्चर्य से पूछा।

"जिनको आपने चुना है उनकी सुरक्षा के लिए ही ऐसा इंतजाम किया गया है दद्दा।"

"किसकी सुरक्षा? नागरिक से इनको कैसा खतरा?"

"आप नहीं समझेंगे। ऐसा मान लें कि यह गवर्नमेंट का आर्डर है।"

"हम इसे न मानें तो?"

"मानना तो पड़ेगा। कोई जबरन घुसे तो उसे सीधे गोली तक मारी सकती है।"

"चलो हम अभी घुसते हैं, तुम मारो।" वे तैश में आकर गेट पर हुज्जत करने लगे।

"होश में हैं कि नहीं?"

"हैं। होश में ही हैं। गांधीजी ने कल ही हमसे कहा है कि..."

"गांधीजी तो कब के मर चुके हैं दद्दा।"

"...क्या कहा रे तुमने? क्या कहा? हिम्मत है तो फिर से तो बोलो एक बार।" गजानन बाबू गुस्से में आगबबूला हो उठे।

पागल है बुड्ढा !

"चलिए, गांधीजी जिंदा हैं। अब खुश?"

"फिर उन्हें मरा कैसे समझ लिया तुमने?"

"गलती हो गई बाबा, अब खुश?"

"इस देश में तुम अकेले नहीं हो। बहुत से मूरख लोग यही समझ रहे हैं कि गांधीजी मर चुके हैं। स्सालों को पता ही नहीं कि वे जिंदा हैं। वे तो सब में हैं। हर आदमी में गांधीजी हैं। वे मुझमें हैं। तुम में भी हैं। सबमें हैं।"

"ठीक है बाबा। आप ही सही हो। अब आप वहाँ जाकर बैठो।"

गजानन बाबू अभी भी उत्तेजित हैं। कोई गांधीजी को मरा हुआ मान रहा है और वे ऐसे चुपचाप सुन लें?

"जो भी लोग गांधीजी को मरा हुआ मानते हैं वे कान खोलकर सुन लें। वे किसी गलतफहमी में न रहें। गांधीजी सबमें हैं। बच्चे-बच्चे में हैं। गांधीजी कभी भी तुम्हारे सामने आ जाएँगे। कोई भी आम जन निकलकर आ जाएगा और गांधी बन जाएगा, कोई भी; क्योंकि गांधी बनने की सम्भावना सबमें है।"
पागल है स्साला। पूरा पागल।

प्रहरियों ने समझा-बुझाकर शान्त किया उनको। बताया कि वैसे भी अभी संसद बन्द

है। अभी अन्दर आपको कोई भी न मिलेगा। आप अभी तो बाहर बैठकर इंतजार करें।

गजानन बाबू मान गए। बोले, "तो हम बाहर बैठते हैं। एमपी लोग आएँ तो हमें मिलवा जरूर देना।"

"मिलवा देंगे पर यहाँ से थोड़ी दूर जाकर बैठिएगा।"

"क्यों भला?"

"इस फाटक से सौ गज की दूरी तक कोई ऐसेई खड़ा नहीं रह सकता।" सुरक्षाकर्मी ने समझाया।

"हमारी संसद अपने ही नागरिक से इत्ता डरती क्यों है?" गजानन बाबू ने पूछा।

सुरक्षाकर्मी समझे नहीं।

"बाबा, आप तो वहाँ जाकर बैठो। ... वहाँ।" उन्होंने बहुत दूर पर खड़े चाय नाश्ते के ठेलों की तरफ इशारा किया।

"एमपी लोग कब आएँगे?"

"आएँगे तो आ जाइएगा।" टालते हुए किसी ने कहा।

"वे आएँ और हम आपको न दिखें तो आप उनको हमारा यह कागज जरूर दे देना।" कहकर उन्होंने एक सुरक्षाकर्मी को पाँच-छह पैम्फलेट पकड़ा दिये।

"यह सब क्या है?"

"बस, आप तो एमपी लोगों को दे देना।"

"देने से क्या हो जाएगा?"

"पढ़ लेंगे तो हमें ढूँढ़कर हमारे फॉर्म पर बुलाकर दस्तखत कर देंगे।"

"किस फॉर्म पर?"

"राष्ट्रपति पद के फॉर्म पर।"

"मतलब?"

"हम राष्ट्रपति पद के लिए चुनाव में खड़े हो रहे हैं न।"

सुरक्षाकर्मी हँसने लगे। जितना सोचा था उससे भी डबल पागल है।

"उधर जाइए राष्ट्रपतिजी। अभी तो आप उधर ही रहें। हाँ, जब आप राष्ट्रपति बनकर इधर से गुजरेंगे तब हम लोग जरूर आपको ऐसे सेल्यूट करेंगे।" एक सुरक्षाकर्मी ने उनको नकली सेल्यूट किया तो बाकी के प्रहरी हँसने लगे।

***

कई दिन ऐसे ही गुज़र गए। वे हरदम संसद के बाहर ही खड़े रहते। सड़क पर यहाँ-वहाँ घूमते रहते। बार-बार दूर से ही इशारा करके पूछते। प्रहरी लोग भी दूर से ही इशारा करके उनको बताते कि अभी एमपी लोग नहीं आए हैं।

संसद का अवकाश चल रहा है और गजानन बाबू संसद के सामने मंडरा रहे हैं।

***

पिछले कई दिनों से लोग उनको देख भी रहे हैं।

चाय के ठेलों के पास ही खड़े रहते हैं वे। वहीं पर, कहीं भी, बैठ और लेट भी जाते हैं। वहाँ खड़ी रहने वाली

कर्मचारियों की भीड़ को और चाय बेचने वालों, रेहड़ी वालों को भी धीरे-धीरे उनका सब पता चल गया है। ... पागल है बुड्ढा। कहता है कि इस बार राष्ट्रपति बनेगा! देश में रामराज लाएगा!... इसका पैम्फलेट पढ़ा आपने? ... अरे! नहीं पढ़ा? फिर तो ये जरूर पढ़ो। पढ़ो तो यार। ... है न मजेदार ? ...सच। ... बुड्ढा सनकी है। किसी से भी कभी नमस्ते या गुड मार्निंग नहीं कहता है। मिलने पर हरदम 'जयहिंद' ही कहता है, बस। कभी इसे नमस्ते करके तो देखो। बड़ा मज़ा आएगा। सच्ची। कह के तो देखो। यह बन्दा आपको एकदम से 'जयहिंद' बोलेगा। बीच-बीच में कभी-कभी 'महात्मा गांधी की जय' भी बोलता रहता है। ... झकलट है बुड्ढा। सनकी। ... सब लोग मज़े लेते हैं। लोग दया भी करते हैं उन पर। लोग अपनी तरफ़ से गजानन बाबू को चाय पिलवा देते हैं। रेहड़ी वाले कुछ खिला-पिला देते हैं। उनका 'जयहिंद' बोलना सबके लिए एक खेल-सा बन गया है। फालतू बैठे हुए लोग बीच-बीच में उनसे 'जयहिंद' बोलते रहते हैं। वे हर

बार बड़ा ललककर उत्तर देते हैं। हर जयहिंद के प्रत्युत्तर में न केवल तीन बार 'जयहिंद', 'जयहिंद', 'जयहिंद' बोलते हैं, तीन जयहिंद के बाद वे एक बार 'महात्मा गांधी की जय' भी बोलते हैं। लौंडे-लपाड़ी उनसे ठट्ठा करते रहते हैं। ... एक-दो अखबार वालों को भी इसकी ख़बर हो गई। एक स्थानीय न्यूज़ चैनल वाले को मामला रोचक तथा सम्भावनापूर्ण लगा। पग्गल बाबा का टीवी पर रोचक-सा इंटरव्यू भी हो गया है। उस दौरान भीड़ उन्हें घेरकर खड़ी रही। गजानन बाबू ने विस्तार से चैनल वालों को बताया कि वे राष्ट्रपति बन गए तो देश में कैसे रामराज्य लाया जाएगा। किसी ने फेसबुक पर उनका सचित्र किस्सा डाल दिया तो पग्गल बाबा मशहूर से हो गए हैं।

आजकल भीड़ घेरे रहती है उनको।

एक भले से ठेले वाले आदमी ने उनको अपने ठिये पर साथ ही रख लिया है। इस तरह रहने का इंतजाम भी हो गया है गजानन बाबू का। वह उन्हें हमेशा अपने साथ रखता है। उन्हें देखकर उसे गाँव में पीछे छूट गए दादाजी का स्मरण हो आता है। वह उनसे हँसकर कहता भी है कि राष्ट्रपति बनने पर हमें याद रखना बब्बा। उसे सहानुभूति-सी हो गई है गजानन बाबू से। कितनी निर्दोष शक्ल है इनकी।

क्या निर्दोष दिखने के लिए अब आदमी का पागल होना ज़रूरी हो गया है इस देश में?

बस, यह कागज मिल जाए तो देश आगे बढ़े

खूब खोजा पर मिला नहीं।

दफ़्तरों की माया तो आप जानते ही हैं। कागज मिल ही नहीं रहा। मिल जाता तो अभी के अभी सारा काम हो गया होता। फटाफट। पर एक कागज है जो सालों से नहीं मिल पा रहा। बल्कि दशकों से। देखिए न कि मात्र एक कागज के चक्कर में सब काम रुका पड़ा है। इतनी महत्त्वपूर्ण फाइल दस्तखत को रुकी हुई है। फाइल में वह कागज भी लग जाता तो फाइल पूरी हो जाती। हर फाइल रुकी हुई है। एक कागज है जो सारे देश में खोजा जा रहा है। हर दफ़्तर में उसी की खोज जारी है पर वो नहीं मिल रहा। यार, उसका मिलना तो भौत ज़रूरी है वर्ना तो सारा काम ही रुक जाएगा। फाइल रुक जाएगी। देश रुक जाएगा। काम रुका हुआ है। देश रुका हुआ है।

सही है कि देश रुका हुआ है पर बताइए न कि हम क्या करें? पहले वह कागज तो

मिले। सब खोज भी रहे हैं परन्तु दफ़्तर में वह कागज नहीं मिल रहा।

विकास। न्याय। सड़क । नौकरी। बिजली। पानी। पुलिस-कार्यवाही। ट्रांसफर। पोस्टिंग। अनाथालय। वेश्यालय। युद्ध। शान्ति-कपोत। बाँध। नाली। सहायता। अनुदान। मन्दिर। मस्ज़िद। फूल। बन्दूक । हवा । श्वास। हाथ। पैर। सम्मान। सज़ा। दुत्कार। प्यार। दुलार। जूता। हार। अभिनंदन। विकास। प्रगति। ... सब रुके पड़े हैं, आगे नहीं बढ़ पा रहे हैं, किसी एक कागज के इंतजार में।

लोग समुचित रिश्वत भी दे चुके हैं। देनी पड़ती है। सब देते हैं। दस्तूर है। कागज खोजने, कागज बनाने, कागज को फाइल में लगाने, कागज को फाइल से गायब करने आदि की रिश्वत का इंतज़ाम करना पड़ता है देश को।

कागज मिल जाए तो काम आगे बढ़े। कागज बन जाए तो देश आगे बढ़े।

कागज पर साहब की सही हो जाए तो देश को श्वास आए।

पर कागज मिल ही नहीं रहा।

रोज दफ़्तर के चक्कर काट रहे हैं। ... मिला साहब? उत्तर यही मिलता है कि खोजा जा रहा है। कर देते साहब ? देश रिरियाता है। ... यार, और भी तो काम हैं कि नहीं? देख नहीं रहे कि अभी सब बिजी हैं। आप बाद में आइए। बाद में पता कर लें। आप देख तो रहे हो? दो लोग सीएल पर हैं, एक जन बिना बताए घर बैठ गए हैं और एक साहब के मुँहलगे हैं सो वे कोई काम करते नहीं। हम ही हैं तो हम अभी तनिक बाहर जा रहे हैं। दौरे से लौटकर आपका कागज खोजते हैं। पर उस कागज के मिले बिना फाइल पर निर्णय नहीं हो पा रहा है सर। खैर, वो तो है। कोई भी फाइल पर ऐसे अपने दस्तखत कैसे करेगा यार? कागज तो पूरे ही चाहिए, आप सही कह रहे हैं; पर हम भी क्या करें कि यही एक कागज न जाने कहाँ दब गया है स्साला। इधर वैसे भी दफ्तर में इत्ती फाइलें पड़ी हैं; इनमें ही कहीं आपका कागज भी दबदबा गया है। जरूर, यहीं कहीं है। चिन्ता न करें। मिल जाएगा। क्यों न मिलेगा? हर बार मिल जाता है। हर एक का मिल जाता है। पहले नहीं मिलता, फिर मिल जाता है। यही सिस्टम है। कागज भी आखिर जाएगा कहाँ? जरूर मिलेगा। सब लोग खोजने में लगे हैं न। मिलेगा। थोड़ा धैर्य रखें। कागज मिलते ही हम आपको इन्फार्म करते हैं न। देखिए न कि हम तो खुद आपके इस काम में पर्सनल इंटरेस्ट लेकर लगे हुए हैं। आप देख ही रहे हैं न? औरों को भी काम पर लगा रखा है। हमें भी इसकी अहमियत पता है। हमें पता है कि एक इस कागज के इंतज़ार में सारा विकास रुका पड़ा है, न्याय प्रतीक्षा में है, पेट भूखा है, हाथ खाली हैं, देश पीछे रह गया है, मीडिया में हल्ला हो रहा है; सब पता है हमें। पर क्या करें, बताइए? आप ही बताइए न कि और क्या करें? सारे काम छोड़कर हम लगे तो हैं। हमें कौन-सा मजा आता है कि लोग परेशान हों। ... और आपने तो मुँह माँगेपैसे भी हमें दे दिये हैं। हम रिश्वत के सख्त खिलाफ हैं परन्तु एक

बार ले लें तो फिर उसके काम में अपनी जान लगा देते हैं। लगे हैं। मिलेगा। हमने सबको बता दिया है। कागज जल्दी निकाल दो तो आप सबको अलग से और भी रकम देंगे। सब बड़े उत्साहित हैं। कर्मठ कर्मचारी हैं। लग गए तो कागज खोजकर ही मानेंगे।

कागज खोजा जा रहा है। कागज मिल ही नहीं रहा।

क्या था वह कागज?

इतना ही जरूरी था तो फिर सँभालकर क्यों नहीं रखा गया?

...क्या, क्या सँभालकर रखें साहब? और कहाँ रखें?

आप ही बताइए न?

आप खुद देख रहे हैं न कि यहाँ कित्ती सारी फाइलें पड़ी हैं? कित्ते सारे कागज पड़े हैं? सब तरफ कागज ही कागज हैं। फाइलें ही फाइलें हैं। आलमारी में। उसके भी ऊपर। छत तक। फर्श पर। टेबल पर। टेबल के नीचे। पीले कपड़े में बँधे। लाल फीते में बँधे। यहाँ पड़े। वहाँ दबे। वहाँ बिखरे। उधर जो पंखे की हवा में उड़कर अभी-अभी इधर से उधर चला गया- सब महत्त्वपूर्ण हैं। हर कागज जरूरी है और लावारिस पड़ा है। सँभालकर जरूर धरे गए हैं पर किसी और महत्त्वपूर्ण के नीचे दब गए हैं। बिलकुल । मानते हैं हम आपकी बात। कित्ता परेशान हैं आप- यह भी जानते हैं। जिसका काम फँसता है, वही जानता है भाई साहब। एकदम सही कहा आपने। तो खोजते हैं न? खोज रहे हैं। मिलेगा। क्यों न मिलेगा?

और जो यहाँ न मिला तो?

ऐसे भी निराश न हों आप। इस तरह के कागज इसी कमरे में स्टोर होते हैं। मिलना तो यहीं चाहिए। यहीं खोजते हैं। यहाँ न मिला तो फिर अपुन ओल्ड कलेक्टरेट में जाकर देखेंगे। कुछ पुरानी फाइलें उधर के स्टोर में भी जमा कर दी गई हैं। जगह की कमी है न, क्या करें? आपका कागज कहीं उन पुरानी फाइलों के साथ न निकल गया हो। हो जाता है। पुरानी फाइल में नया कागज चला जाए तो फिर भागते रहिए। पर अभी आपको दो दिन तो रुकना पड़ेगा। ओल्ड कलेक्ट्रेट के इस कमरे में किसी ने एक साँप देखा है। पट्ठा एक फाइल के नीचे ही छुपा बैठा था। वो तो भला हो कि टाइम पर दिख गया। किसी ने फाइल उठाने के लिए नीचे हाथ डाला तो ये बड़े जोर से फुफकारा। वो तो काट ही लिया होता। बस, बच गए। अब साँप वहीं फाइलों में ही कहीं बिला गया है। सभी लोग उस कमरे में जाने से डर रहे हैं। कोई भी अन्दर जाने को राजी नहीं। सलीम साँप वाला तीन घंटे तक हर फाइल में उसे खोजता रहा। साँप नहीं मिला। वहाँ सारा काम बन्द पड़ा है। अब साँप मिलने तक किसी को, कोई कागज नहीं मिलेगा।

लोग कहते हैं कि पिछले जन्म में किसी को उसका कागज न मिल पाया होगा तो वह इस जन्म में साँप बनकर अपना कागज खोज रहा है। पेंशन के कागजों के बंडल के नीचे ही तो बैठा भी था। हो सकता है कि पिछले जन्म का कोई रिटायर्ड बाबू रहा हो ! पेंशन वगैरह तो वैसे भी जनम जनम के फेरे वाले मामले होते हैं। कोई-सा भी जन्म ले लो आत्मा का इन कागजों से पीछा नहीं छूटने वाला।

एक बात पूछें?

पूछिए न। पूछिए, पूछिए?

मान लो, हमारा कागज मिल ही न पाया तो? दफ्तर की छोड़िए, मानिए कि सारे ब्रह्मांड में ही वह कहीं न मिल पाया, तो? फिर हमारी फाइल का क्या होगा? हमारे काम का क्या होगा? फिर हमारा काम होगा कि नहीं होगा? बड़ी चिन्ता हो रही है भाईसाहब। ... यार, शुभ, शुभ बोलो भाईसाहब। क्यों न मिलेगा? ऐसे अशुभ वचन बोलना ही क्यों? अरे, कागज तो मिलेगा ही। दफ्तर आखिर है क्या? कागज की ही तो सारी माया है। क्यों न मिलेगा? जब इत्ते कागज यहाँ पड़े हैं तो वह कागज भी यहीं कहीं मिलेगा। कागजों का क्या है, यहाँ-वहाँ मिसप्लेस हो जाते हैं, फिर मिल भी जाते हैं। हम कोशिश कर तो रहे हैं न? दो माह से आप भी यहाँ रोज आते हैं और हम भी आपको इस काम में लगे ही मिलते हैं न? मिलेगा। मिलेगा न!

फिर भी? मान लीजिए कि कागज न ही मिल पाया तो? साहब, पेपर न मिला तो फिर तो बड़ी गड़बड़ हो जाएगी। देखिए, पेपर तो मिलना ही चाहिए। इस पेपर के बिना तो बड़ा टंटा फँस जाएगा। सारे केस की जान तो यह पेपर ही है। उसके बिना तो साहब फाइल को क्लियर करेगा ही नहीं।

फिर भी? पेपर न मिला तो? देखिए भाई साहब, हमें अपनी यह फाइल तो कैसे भी क्लियर करवानी ही है। कागज मिले तो ठीक वर्ना कागज के बिना ही।

"पर उसमें बड़े पैसे ठुक जाने हैं आपके।"

"इसमें कितना पैसा लगेगा?"

"भौत पैसे !"

"भौत कितने?"

"गैरकानूनी कामों के जित्ते लगते हैं, उससे भी ज्यादा। साहब बड़ा कानूनी आदमी है। इस काम के भौत माँगेगा।"

"फिर भी किते?"

"दो लाख से कम में में वह तैयार न होगा।"

"दो लाख?"

"हमने कहा था न?"

"तो आपई दस-बीस हजार रुपए और ले लें, हमारा वह कागज खोज दें।"

"चलिए, डबल से कोशिश करते हैं। आप परसों आ जाएँ। कागज आपको मिल जाएगा।"

"मिल जाएगा न?"

"अब हम कह रहे हैं न? फिर विश्वास रखिए। मिल जाएगा।"

सबको विश्वास है। इसी विश्वास पर देश चल रहा है। देश उसी परसों के दिन की प्रतीक्षा में जी रहा है जब वे कागज देंगे।

***

कि पंडिज्जी वहाँ आ पहुँचे।

"हमारा कागज? मिला?" पूछा उन्होंने।

"रखा है न। ... जिस दिन आप कह गए, उसी दिन निकाल लिया था। तबसे सँभाल कर रखे हैं।"

"लाइए।"

"लीजिए।"

"हमने भेज दिये थे। गिन लिए थे न?"

"आपने भेजे थे, गिनना कैसा?"

पंडिज्जी ने कागज लिए और निकल गए।

***

"इनके कागज तुरत कैसे मिल गए?"

"यार, पंडिज्जी जैसों के कागज कभी नहीं गुमते। गुमें तो मिल भी जाते हैं। कागज न भी मिलें तो भी ऐसे लोगों की फाइल कभी नहीं रुकतीं। वैसे भी हमारा निवेदन है कि पंडिज्जी से अपनी तुलना न करें। यह देश वास्तव में पंडिज्जी का है। आपको लगता है कि देश आपका भी है तो हम आपको ऐसा सोचने से रोक तो खैर नहीं सकते। हम रोकेंगे भी नहीं। हाँ, यह याद रखें कि आपके कागज दफ्तरों में गुमते रहेंगे और हम खोजते भी रहेंगे। मिलेगा। आपका भी कागज कभी न कभी मिलेगा।"

सब कुछ लुटवाकर भी भाग्यशाली

नत्थू बहुत खुश है। बेटा थाने से घर आ गया।

यह बात दीगर है कि इस चक्कर में बेटे की मोटरसाइकिल उसके हाथ से चली गई। बकरी भी बेचनी पड़ी। बकरी के दोनों बच्चे भी बिक गए। आधा घर बिक गया। पंडिज्जी का कर्ज़ा चढ़ गया। भूख और कंगाली के और भी सुराख बन गए जीवन की चदरिया में। नत्थू फिर भी खुश है। बेटे का थाने से सही-सलामत लौट आने का आनन्द अवर्णनीय है। 'मोंड़ा थाने से ठीक-ठाक वापस आ गया' - यह किस्मत वालों के साथ ही होता है। मुंशीजी ने भी बस उतने ही पैसे माँगे, यह भी तो किस्मत ही है भैया; कहीं ज्यादा माँग लेते तो? मान लो कि मोटरसाइकिल बेचने, बकरी बेचने और बर्तन-भाँडे गिरवी रखने से जो रकम बनी, कहीं उससे भी ज्यादा माँग बैठते तो? पर उनने नहीं माँगे। जे भी तो किस्मत का ही खेल कहाया कि नहीं? नत्थू खुश है कि बेटा सही-सलामत छतरपुर भी लौट गया है।

थाने के हर कर्मचारी के पाँव छूकर आया है नत्थू। फिर हनुमानजी के चरणों में तो पड़ा ही रह गया। जब वह बहुत देर तक प्रभु के सामने बिना हिले-डुले ही पड़ा रहा तो स्वयं पुजारी ने उसको उठाया; लगा कि भक्त कहीं बेहोश तो नहीं हो गया है? और पंडिज्जी? उनके तो बार-बार पाँव छुए उसने। उनके चरणों में लोट-लोट गया वह। पंडिज्जी के पास अपने बेटे को भी साथ ले गया था वह। बहुत समझा-बुझाकर ले गया था कि मालिक के गोड़ पकड़ के ही रखना; छोड़ना मती। यह सब उन्हें अच्छा लगेगा। उन्हें अच्छा लगता है। बड़े आदमियों को ऐसा करने वाले लोग बड़े अच्छे लगते हैं। दोनों देर तक पंडिज्जी के चरणों में पड़े रहे। नहीं, हनुमानजी के बराबर तो खैर नहीं। पर उससे कम भी नहीं।

पंडिज्जी ने हँसकर कहा, "बच गए तुम बेटा। थाने से खटिया पे नहीं लौटे, यही ईश्वर की बड़ी कृपा रही तुम पर।"

पंडिज्जी के साथ बैठे लोग उनकी इस बात पर ठहाका लगाकर खूब हँसे।

"हम पर तो बस आपकी कृपा रही महाराज। ... आपई भगवान हो हमारे।" नत्थू ने माथा नवाकर कहा।

उसकी बात लोगों की हँसी में गुम हो गई।

नत्थू का लड़का अलबत्ता बेहद उदास और गुम बैठा रहा।

जयहिंद के बावजूद

एक शाम संसद मार्ग की पुलिस आकर गजानन बाबू को उठा ले गई।

गजानन बाबू पिछले कई दिनों से संसद के पास जमे हुए थे। फुटपाथ पर। वहीं, दरी बिछाए। छोटे-से रेक्जीन के एक झोले में सारी गृहस्थी लिए हुए। अलग से एक गांधी झोले में अपनी डायरी और ढेर सारे पैम्फलेट सहेजे। दिन भर आस-पास पैम्फलेट बाँटते-फिरते। हमेशा पाँच-छह आदमियों से घिरे रहते। भीड़ कभी बढ़ भी जाती है। रेहड़ी वाले दुकानदार लोगों को उनके बारे में बता देते हैं। सबको ख़बर थी कि दद्दा, गाँव से राष्ट्रपति बनने के लिए दिल्ली आए हुए हैं। अभी फॉर्म भरेंगे। रामराज लाएँगे, ऐसा कहते हैं। और ये बातें बब्बा कोई मज़ाक में नहीं कहते हैं भाई साहब; वे सच में ऐसा ही मानते हैं। ज़ाहिर है कि पगला गए हैं। पर जाओ। मिल के तो आओ। एक बार तो जाओ न? मिल के तो देखो। ज़रा बातें तो सुनो उनकी। और उनका पैम्फलेट ज़रूर पढ़ना। बड़ा मज़ा आएगा।

तमाशबीनों की भीड़ लगी रहती उनके पास। फालतू खड़े लोग। दफ़्तरों में काम के सिलसिले में आए प्रतीक्षारत लोग। सब वहाँ आ जाते। उनके मज़े लेते। रामराज के बारे में उनसे विस्तार से पूछते। घी-दूध की नदियों का प्लान भी समझते। गजानन बाबू भी बार-बार बताते हुए कभी थकते नहीं थे। हर एक को पूरी बात बार-बार समझाते। जागृति तो ऐसे ही फैलती है भाई। ... सब हँसते। सब उनसे 'जयहिंद' ही बोलते।

'जयहिंद' सुनकर खिल जाते गजानन बाबू। 'महात्मा गांधी की जय' भी बोलते हैं लोग। गजानन बाबू गदगदाए खड़े रहते हैं। जो भी उनका पैम्फलेट पढ़ता है, एक बार तो पलटकर उनकी तरफ़ देखता ही है; क्या ईश्वर आज भी इस तरह के लोग बनाया करता है?

गजानन बाबू इसी तरह कई दिनों से फुटपाथ पर बैठे हुए थे। भीड़ मिल जाती तो भाषण दे डालते। रामराज्य के लिए प्रजा को दीक्षित तो करना ही होगा न? उस दिन भी यही सब हो रहा था। सात-आठ आदमी उन्हें घेरे खड़े थे। चाय पीते।

मूँगफली चबाते। ब्रेड-पकौड़े खाते हुए लोग।

"जयहिंद।" कोई शख़्स भीड़ में घुसते हुए बोला।

"जयहिंद।" गजानन बाबू ने खुश होकर कहा।

"महात्मा गांधी की..." गजानन बाबू ने खुद ही उत्साहपूर्वक नारा उठाया।

"...जय!" भीड़ ने नारा बुलंदी तक पहुँचाया।

कि तभी वहाँ से पुलिस की एक जीप गुज़री। इंस्पेक्टर। एक हवलदार। दो सिपाही। पुलिस की जीप। नारा बुलंद हुआ तो इंस्पेक्टर ने जीप रुकवा दी।

"ये क्या बवाल हो रहा है यहाँ?" इंस्पेक्टर ने जीप रुकवाकर पूछा।

"अरे सर, कुछ नहीं; एक झकलट बुड्ढा है। ख़ुद को गांधीजी का चेला मानता है।" एक सिपाही ने हँसकर कहा।

"जीप को तनिक पीछे तो लो।" इंस्पेक्टर सन्तुष्ट नहीं हुआ। उसने जीप को पीछे करने का आदेश दिया ताकि वह स्वयं समुचित पड़ताल कर सके। जीप धीरे-धीरे पीछे आई और भीड़ से थोड़ी दूर आकर रुक गई। पुलिस वाले थोड़ी देर तक जीप में बैठे-बैठे ही सारे तमाशे को दूर से देखते रहे। सिपाही अभी तक इंस्पेक्टर साहब का रुख भाँप नहीं पाया था। वह उसी उत्साह से आगे भी बताने लगा, "एकदम पागल बुड्ढा है सरजी। ... दिन भर गांधीजी की जय बोलता रहता है।"

"गांधीजी का नाम लेता रहता है तो फिर पागल ही होगा।" इंस्पेक्टर सहमत हुआ।

"पागल ही है सर। कहता है कि देश को बदल दूँगा। रामराज लाने की बातें कहता है।" सिपाही ने हँसकर बताया।

"पर याद रखो; यह जरूरी नहीं कि वह पागल ही हो। वह कोई बड़ा हरामी भी हो सकता है। रामराज लाने, देश बदलने की बात को जो शख्स गांधीजी की जय से जोड़े, वह हरामी भी हो सकता है।"

"नहीं सर, ये आदमी पागल ही है।"

"तुम यह कैसे कह रहे हो?"

"सर, राष्ट्रपति चुनाव में खड़ा होने के लिए गाँव से इधर आया है। बताइए भला!"

"अध्यक्ष?"

"हाँ सर, राष्ट्रपति।"

"यह आदमी राष्ट्रपति बनेगा?"

"उसी के लिए पैम्फलेट तक बाँट रहा है। आप इसका पैम्फलेट पढ़कर देखिए, तभी आपको इसका असली रंग पता चलेगा सर। ... एकदम पागल है।" सिपाही हँसकर बोला।

"यदि ऐसा ही पागल है तो तुमने अब तक इसका क्या किया?"

"पागल का क्या करते सर?"

"पागल है तो बाहर कैसे घूम रहा है?" इंस्पेक्टर गुर्राया। सिपाही ने ने सिर झुका लिया।

"मान लो कि कल को यह बुड्ढा पागलपन की झोंक में किसी मंत्री या एमपी की कार में पत्थर-वत्थर मार दे तब? सब लोग सस्पेंड होते फिरोगे।" इंस्पेक्टर ने गुस्सा होते हुए कहा।

सिपाही ने मामले को इस तरह तो सोचा और समझा ही नहीं था। एक तरह से सच ही तो कह रहे हैं इंस्पेक्टर साहब। ... तभी तो साहब, साहब हैं। साहब की तरह सोच पाना हर एक के बस की बात नहीं।

"संसद के आस-पास ऐसा कोई खतरनाक पागल मंडरा रहा है और आपने अब तक इस पर कोई एक्शन ही नहीं लिया? सबको मरवाओगे क्या?" इंस्पेक्टर ने सिपाही को फटकारा।

"सर, इस बुड्ढे को इन रेहड़ी वालों ने ही शह दे रखी है।" सिपाही अपने सिर की बला औरों के सिर पर रखते हुए बोला।

"इनको बोलो, बुड्ढे को तुरन्त यहाँ से रवाना करें। कभी कुछ उल्टा-पुल्टा हुआ तो इन सबकी मइयो हो जाएगी।"

"क्या मैं आकर देख सकता हूँ, सर?" कांस्टेबल ने इजाज़त मांगी।

"जरूर जाओ। और बुढ़ऊ को हड़का देना कि ये सब तमाशा यहाँ न चलेगा। रेहड़ी वालों को भी थोड़ा टाइट करके आओ।"

हवलदार जीप से उतरा। सिपाही भी हवलदार के पीछे-पीछे जीप से कूदकर डंडा लहराता हुआ भीड़ की तरफ़ बढ़ा। दोनों चाय की रेहड़ी पर जा पहुँचे। ठेले पर डंडा बजाते हुए हवलदार ने पूछा, "यह बुड्ढा किसके साथ है?"

उसने गजानन बाबू की तरफ़ इशारा किया।

"बाबा थोड़े सरके हुए हैं हवलदार साहब।" किसी ने बताया।

"यहाँ इस पागल को किसने पाल रखा है?" हवलदार ने पुलिसिया अंदाज़ में पूछा।

"पाला किसी ने नहीं है मालिक। ये तो खुदई कहीं से यहाँ आ गए हैं।" रेहड़ी वाले ने बताने की कोशिश की।

"यह इलाका एक हाई-सिक्योरिटी ज़ोन है, पता है न?"

"जी मालिक।"

"फिर?"

रेहड़ी वाला चुप रह गया। हवलदार घूरता रहा उसे। एक-दो लोग पुलिस को देखकर पास आने लगे। सिपाही ने डंडे से इशारा किया कि सब लोग दूर ही रहें तो बेहतर। लोग तुरन्त पीछे हट गए। यार, मामला कुछ गड़बड़ दिखता है स्साला! गजानन बाबू को घेरकर खड़ी भीड़ ने यह सब देखा। सभी समझदार थे। सभी बूढ़े से दूर खिसक गए।

हवलदार अब गजानन बाबू के पास पहुँचा।

"क्यों साहब, आप यहाँ क्या कर रहे हैं?"

"खड़े हैं।"

"वही तो, क्यों खड़े हैं?"

"देश आजाद है। आदमी कहीं भी खड़ा हो सकता है।" गजानन बाबू को आज़ाद देश की पुलिस को देखकर, न जाने क्यों, अंग्रेजों के ज़माने की पुलिस याद आ जाती है। वे अभी, मानो अंग्रेजों की पुलिस से विवाद कर रहे हैं।

"देश आजाद जरूर है पर किसी को हमारे सिर पर खड़े होने की आजादी नहीं मिल गई है बाबा।" सिपाही ने कहा।

गजानन बाबू के व्यक्तित्व में कुछ ऐसा है जो सामने वाले को मजबूर करता है कि उन्हें यूँ ही सामान्य नागरिक न मान लिया जाए। हवलदार अभी तक तो कब का लाठी फटकार चुका होता पर हिम्मत ही नहीं पड़ रही उसकी।

"सिर पर? आपके सिर पर? भाइयो बताइए, क्या हम किसी के सिर पर खड़े हैं?" गजानन बाबू ने हँसकर आस-पास वालों से पूछा।

ऐसा पागल भी नहीं लग रहा स्साला! सोच-समझकर ही आगे बढ़ना होगा।

हवलदार ने बड़े प्यार से पूछा, "देश तो साठ साल से आजाद है जबकि आप यहाँ बस कुछ दिनों से ही खड़े हैं। सही-सही बताएँ, असली इरादा क्या है?"

"असली? असली इरादा तो बस इस देश को पूरा आजाद कराने का है।" गजानन बाबू की आँखों में अनोखी चमक है।

"क्यों? अभी देश आजाद नहीं है क्या?"

"नहीं। अभी नहीं है। अभी तो इसे पूरा आजाद होना है।"

"अच्छा! तो आप यहाँ खड़े होकर इसे पूरा आजाद करवाएँगे? नक्सली हो क्या? क्यों?"

"मैं राष्ट्रपति चुनाव में खड़ा हो रहा हूँ। राष्ट्रपति बनकर देश बदलूँगा। उसी का फॉर्म भरने के लिए यहाँ दिल्ली आया हूँ।"

"आऽऽप् राष्ट्रपति बनेंगे?" हवलदार हँसने लगा।

बातचीत रोचक हो गई थी। भीड़ न केवल पास आ गई थी, बढ़ भी गई थी।

"क्यों? हम राष्ट्रपति नहीं बन सकते क्या?" गजानन बाबू ने पूछा।

"इस उम्र में आप क्यों फालतू परेशान होते हैं?" हवलदार और भी ज़ोर से हँसने लगा।

"देश के लिए परेशान होना कभी फालतू नहीं होता श्रीमान्।"

"हम तो आपकी उम्र को कह रहे थे।"

"राष्ट्रपति की पोस्ट के लिए ओवर-एज का कोई नियम नहीं है। इतना नागरिकशास्त्र तो हम भी पढ़े हैं।" गजानन बाबू ने कहा।

"आपने फॉर्म भर लिया?" हवलदार ने पूछा।

"अभी नहीं भरा। जल्दी ही भरेंगे। उसी के लिए दिल्ली आए हैं।" गजानन बाबू ने बेपरवाही से कहा।

"तो फिर अपना फॉर्म भरें और यहाँ से जाएँ।"

"चले जाएँगे भाई।"

"चले जाएँगे नहीं; चले ही जाएँ।"

"अच्छा! और जो हम न जाएँ तो?"

"देखो, हम अभी तो शराफत से बता रहे हैं। अच्छा रहेगा कि तुम कल से यहाँ ना दिखो।"

"देश आजाद है..."

"... उतना आजाद भी नहीं है- आप खुद कह रहे थे ना? बस, तो मान लें कि देश आजाद ही नहीं है। आप तो अभी के अभी यहाँ से चुपचाप चले जाएँ। संसद के सामने यह सब नाटक नहीं चलेगा।"

"मैं तो सड़क के किनारे खड़ा हूँ। संसद के काम में इससे कौन-सी बाधा पहुँचेगी, क्या श्रीमान् मुझे कुछ समझाएँगे?" गजानन बाबू ने आस-पास खड़े हुए सबसे, और विशेष रूप से हवलदार साहब से पूछा।

लोग पास आ गए थे। वे अब उनको घेरकर खड़े हो गए थे।

"और मुझमें ऐसा क्या गलत है कि मैं ही यहाँ खड़ा नहीं रह सकता? क्या गैरकानूनी कर रहा हूँ मैं? ये सब भी तो खड़े हैं।" गजानन बाबू के तर्क इतने सटीक हैं कि पागलपन की झाँई भी नहीं है उन पर।

"अरे, जाने दें न हवलदार साहब। ... पड़े रहने दें इनको यहीं।" भीड़ में से एक बोला। बाकी के कुछ लोगों ने भी 'हाँ' 'हाँ' कहा। समझदार अलबत्ता चुप रहे।

"यह कौन बोला भाई? जरा ठीक से सामने आकर तो बोलो। क्या कहा? इनको यहीं पड़े रहने दें? ... ठीक है। आप कहते हैं तो ठीक है; यही सही! आपकी जमानत पर हम इनको यहीं रहने देते हैं। परन्तु हर आदमी आगे आकर अपना

नाम पता नोट करा दे, बस। ... जरा इन लोगों का नाम और मोबाइल नम्बर तो नोट कर लो बद्री । ... कहीं यह बुड्ढा कल यहाँ कोई कांड कर बैठे तो इन सबको थाने में हाजिर करवाना तुम्हारा काम रहेगा। ठीक?"

भीड़ तुरन्त पीछे खिसक गई। कुछ लोग तो वहाँ से खिसक ही लिए।

"ऐसा क्या कांड कर दूँगा मैं?" गजानन बाबू स्वतंत्रता सेनानी के तेवर में बोले।

"दादाजी, यह वीआईपी इलाका है। आप यहाँ ऐसे खड़े नहीं रह सकते।" सिपाही ने समझाने की कोशिश की।

"महात्मा गांधी के चेले हैं हम। अहिंसा में विश्वास करने वाले। हमसे किसी को कैसा खतरा?" गजानन बाबू ने पूछा।

"यार, आप फालतू की बहस न ही करें श्रीमान्। अपनी ये दरी-फरी लपेटो, अभी, फटाफट। निकलो तो यहाँ से। अभी के अभी।" हवलदार ने लाठी से इशारा करते हुए गजानन बाबू को आदेश दिया।

"मैं तो अब यहाँ से नहीं हटने वाला।" गजानन बाबू मऊरानीपुर के मंडी चौक पर तिरंगा लेकर खड़े हो गए। देखें, कौन उनको यहाँ से हटाता है?

"अबे, तू यहाँ से हटता है कि नहीं बुड्ढे?" हवलदार अपना आपा खोने लगा।

"नहीं। हम यहाँ से नहीं हटेंगे। हमें अब महात्मा गांधी का कौल है। ... झंडा फहराए बिना अब हम नहीं हटेंगे।" गजानन बाबू मऊरानीपुर और दिल्ली के बीच आवाजाही कर रहे हैं।

"तूने ये देखा है?" हवलदार ने हवा में डंडा उठाकर धमकाया।

भीड़ और पास आ गई थी।

"ये?... तुम्हारा डंडा!!" गजानन बाबू डंडा देखकर हँसने लगे। ज़ोर-ज़ोर से हँसते रहे।

यह बुड्ढा कहीं एकाध लाठी न खा जाए? फालतू ही पुलिस से पंगे ले रहा है। भीड़ चिन्तित है। परेशान भी।

"छोड़िए न हवलदार साहब।" किसी ने आग्रह किया।

हवलदार ने डंडा नीचे कर लिया। हवलदार का चेहरा अभी भी तमतमाया हुआ है। गुस्से से घूर रहा है गजानन बाबू को।

"तुम हँस रहे हो दद्दा? कुछ समझते भी हो कि नहीं? तुम पुलिस के डंडे को भी नहीं पहिचानते क्या?" सिपाही बीच में पड़ा।

"तुम लोगों ने कभी अंग्रेज पुलिस का डंडा देखा है?" गजानन बाबू ने सिपाही से ही पूछ लिया।

"मतलब?" वह उनका प्रश्न ही नहीं समझा।

"तुमने तो वह डंडा देखा तक नहीं, हमने तो खाया है। ...हम किसी पुलिस के डंडे से नहीं डरते।"

"आपने अंग्रेज पुलिस का डंडा खाया था न? पर कभी आजाद भारत की पुलिस का डंडा भी खाया है? एक बार भी खाया होता तो अभी जरूर डरते। हमारा डंडा अंग्रेजों के डंडे से भी तेज लगता है; आदमी की आत्मा तक तक नील पड़ जाते हैं।" हवलदार ने कहा।

"तो आप वो भी मारकर देख लें न ... हम तैयार हैं।" कहकर अपना कुरता उतार दिया गजानन बाबू ने। बनियान भी।

बुढ़ापे की ढीली चमड़ी का मढ़ा हुआ पसलियों का पिंजरा पुलिस के सामने था। कमर तनिक झुकी हुई पर छाती एकदम सामने की तरफ़, तनी हुई।

सिपाही की तरफ अपनी नंगी पीठ घुमाकर खड़े हो गए गजानन बाबू।

"चलिए! मारिए!" गजानन बाबू ने कहा।

हवलदार बुरी तरह घबरा गया।

भीड़ और भी बढ़ गई थी।

इसी बीच देर होती देख इंस्पेक्टर भी जीप से उतरकर वहाँ आ गया। वहाँ का यह दृश्य देखकर वह भी असमंजस में पड़ गया।

"क्या हो रहा है यह सब?" उसने हवलदार से पूछा। हवलदार को कोई उत्तर ही नहीं सूझा।

"दादाजी मान ही नहीं रहे।" वह बोला।

"क्यों बे?" इंस्पेक्टर ने गजानन बाबू से कहा जो वहाँ अर्धनग्न खड़े थे।

"यही भाषा है आपकी? आपको पता भी है कि आप भविष्य के राष्ट्रपति से बात कर रहे हैं?" गजानन बाबू घूमकर इंस्पेक्टर के सामने खड़े हो गए।

हवलदार ने इशारा किया कि ये, तब से बस, ऐसी ही बातें किए जा रहा है।

"भविष्य के न? अभी तो राष्ट्रपति नहीं बने हो न? तो हमसे अभी गार्ड ऑफ ऑनर क्यों माँग रहे हैं सरकार?" इंस्पेक्टर ने व्यंग्यपूर्वक पूछा। फिर वह सिपाही और हवलदार की तरफ पलटा।

"इसको अभी उठाकर जीप में तो पटको।"

सिपाही हिचकिचाया।

भीड़ बढ़ गई थी।

हवलदार भी हिचकते हुए रुका रहा।

"मिस्टर, मैं स्वतंत्रता संग्राम सेनानी हूँ। अपने अधिकार जानता हूँ। मेरे पास ताम्रपत्र है। ... दिखाऊँ आपको?" गजानन बाबू उतारे हुए कुरते की जेबें टटोलने लगे।

इंस्पेक्टर अब जाकर चौकन्ना हुआ।

मामला वैसा सीधा-सरल नहीं लग रहा। बुड्ढा कहीं ऐसा-वैसा कोई कलाकार शख़्स तो नहीं है कि कल को मीडिया में हल्ला हो जाए? भीड़ भी स्साली खूब हो गई है। इस बूढ़े से टैक्टफुली ही डील करना पड़ेगा। इंस्पेक्टर ने हाथ बढ़ाकर गजानन बाबू से ताम्रपत्र ले लिया। थोड़ी देर तक उसको खूब उलट-पलटकर देखते रहा। बूढ़ा स्वतंत्रता संग्राम सेनानी है, यह तो पक्का हो गया। यह शख़्स पागल है, यह भी पक्का है। यह शख़्स एक बेहद ज़िद्दी बूढ़ा है, यह बात भी सामने ही है। और ये तीनों चीजें एक ही आदमी में इकट्ठी हों तो यह बेहद ख़तरनाक है, यह सबसे पक्की बात है। इसे यहाँ से जबरन उठाना ख़तरनाक भी हो सकता है। भीड़ के रहते यहाँ कोई बड़ा तमाशा बन सकता है। इसे बहुत ही टैक्टफुली डील करना होगा।

"आपको राष्ट्रपति चुनाव का फॉर्म भरना है न?" इंस्पेक्टर अचानक बहुत विनम्र हो गया।

"उसी के लिए तो हम कोटरा से यहाँ आए हैं।" गजानन बाबू को उसकी विनम्रता अच्छी लगी।

"तो हम आपसे फॉर्म भरवाते हैं न।" उसने प्रस्ताव-सा रखते हुए कहा।

"आप भरवा देंगे?" गजानन बाबू बच्चों जैसे उत्साह से भर गए।

"बिलकुल। आप चलकर हमारी जीप में बैठें। हम आपको थाने ले जाकर पूरा फॉर्म भरवाते हैं न। ... बद्री, जरा दादाजी का सामान तो उठा लो बेटा। शाबास! आइए, चलिए हमारे साथ।" इंस्पेक्टर ने आदरपूर्वक कहा।

हवलदार देखता रह गया।

यार, अफ़सर अफ़सर ही होता है। ...वाह! काम को कैसा बढ़िया टैक्टफुली सलटाया है साहब ने।

"तुम वो फॉर्म तो निकलवा लेना बद्री। थाने पहुँचकर सबसे पहले दादाजी से फॉर्म ही भरवाना है।"

"जी सर।" सिपाही ने गजानन बाबू का थैला, दरी, और बैग समेटते हुए कहा।

अब तक रात उतर आई थी।

गजानन बाबू उनके साथ चल दिये। बहुत खुश हैं गजानन बाबू। देखा जाए तो सरकार

ऐसी बुरी भी नहीं। मौके पर लोगों की सहायता भी करती है। ... गजानन बाबू ने भीड़ को नमस्कार किया और पुलिस के साथ खुशी-खुशी चल पड़े। भीड़, उनको जाते हुए देखती रह गई। ... पता नहीं, आगे क्या होगा इस बूढ़े आदमी का? इसकी बहुत दुर्गत करेंगे ये स्साले।

जीप में ख़ुद जाकर बैठ गए हैं, गजानन बाबू।

बैठते-बैठते इंस्पेक्टर ने हवलदार को आँख मारी। ...देखा! ऐसे निबटते हैं जटिल स्थिति से। ... हवलदार ने भी उनके हाथ जोड़ दिये।

जीप स्टार्ट हुई। अँधेरा हो गया था। जीप की रोशनी सड़क की रोशनी में खो गई। सब तरफ़ बहुत-सी रोशनियाँ जल उठी हैं।

जीप चलने को हुई कि वह रेहड़ी वाला पीछे से भागता हुआ जीप के पास आया।

"बाबा की लाठी वहीं छूट गई थी सरजी।" उसने गजानन बाबू का बेंत सिपाही को पकड़ा दिया।

इंस्पेक्टर ने हँसकर कहा, "थाने में बेंतों की कोई कमी नहीं। बाबा को जिस साइज की लाठी चाहिए, वहाँ मिल जाएगी।"

रेहड़ी वाले ने हाथ जोड़ लिए। जीप चल पड़ी। रेहड़ी वाला जीप के पीछे-पीछे भागने लगा।

"अब क्या है बे?" सिपाही ने पूछा।

"भैया, बाबा को मारना मत।" रेहड़ी वाले ने पीछे-पीछे दौड़ते हुए कहा।

सिपाही ने चलती हुई जीप से झाँककर उसे घूर के देखा। सिपाही रेहड़ी वाले का कहा ठीक से सुन भी पाया कि नहीं, पता नहीं। थाने की जीप की गुर्राहट में रेहड़ी वाले की प्रार्थना डूब गई हो तो आश्चर्य की बात न कहाएगी।

जीप तेज़ी से आगे बढ़ गई। जीप अब संसद मार्ग पर फर्राटा लगा रही थी। पुलिस की जीप संसद भवन के सामने से गुज़री। जीप से झाँकते गजानन बाबू ने अचानक ही संसद पर लगे तिरंगे को देखा और जोर से नारा बुलंद किया, 'जयहिंद !' किसी ने भी उनके जयहिंद के जवाब में 'जयहिंद' नहीं कहा। उनका 'जयहिंद' भी पुलिस की जीप की गुर्राहट में डूब गया।

गजानन बाबू ने एक बार फिर, जोर से 'जयहिंद' कहकर संसद पर फहराते तिरंगे को

सलाम किया।

कोई जवाब में न भी बोले, फिर भी वे तो जयहिंद बोलेंगे ही।

"तनिक ठीक से बैठो बाबा। जयहिंद के चक्कर में कहीं नीचे न टपक जाना।" सिपाही ने कहा।

गजानन बाबू जीप में वापस टिक गए।

जीप रोशनी से जगमग सड़क पर भागती हुई जा रही है।

हर तरफ इतना उजाला है कि चकाचौंध में कुछ भी साफ़ नज़र नहीं आ रहा।

फिर भी जयहिंद

जीप धीमी हुई, मुड़ी और थाने के अहाते में घुसकर रुक गई।

"नीचे उतर आइए राष्ट्रपति जी।" इंस्पेक्टर ने जीप से उतरते हुए कहा।

"इसे अन्दर करो।" उसी साँस में इंस्पेक्टर ने सिपाही को धीरे से आदेश दिया।

गजानन बाबू नि:शंक जीप से उतरे।

***

अब वे हवालात की सीढियाँ चढ़ रहे थे।

***

ठीक तभी और उसी समय के आस-पास :

...बड़े साहब दफ़्तर के बरामदे में घुसे। बूढ़ा सामने था। वह पीछे खिसककर दीवार से सट गया। वह यहीं खड़ा है साहब की प्रतीक्षा में। वह सदियों से यहीं बैठा है, यहीं बैठा मिलेगा। वह साहब के चेम्बर के बाहर हाथ जोड़कर खड़ा है। शायद आज साहब उसे बुला ही लें / ... ठीक तभी बिस्मिलजी एक क्लाइंट के साथ अफ़सर के बंगले के सामने की सड़क पर खड़े हुए थे। बिस्मिलजी क्लाइंट को आश्वस्त कर रहे हैं कि वे अभी अन्दर जाकर भाभीजी को रिश्वत की रकम पकड़ाकर वापस लौटते हैं। वे अन्दर जाते-जाते भी क्लाइंट को आश्वस्त कर रहे हैं कि उसका काम ज़रूर हो जाएगा / ... ठीक तभी कोई सिपाही थानेदार साहब की मोटरसाइकिल धो रहा है

और तभी अन्दर से थानेदारनी बाई ने उसे आवाज़ दी है कि आकर किचन में पहले ये आलू तो छील दो ज़रा। कानून अभी दरोगाजी के घर पर रखे गमलों में पानी देगा और अगर काम वाली बाई न आई तो अभी उसे कपड़े भी धोने हैं /... ठीक तभी दरोगाजी किसी को निर्देश दे रहे हैं कि रकम दो हजार के नोटों में ही भिजवाई जाए / ... ठीक तभी पंडिज्जी ने मुन्ना मास्साब को इस शुभ समाचार के साथ प्रसाद का पेड़ा खिलाते हुए बधाई दी है कि जिला शिक्षाधिकारी एक लड़की के मामले में तुरन्त प्रभाव से सस्पेंड हो गए हैं। कालपी पुलिस अभी उनसे पूछताछ कर रही है। कल तक गिरफ्तारी भी हो जाने की जमावट हो चुकी है। जो अफ़सर भौत कानून दिखाता है, वो भूल जाता है कि कानून पीछे से उसको भी दबोच सकता है-पंडिज्जी अभी बड़े फिलॉस्फिकल होकर हँस रहे हैं। मुन्ना मास्साब उनके सामने हाथ जोड़कर उनकी तिकड़म प्रवीणता का अभिनंदन कर रहे हैं / ... ठीक तभी लक्ष्मी ने कोटा की कोचिंग का फॉर्म आनलाइन डाउनलोड किया है। उसने माँ को साफ़ बता दिया है कि कोटा तो वह जाएगी ही / ... ठीक तभी कुशवाहा उर्फ नन्हे मास्साब कोटरा के बाज़ार से गुज़रे हैं और सब लोग उन पर हँस रहे हैं। वे तिबारा पीटे गए हैं / ... ठीक तभी अपोली ने अपने मित्र को एकदम नया तमंचा दिखाकर पूछा है कि है ना जे एकदम विलायती चीज? मित्र ने भी तारीफ़ करते हुए कहा है कि यह तो ऐसा बंबास्टिक है कि इसे चलाने की भी आवश्यकता नहीं रहेगी, किसी को दिखा भर दोगे तो आदमी घबराकर गिर जाएगा / ... ठीक तभी एक आदमी ने बदहवास होकर अपने मित्र से पूछा है कि यदि मेरी फाइल न मिली तो मेरी पेंशन का क्या होगा? कहीं वह फँस तो न जाएगी? दोस्त ने एक शख़्स का नाम उसे बताया है और यह भी समझाया है कि वह कितने पैसे लेकर यह काम चुटकियों में करा सकता है /

ठीक तभी एक फाइल मिल गई है /ठीक तभी एक फाइल गुम गई है /

ठीक तभी कोई ज़मानत पर बाहर निकला /...

ठीक तभी कोई अदालत में बैठा-बैठा पथरा रहा है /... ठीक तभी एक काले कोट की परछाईं अदालत को ढक चुकी है और अभी आराम से अपने चेंबर में किसी क्लाइंट के साथ बैठी हुई अंदाज़ा लगा रही है कि इन तिलों में कितना तेल हो सकता है /... ठीक तभी चौहान साहब के कुँवर साहब ने किसी को धमकाया है कि एक मर्डर तो हम कर

ही चुके हैं, एक और करते हमें देर नहीं लगेगी /... ठीक तभी न्याय के घंटे की पुरानी रस्सी खींचने की कोशिश में रस्सी टूटकर हाथ में आ गई है और घंटा बेआवाज़ लटक गया है / ... ठीक तभी सरकारी भोंपू ने मुनादी की है कि स्थिति नियंत्रण में है और कहीं से किसी अप्रिय घटना का कोई समाचार नहीं है /... ठीक तभी गयासुद्दीन अपने बकरे के साथ दहशत में अकेले बैठे हुए हैं। कोई उन्हें अभी-अभी बहुत प्यार से समझाकर गया है कि हिंदू बकरियों को पथभ्रष्ट करने की कोशिश न की जाए तो बेहतर। उसी श्वास में उसने कब्रिस्तान की भूमि की राजनीति करने वालों का साथ न देने की चेतावनी भी दी है /...

ठीक तभी विकास कोटरा में खसरे की तरह फैल रहा है /... ठीक तभी एक ठेकेदार बड़े साहब के घर से दीवाली की भेंट देकर बाहर निकला है / ... ठीक तभी निर्माणाधीन पुल से टपका हुआ सीमेंट का बड़ा-सा टुकड़ा नीचे बैठे दो फटेहालों के पास आकर गिरा है। दोनों ने हनुमानजी को हवा में हाथ जोड़कर प्रणाम किया है कि आपने ही बचा लिया प्रभो; टुकड़ा हमारे सिर पर भी गिर सकता था / ... ठीक तभी कोटरा में नियुक्त डाक्टर साहब ने झाँसी में अपने घर पर रजिस्टर मँगवाकर पूरे महीने की उपस्थिति की चिड़िया बिठाई है / ... ठीक तभी संविधान की किताब के पेज ज़ोर से फड़फड़ाए हैं और फड़फड़ाते ही चले जा रहे हैं। पता ही नहीं चल पा रहा कि यह कौन-सी हवा किस तरफ़ से चल रही है

... ठीक तभी पटवारी की औरत ने माँग भरते हुए देखा कि उसके माथे पर चोट का नीला निशान अभी पूरी तरह गया नहीं है। वह उस पर गोरेपन की क्रीम मल रही है /...

ठीक तभी, मेंड़ से टिके नत्थू को न जाने कब झपकी लग गई और नींद में डोलते हुए सपने में उसने अपनी बकरी देखी। बकरी के दोनों बच्चे भी उसे दिखे। तीनों की आँखों से आँसू बह रहे थे। बकरी ने रोते हुए शायद नत्थू से यह पूछा भी है कि तुम तो मुझे इतना प्यार करते थे फिर मुझे बेच क्यों दिया? तो क्या बकरी और उसके बच्चे भी उसे याद करके उतने ही दुखी हैं जितना नत्थू स्वयं है? क्या बकरी के चेहरे पर नत्थू के प्रति कोई शिकायत भी थी? नत्थू से थी या कि इस ज़माने से? नत्थू को पता नहीं। जब तक वह बकरी के बच्चों को गोदी में उठाकर दुलार पाता, उसकी नींद खुल गई / ... और ठीक तभी, नत्थू के बेटे को झपकी लगी है। ग्राहक की प्रतीक्षा में वह ख़ाली रिक्शे की सीट से टिका बैठा था कि उसे नींद लग गई। एक सपना उसने भी देखा। उसने देखा कि सब तरफ़ बटमार हैं और सबकी उसकी गठरी पर नज़र है। पर उसकी गठरी तो लगभग ख़ाली है; फिर? उसने सपने में बन्दूक भी देखी, बीहड़ भी। उसने अपने हाथ में भी एक नेजा देखा और दरोगा की छाती में धँसा हुआ भी। उसने दरिया देखा और दरिया में तैरती उतराती हुई कागज की नाव भी। उसने देखा कि नाव मतपत्र के कागज से मिलते-जुलते कागज से बनी हुई

तभी संसद मार्ग की कोतवाली के लॉकअप से ज़ोर की आवाज़ आई है,

"जयहिंद",
"जयहिंद"।

बाहर रात गहरा गई है। फिर भी 'जयहिंद' चल रहा है।

***** समाप्त *****

sjeet